॥राम॥

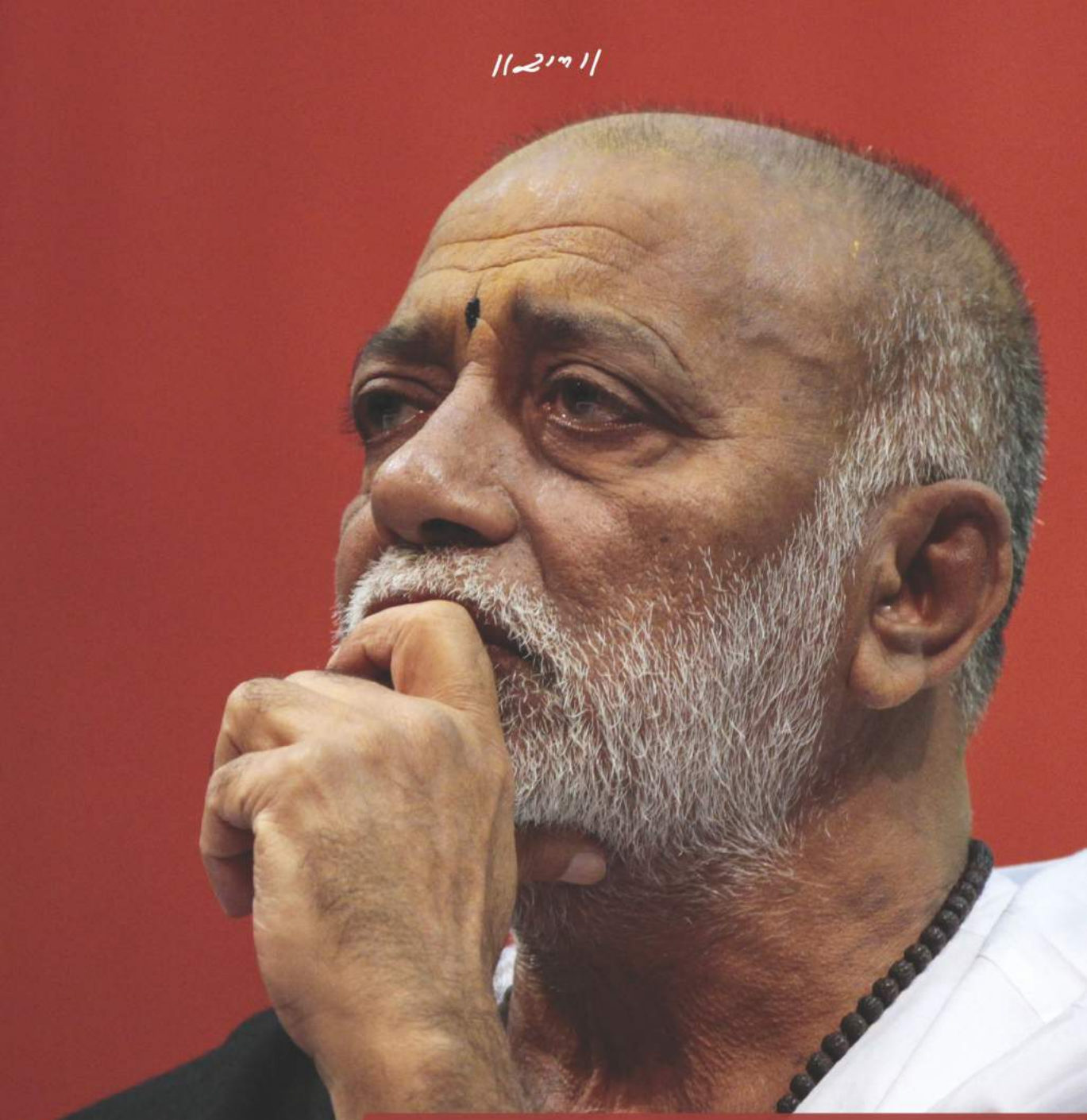

मानस-पंचाग्नि
पंचगिनी (महाराष्ट्र)

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

नूतन किसलय अनल समाना। देहि अगिनि जनि करहि निदाना।।
बिरह अगिनि तनु तूल समीरा। स्वास जरइ धन माहिं सरीरा।।

मानस-पंचाग्नि

|| **रामकथा** ||
मानस-पंचाग्नि

मोरारिबापू
पंचगिनी (महाराष्ट्र)
दिनांक : १०-६-२०१७ से १८-६-२०१७
कथा-क्रमांक : ८१३

प्रकाशन :
दिसम्बर, २०१९

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

रामकथा पुस्तक प्राप्ति
सम्पर्क-सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम-पियाला

मोरारिबापू ने पंचगिनी (महाराष्ट्र) में दिनांक १०-६-२०१७ से १८-६-२०१७ दरमियान 'मानस-पंचाग्नि' रामकथा का गान किया। ऐसी धारणा भी है कि बहुत साल पहले कोई ऋषि ने यहां पंचाग्नि की साधना की थी। और हो सकता है, पंचाग्नि का अपभ्रंश होकर पंचग्नि और उसमें से पंचगिनी हो गया हो; ऐसे विचार से बापू ने पंचगिनी की यह कथा पंचाग्नि पर केन्द्रित की।

हमारी साधना में पंचाग्नि की बहुत महिमा है क्योंकि अग्नि की महिमा ही हमारे यहां बहुत है और हमारे ऋग्वेद का पहला शब्द ही 'अग्नि' है, ऐसा कहते हुए बापू ने अग्नि तत्त्व का माहात्म्य किया। बापू ने 'रामचरितमानस' में अग्नि के लिए तुलसी द्वारा प्रयोजित पांच शब्द- अग्नि, अनल, पावक, अंगार और कृसानु का ज़िक्र किया और कहा कि 'मानस' का एक भी कांड ऐसा नहीं है जो अग्नि से मुक्त हो। प्रत्येक कांड में मेरे गोस्वामीजी ने अग्नि स्थापन किया है। एक अर्थ में मैं तलगाजरडी दृष्टि से देखूं तो 'मानस' का प्रारंभ अग्निबीज से होता है; समापन अग्निबीज से हो जाता है।

बापू ने गार्हपत्य, आह्वनीय, दक्षिणाग्नि, शिष्टाग्नि, सभ्याग्नि, विवेकाग्नि, आवसथ्य अग्नि, क्रोधाग्नि-असभ्य अग्नि जैसे शास्त्र में निर्दिष्ट भिन्न-भिन्न प्रकार के अग्नि का परिचय दिया और 'रामचरितमानस' में यह सभी प्रकार के अग्नि कहां-कहां दिखाई देता है उसका निर्देश भी किया। और बापू का कहना हुआ कि 'मानस' में योगाग्नि, वियोगाग्नि, यज्ञाग्नि, क्रोधाग्नि और विवेकाग्नि जैसे पांच अग्नि विशेष रूप में दिखता है। वैदिक परंपरा में मेघ, सूर्य, पृथ्वी, पुरुष और योषिता जैसे अग्नि के जो पांच रूप है वह 'मानस' के 'सुन्दरकांड' में कहां और कैसे प्रगट होता है उसका भी बापू ने सदृष्टांत उद्घाटन किया।

'मानस' में हुई विभिन्न पात्रों की परीक्षा-अग्निपरीक्षा के संदर्भ में बापू ने कहा कि 'मानस' में द्वादश परीक्षा है। 'बालकांड' में चार परीक्षा है, जिन में दो परीक्षा के केन्द्र में सती है, दो परीक्षा के केन्द्र में मेरा राघव है। 'अयोध्याकांड' में दो परीक्षा है, जो राम और दशरथ की परीक्षा है। 'अरण्यकांड' में राम और लक्ष्मण दोनों की चरित्र की कसौटी है। 'किष्किन्धाकांड' में मैत्री की एक परीक्षा है। 'सुन्दरकांड' मे हनुमानजी की परीक्षा हुई। 'लंकाकांड' में दो परीक्षा है और 'उत्तरकांड' में एक परीक्षा है, जहां लोमस-भुशुंडि के संवाद में प्रेमपरीक्षा का ज़िक्र आया। 'रामचरितमानस' में इतनी परीक्षाए हैं और ये सब अग्निपरीक्षा है। अग्निकसौटी के बिना रामराज्य नहीं हो सकता।

तपस्या की भूमि पंचगिनी में 'मानस-पंचाग्नि' के माध्यम से बापू की व्यासपीठ ने पंचाग्नि घूणी तपाई और अध्यात्म चर्चा एवम् जीवनोपयोगी चर्चा की।

– नीतिन वडगामा

'रामचरितमानस' की साधना पंचाग्नि साधना है

नूतन किसलय अनल समाना। देहि अगिनि जनि करहि निदाना।।
बिरह अगिनि तनु तूल समीरा। स्वास जरइ धन माहिं सरीरा।।

बाप! भगवद्कृपा से इस स्थान में रामकथा का योग बना। आप सभी को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम। बहुत समय खबर नहीं, कितने साल बीत गये! हमारे स्नेही किशोर भाई वालिया और उनका परिवार, बिठुर में सालों पहले कथा हुई थी। वाल्मीकि आश्रम माना जाता है बिठुर, वहां कथा हुई थी। उसके बाद सतत यह परिवार मुझे समय-समय पर स्मरण कराते रहे, बापू, पंचगिनी में कथा दो। किसी कारणवश योग नहीं बन पा रहा था। योग बना तो आखिरी पंद्रह-बीस दिन में ही योग बना! मुझे पता था कि यहां बारिश बहुत होती है। ऊंचाई पर है। बारिश की ऋतु भी है। ऐसी स्थिति में देश-काल का विचार किए बिना मैंने कहा कि यदि आप कर सको तो कर लो कथा दस तारीख से। और कहा कि बापू, हां, हम कर लेंगे। और कथा शुरू हुई! कभी-कभी मेरा नहीं, व्यासपीठ का निर्णय अति विचित्र होता है। लेकिन व्यासपीठ का निर्णय व्यासपीठ संभाले। हम सब तो केवल उसकी शरण में है। शरणागति का स्थान यदि बराबर न हो लेकिन हमारी शरणागति शत प्रतिशत सच्ची हो तो सफल होती है। जहां हम शरणागत होते हैं वो शायद बराबर न भी हो। कमजोर हो, कई कमियां हो, लेकिन शरणागतिवाले की शरणागति शत प्रतिशत सच्ची हो तो गलत स्थान में रखी शरणागति सच्ची होती है। और शत प्रतिशत शरणागत जहां हम होते हैं वो शुद्ध-बुद्ध हो लेकिन हमारी शरणागति गलत होती है तो असफल होता है। यहां तो व्यासपीठ की शरणागति शत प्रतिशत सत् और हमारी शरणागति इससे भी ज्यादा सत्। श्रीगुरु की कृपा से उस पर छोड़ दिया। किशोर भाई ने एक बार भी नहीं कहा है कि क्या होगा? कैसे होगा? प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। मैं कभी पंचगिनी आया नहीं; आपके कारण आया। महाबलेश्वर गया था कभी। कथा लेकर नहीं। फिर एक बार मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

कुछ दिनों से मन में चल रहा था कि पंचगिनी में मैं कौन-सा प्रसंग उठाऊं? किस विषय पर हमारी आध्यात्मिक चर्चा करें? कुछ दिन पहले मन में मनोरथ चल रहा था कि यह किशोर भाई का मनोरथ है तो 'मानस-मनोरथ' करूं लेकिन मुझे खबर दी नीलेश ने कि 'मानस-मनोरथ' हो गई है। एटलान्टा में यह कथा हो गई, ऐसा मुझे बताया। एक बार तो सोचा कि दुबारा करे। वो गंगा तो बह गई। फिर मन में सोचा। 'भगवद्गोमंडल' शब्दकोश के आधार पर पंचगिनी का पहला अर्थ तो यह होता है कि यहां राजा-रजवाडे के लोग पढ़ने के लिए आते थे। राजकुमार लोग, बड़े-बड़े लोग पढ़ने आते थे। और उसकी एक प्रतिष्ठा रहती थी। 'भगवद्गोमंडल' में एक अर्थ यह भी है। पंचगिनी भी कहते हैं, पंचगनी भी कहते हैं और मराठी में पंचगाणी भी कहते हैं। लेकिन एक ऐसी धारणा यह भी है कि बहुत साल पहले कोई ऋषि ने यहां पंचाग्नि धूणी भी धखी थी। पंचाग्नि की साधना की थी। और हो सकता है पंचाग्नि का अपभ्रंश चला आता हो। पंचाग्नि, पंच+अग्नि, फिर पंचग्नि हो गया हो। फिर मन में हुआ, पंचगिनी में पंचाग्नि की कथा करें। यह 'मानस-पंचाग्नि' है।

पंचाग्नि की हमारी साधना में बहुत महिमा है क्योंकि अग्नि की महिमा ही हमारे यहां बहुत है। सनातन पुरातन कोई सालों की गणना में हमें नहीं जाना है। लेकिन जब पहला ऋग्वेद ऊतरा तो पहला शब्द 'अग्नि' से ही शुरू किया था, 'अग्नि मीळे पुरोहितं...।' पूरे वेद का प्रारंभ अग्नि से हुआ। फिर पूरी अग्नि की साधना है। जो अग्नि के

साधक है। हमारे यहां एक अग्नि अखाडा भी है। आपको पता होगा ही कि हमारे यहां वाणी की साधना को भी अग्नि की साधना मानी गई है। शास्त्रों में शिव का एक नाम अग्नि है। अग्नि का उपासक मूलत: शिव उपासक है हमारी साधना पद्धति में।

तो 'मानस-पंचाग्नि' पर नव दिन की हमारी कथा तपस्या हो जाएगी। हम कह सकेंगे कि हमने पंचगिनी में पंचाग्नि धूणी तपाई थी। नव दिन की यह साधना है पंचाग्नि। आपको पता होगा कि हमारे यहां पांच अग्नि की महिमा है। तीन, पांच, सात उसकी ज्वालाएं, उनकी शिखाएं, उसकी उत्पत्ति, उसका पोषण; बहुत बृहद शास्त्र है यह। 'रामचरितमानस' में देखोगे तो तुलसी ने पांच शब्द ही निश्चित किए हैं। यही है पंचाग्नि। एक तो है अगिनी। दूसरा अनल। तीसरा पावक। चौथा अंगार और पांच, कृसानु। यह पांच ही है। यह 'मानस' की पंचाग्नि है। 'सुन्दरकांड' में पांचों है।

निसि न अनल मिल सुनु सुकुमारी।

त्रिजटा 'अनल' शब्द का प्रयोग करती है। अनल मानी एक अग्नि। इतना कहकर वो चली गई-

कह सीता बिधि भा प्रतिकूला।
मिलिहि न पावक मिटिहि न सूला।।
नूतन किसलय अनल समाना।
देहि अगिनि जनि करहि निदाना।।
देखिअत प्रगट गगन अंगारा।
अवनि न आवत एकउ तारा।।

निसिचर निकर पतंग सम रघुबर बान कृसानु।

मेरे हनुमान ने कहा। तो पांच शब्द अग्नि के लिए तुलसी ने निश्चित किये हैं। 'मानस' जैसा कोई शास्त्र नहीं दिखता है यार! 'सार अंस संमत सबही की। आरति श्रीरामायनजी की।'

आप यह ध्यान में रखे। पंचाग्नि यह है- अगिनी, अनल, पावक, अंगार, कृसानु। यह पांचों 'सुन्दरकांड' में है। 'मानस' का एक भी कांड ऐसा नहीं जो अग्नि से मुक्त हो। प्रत्येक कांड में मेरे गोस्वामीजी ने अग्निस्थापन किया है। एक अर्थ में मैं तलगाजरडी दृष्टि से देखूं तो 'मानस' का प्रारंभ अग्नि बीज से होता है। समापन अग्नि बीज में हो जाता है। अग्नि, अग्नि, अग्नि, अग्नि। शास्त्र पंचांग में एक अग्नि का नाम है; पहले नाम दे दूं फिर उसकी चर्चा करेंगे। जैसे स्मृति में आएगा मैं आपसे बातें करूंगा। एक अग्नि का नाम है गार्हपत्य। दो शब्द उसके हमारे घर में जो अग्नि होता है फिर वो चुल्हे में भी हो। सामवेदी यज्ञ करनेवाले। पूरेपूरी भगवान वल्लभाचार्यजी की परंपरा में सोमयज्ञ की बहुत महिमा है। आप साक्षी भी है; आपको पता है, मेरे मन में था कि एक बार तलगाजरडा में सोमयज्ञ किया जाए। महाप्रभुजी की परंपरा का यज्ञ है। महाराष्ट्र से ब्राह्मण आये जो निरंतर अग्निहोत्री होते हैं। आहवनीय अग्नि के दो अर्थ मेरी समझ में। एक तो हमारे घर में जो चुल्हे में अग्नि होता है वो भले ही रसोई के समय पर हम उसको प्रगट करते हैं लेकिन है तो गृहग्नि। ऐसे ब्राह्मण जो निरंतर सोमग्नि के उपासक है।

यह बड़ा रहस्यमय वाक्य उठाया है तुलसीदासजी ने 'रामायण' में। वशिष्ठजी भी जहां जाते थे, अग्नि उनके साथ-साथ जाता था। वशिष्ठजी मूलत: अग्निहोत्री महापुरुष रहे। इसलिए अग्निहोत्री होने के कारण वशिष्ठजी ने अग्नि को राम का बाप बनाया। 'प्रगटे अगिनि चरू कर लीन्हें।' राम का असली बाप अग्नि है आधिदैविक जगत में; सांसारिक जगत में दशरथ। राम पावक सुत है और जानकी भी अग्नि की बेटी है। यह तो अति विचित्र लगेगा। आप कहेंगे, सीता तो पृथ्वी की पुत्री है। आपको पूर्व इतिहास का पता होगा। राक्षसों ने बहुत रक्त उछाल लिया। महात्माओं का रक्त का घड़ा जो भरा गया था उसमें महात्माओं का क्रोध भरा हुआ था। और इसी घड़े को जब हल जोता उसमें से जानकी निकली। इसलिए तत्त्वत: जानकी भी अग्नि की पुत्री है। ऋषियों के रोषाग्नि से प्रगट हुई एक अर्थ में। और एक

अर्थ में यज्ञ प्रसाद से राघव प्रगट हुए। गार्हपत्य; आहवनीय अग्नि। जैसे सुबह-शाम हम अग्नि करते हैं; जैसे छोटा-सा कोई यज्ञ कर लें। उसमें आहुतियां डालें। विशेष मूड हुआ, यज्ञ कर लिया। कभी हवनाष्टि हो तो यज्ञ कर लिया। जब किसी खास समय पर हम यज्ञ करते हैं। आहवनीय अग्नि जिसमें अग्नि का आह्वान करना है।

एक अग्नि का नाम है दक्षिणाग्नि। वो है योगअग्नि। राम की दक्षिण यात्रा में आप जाओ। चित्रकूट से राम दक्षिण की ओर मुड़े यह जो दक्षिणाग्नि का पहला स्पर्श होता है 'मानस' में 'मानस' के पाठकों को। सरभंग को अग्नि में प्रवेश करना यह दक्षिणाग्नि है। फिर शबरी; फिर हनुमान और सुग्रीव और राम मैत्री उसमें पावक साक्षी। यह सब दक्षिणाग्नि है। 'मानस' अद्‌भुत शास्त्र है! कहां से कहां उठा जाएगा खबर नहीं!

एक अग्नि है शिष्टाग्नि। सभ्य, विवेकी अग्नि जिसको कहते हैं। मैं तो यज्ञ के पास बैठा रहता हूं। मुझे अग्नि का अनुभव है इसलिए मुझे अग्नि पर थोड़ा बोलने का अनुभव भी है। अग्नि मुस्कुराता है। भांगती राते तमारी साथे वातो करे। भाषा उसकी होती है। शुरूआत में कल्पना होती है। धीरे-धीरे वास्तविकता बन जाती है। हम जो भी बोले वो अग्नितत्त्व है। वाणी अग्नितत्त्व है। ध्यान देना, भूलना मत। प्रत्येक व्यक्ति बोले उस वाणी में अग्नि होती है तो अग्नि की वाणी नहीं हो सकती क्या? वाणी में यदि अग्नि है तो अग्नि की वाणी नहीं हो सकती क्या? हम सुन नहीं पाते यह बात ओर है। अग्नि मुस्कुराएगी। और अग्नि मुस्कुराएगी तब उसका कलर बदल जाता है। अग्नि के सात रंग है। जो-जो महापुरुष चौबीस घंटे अग्नि के पास बैठते हैं उसको अनुभव होता है। सात रंग दिखते हैं। कलरफुल है अग्नि।

सभ्याग्नि जिसको कहते हैं वो है विवेक अग्नि। पुनि विवेक अग्नि जो तुलसी स्थापित करते हैं 'रामचरितमानस' में वो है सभ्याग्नि। यह सभ्य अग्नि है। दक्षिण अग्नि यह योग अग्नि है। घर में हम जो उपयोग करते हैं वो हमारा घरेलु अग्नि है। अथवा अग्निहोत्री जो चौबीस घंटे अग्नि रखते हैं। और आवसथ्य अग्नि है। एक अग्नि है क्रोधाग्नि। असभ्य अग्नि कहते हैं, विवेकाग्नि नहीं। 'रामचरितमानस' में सभी अग्नि है साहब!

रामकथा कलि पंनग भरनी।
पुनि बिबेक पावक कहुं अरनी।

तो विवेक अगनि। विरह अगनि-

बिरह अगिनि तनु तूल समीरा।
स्वास जरइ छन माहिं सरीरा।।

विवेक अग्नि को आप ज्ञानाग्नि भी कह सकते हैं, मुझे कोई आपत्ति नहीं। जैसे 'गीता' ने 'ज्ञानाग्नि' शब्दप्रयोग किया। विवेक-ज्ञान पर्याय है एक अर्थ में।

सुनु गिरिजा क्रोधानल जासु।

असभ्य अग्नि। तो विरहाग्नि, विवेकाग्नि, क्रोधाग्नि और यज्ञाग्नि।

भगति सहित मुनि आहुति दीन्हें।
प्रगटे अगिनि चरू कर लीन्हे।।
अस कहि जोग अगिनि तनु जारा।
भयउ अकल मख हाहाकारा।।

यह 'मानस' के अग्नि के नाम है। वो शास्त्र के अग्नि के नाम है। अग्नि के पांच नाम जो पावक, कृसानु, अनल, अगिनी, अंगार यह बिलग-बिलग उसके पर्याय नाम है। लेकिन पांच आप याद रखे। 'मानस' में एक योगाग्नि, एक वियोगाग्नि, तीसरा यज्ञ का अग्नि, चौथा क्रोधाग्नि, पांचवां विवेकाग्नि।

पांच अग्नि कैसे प्रज्वलित होते हैं? शास्त्रों में तो तीन बातें बताई अग्नि प्रज्वलित करने के लिए। एक आवेश, एक प्रवेश, एक स्वागत। शास्त्र तो कहता है, अग्नि का प्रवेश आवेश में होता है। आवेश मानी घर्षण, संघर्ष। जैसे परशुराम में आवेश अग्नि आता है। जैसे इसमें आवेश आ जाए और हम कुछ न कुछ बोलने लगते हैं। आवेशाग्नि है। एक अग्नि का प्रवेश अग्नि माना गया है कि उसमें प्रवेश करना पड़ता है अग्नि के थोड़े मंत्रों के द्वारा। एक अग्नि जिसमें आह्वान किया जाता है अग्नि का। तो

यह पंचाग्नि। पंचाग्नि पांच प्रकार की तपस्या का नाम है।

अच्छा सब्जेक्ट मुझे आनंद के लिए मिल गया है। हो सकता है आपको भी आनंद आए। लेकिन मेरी कथा का यह अग्नि है वो आपको रोशनी देगा। दझाडशे नहीं, भरोसो राखजो। कुछ रोशनी मिले इस भीगी मौसम में। और पंचतत्त्व में अग्नितत्त्व को ही प्रधान माना गया है। साहब! अग्नि से ही पृथ्वी है। अब इसका वैज्ञानिक संशोधन भी करेंगे। मूल में सब जगह अग्नि है। मैं आपसे पूछुं, पृथ्वी कहां से प्रगट हुई? सूर्य से। सूर्य क्या है? पृथ्वीतत्त्व अग्नि का बच्चा है। जल कहां से प्रगट हुआ? H_2O क्या है? अथवा तो सूर्य की गरमी सागर पर फिर भाप फिर बादल बने। तो जल, पृथ्वी के मूलतत्त्व में अग्नि है। जो सौरमंडल का मूल अग्नि है वो आकाश में ही रहता है। आकाश के बिना उनका कोई चारा नहीं। अग्नि बहुत विशाल तत्त्व है। एक अंगार पूरा विश्व जला सकता है। जैसे एक बीज पृथ्वी को हरी-भरी कर सकती है वैसे एक अंगार पूरी पृथ्वी को खत्म कर सकता है। व्यापकता वो ही उसका आसमां है। तो तुलसीदासजी लिख गये-

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

भूख को भी अग्नि कहते हैं। आध्यात्मिक भूख जगे। क्षुधाग्नि जिसको कहते हैं। हमारी और आपकी अध्यात्म यात्रा में कोई नई भूख जगे। तो यह तपस्या की भूमि पंचगिनी में हम बैठे हैं पंचाग्नि ताप में। मौसम यद्यपि ठंडा है।

नव दिवसीय रामकथा जो प्रेमयज्ञ है उसका मूल विषय 'मानस-पंचाग्नि' रहेगा। उसकी हम संवादी चर्चा करेंगे। परमात्मा करे हमारा नवदिवसीय पंचाग्नि तप हो और इस तप से हमारा जीवन प्रकाशमय हो इसलिए आंतरिक प्रेरणा से मैंने यह सब्जेक्ट चुना है। आपको ख्याल है, हमारे यहां अठारह पुराण में 'अग्नि पुराण' है। मुझे तो ऐसे प्रसंग पर पूरा ग्रंथ का अवलोकन का अवसर मिल जाता है। कहीं ना कहीं दर्शन करने का अवसर प्राप्त होता है। पूरी आर्य प्रजा अग्निपूजक रही। आर्य छोड़ो, अनार्य को लो; जो जंगल में रहते थे उन लोगों ने भी अग्नि को ही अपना देवता माना था। प्राचीन काल में किसीको माना है तो अग्नि ही है। पानी तो था इन लोगों के लिए सहज था। हवा भी थी। जमीन थी। आसमान था। लेकिन कच्चा खाते थे। कुछ ना कुछ फल खाते थे।

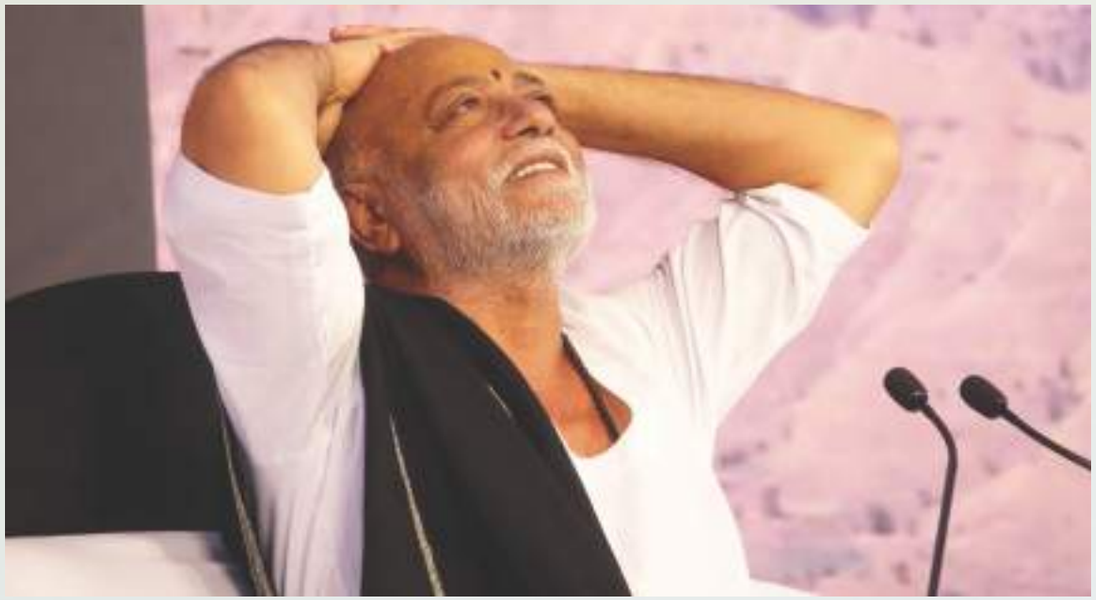

अचानक एक दिन कुछ कचड़ा तो अग्नि प्रगट हुआ तो वो अग्नि को देवता मानने लगे। अग्नि बहुत आदि-अनादि देवता है। इसलिए हमारे यहां अग्नि पुराण, अग्नि देवता, अग्नि पूजा है। यह दीप जलाते हैं, आरती करते हैं, तत्त्वत: क्या है? अग्नि की ही पूजा है। इसलिए हम 'श्रीमन् नारायण नारायण' बोलते-बोलते 'अग्नि नारायण नारायण' कहने लगे। अग्नि को स्वयं नारायण समझा है। तो मेरे भाई-बहन, बड़ी व्यापक महिमा है अग्नि की।

एक बात याद रखना, अग्नि के पास जिस आदमी को रहना होता है उसको जागना सहज हो जाता है। एक तो सावचेती भी है, कहीं अंगार न लग जाए। लेकिन अग्नि जागृति का प्रतीक है। आदमी सावधान रहता है। तो एक अर्थ में 'रामचरितमानस' की साधना पंचाग्नि साधना है। यह कोई गुरु थोड़ी फूंक मारे और राख उड़ा दे फिर वो ही प्रकाश। जिस शास्त्र के आधार पर हम इतनी अध्यात्म चर्चा अथवा जीवनोपयोगी चर्चा करते हैं इतने सालों से कोई न कोई टोपिक लेकर लेकिन मूल में तो यह 'मानस' का ही धूना है। ऐसा 'रामचरितमानस' विवेकरूपी अग्नि को प्रगट करने के लिए अरणि मंथन है।

रामकथा कलि पंनग भरनी।
पुनि बिबेक पावक कहुं अरनी।।

रामकथा का परिचय देते हुए तुलसी कहते हैं, 'मानस' की कथा विवेकरूपी अग्नि को प्रगट करने के लिए अरणि मंथन है; इसमें से विवेक को प्रगट करने के लिए अरणि मंथन है। विवेक को प्रगट करनेवाली यह रामकथा। और बहुत जरूरी है विवेक हमारे जीवन में। दोनों प्रकार के विवेक की जीवन में बहुत जरूरत है। लौकिक विवेक और अलौकिक विवेक। लेकिन विवेक की जरूरत है। परस्पर व्यवहार में हम संबंधों से जुड़े हुए हैं उसमें विवेक की जरूरत है। कैसे जीए, कैसे बोले, कैसे खाए, यह सब विवेक रामकथा सिखाती है। और यह लौकिक विवेक से अलौकिक विवेक तक जाता है। कई लोगों में जन्मजात अलौकिक विवेक होता है।

मातु बिबेक अलौकिक तोरें।
कबहुँ न मिटिहि अनुग्रह मोरें।।

भगवान ने सर्टिफिकेट दिया है, हे माता कौशल्या! तू माता होनेवाली है लेकिन पूर्व में तेरा विवेक अलौकिक था। दोनों विवेक जरूरी है। कई लोग कहते हैं, हम अलौकिक विवेक में मानते हैं, हमारा लौकिक विवेक छूट गया है। हमारा संसार से कोई लेना-देना नहीं। लेना-देना कैसे नहीं यार! लौकिक व्यवहार रखना पड़ता है। मेरे तुलसीदासजी ने साधु की परिभाषा करते हुए लिखा है-

सील गहनि सब की सहनि, कहनि हीय मुख राम।
तुलसी रहिए एहि रहनि, संत जनन को काम।।

पांच प्रकार के साधु होते है। मैंने केदार में तीन प्रकार के साधु की बात की थी। एक तो जो घर छोड़ दे वो साधु। जैसे विभीषण। 'साधु अवग्या तुरत भवानी।' लेकिन घर हम कब छोड़ते हैं? कोई लात मारे तब। विभीषण लात का साधु है। लात मारी रावण ने। गृहत्याग। सब छोड़ दिया। एक साधु जो खाली साधु होते हैं। इसका दृष्टांत विभीषण। एक साधु होता है सुठि साधु। इसकी व्याख्या केदार में की थी। सुठि साधु मानी सुंदर, मनभावन साधु; जिसके साथ बोलना अच्छा लगे, जिसके साथ मिलना अच्छा लगे, जिसके साथ खाना अच्छा लगे। मैंने गुजराती किया, गमतो साधु। सुठि का मतलब है मनभावन। तुलसी राम के लिए 'सुठि साधु' विशेषण लगाते हैं, जिसका स्वभाव दुश्मन को भी अच्छा लगता है।

जासु सुभाउ अरिहि अनुकूला।
सो किमि करिहि मातु प्रतिकूला।।
है नीको मेरो देवता कोसलपति राम।
सुभग सरोरुह लोचन, सुठि सुंदर स्याम।
नीको, प्यारो, सुठि सुंदर।
बलिपूजा चाहत नहीं, चाहत एक प्रीति।

तुलसी को किसीने कहा, आप कहते हो, मेरो राम सुंदर, प्यारो लेकिन बताओ तो सही, इसका रिज़न क्या है?

कभी तुम्हें यह कहे नहीं कि तुम बली चढ़ाओ, तुम त्याग करो। कुछ नहीं कहता राम। बलिपूजा का एक अर्थ बलिदान देना, कुरबान होना, बलि चढ़ाना अथवा तो तगड़ी पूजा उसको भी बलिपूजा कहते हैं। राम क्यों प्यारा है? कृष्ण क्यों प्यारा है? मेरा महादेव क्यों प्यारा है? क्योंकि 'बलिपूजा चाहत नहीं।' तेरा थोड़ा-सा प्यार चाहता है। तू थोड़ा-सा प्यार कर प्रभु से। जीव बेचारा कहां पूरा प्यार कर सकेगा प्रभु से? तू उसकी आंख से प्यार कर। तू उसकी बोली, उसके हाथ से प्यार कर। यह सब मधुर है। 'मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।' तू उसे प्यार कर। वेणीभाई पुरोहित ने गुजराती में लिखा-

तारी आंखनो अफीणी तारा बोलनो बंधाणी,
तारा रूपनी पूनमनो पागल एकलो।

केवल एक बार स्मरण कर लो। बहुत भला मानेगा। जिसकी प्रत्येक रीत पवित्र है।

सुमिरत ही मानै भलो, पावन सब रीति।

ऐसा कौन है? तुलसी कहे, मेरा देवता राम है जो सुठी है, जो मनभावन है।

नव कंज लोचन कंज मुखकर कंज पद कंजारुणम्।

श्रीराम चन्द्र कृपालु भज मन हरन भव भय दारुणम्।

राम सुठि साधु, गमतो साधु। साधु लात से होता है और सूफी साधु किसीकी बात से हो जाता है। एक बात से उसको सुठिता लगी। कैकेई माँ ने एक बात कही, 'चौदह बरिस रामु बनबासी।' बस, एक बात। एक माँ ने कह दिया। कभी-कभी किसीके वचन सुनकर साधुता आ जाती है; उसीको कहते हैं सुठि साधु। माँ के बचन से जो साधु हो जाए वो सुठि साधु। गुरु के बचन से जो साधु हो जाए वो सुठि साधु। बैराग के बचन से जो साधु हो जाए वो सुठि साधु। सब प्रकार से साधु वो हो जाता है जिसको आघात लगा हो। मेरे कारण मेरा राम वनवास गया! जिसको ऐसी पीड़ लगी वो होता है साधु। कोई लात से, कोई बात से, कोई आघात से। तलगाजरडा ने दो ओर साधु जोड़े। किसी भी जात से साधु हुआ जाता है। साधुता ऐसा सिंधु है जिसमें कोई भी जात साधु है। साधुता किसीने पेटन्ट नहीं की है। सोचते-सोचते अनुभव करते-करते पांचवीं साधुता दिखाई दी वो है कोई-कोई जन्मजात साधु। उसी साधु की तुलसी चर्चा करते हैं 'सील गहनि।' जहां से विवेक मिले, शील मिले; यह आदमी में इतना विवेक है मैं वो धारण कर लूं। यह आदमी ऐसे जीता है, मैं ऐसे जीऊं। आप और हम शील ग्रहण करें। गंगासती को पानबाई ने पूछा कि साधु को नमन करे, शीलवान साधु को बार-बार नमन करे। शीलवान साधु हो तो उसको बार-बार नमन करो। कौन शीलवंत?

जेना बदले नहीं वर्तमान....

फिर एक नौबत आती है। तुम जहां देखो वहां से शील लो, जन्मजात शील हो फिर एक मुश्केली आती है। तुलसी कहते हैं, सबकी सहनी। जब शील ग्रहण करोगे तब तुम्हें पूरी दुनिया को सहन करना पड़ेगा; सबकी सुननी पड़ेगी। इसलिए कबीर साहब कहते हैं, सबकी सुन लो। प्रतिक्रिया मत दो। सबुरी रखो।

सील गहनि सबकी सहनि....

सबको सहन करना पड़ता है। तुम लाख समझाओ, सामनेवाला नहीं समझेगा। तुलसी कहे, सावधान! केवल मुख से ही राम नहीं, हृदय से भी राम। मुख से बोलेंगे तो सामनेवाला सचेत होगा। भीतर से बोलोगे तो तुम्हारी चेतना ओर पुष्ट होगी। दोनों शब्द जुड़े। साधु का यही काम है। तो तुलसी कहते हैं, ऐसा साधु जो लौकिक विवेक निभाता है और अलौकिक विवेक की यात्रा करता है। कहने का मेरा मतलब विवेक की अग्नि पैदा करने का रामकथा नौ दिन का अरणि मंथन है। क्या है रामकथा? वार्ता थोड़ी है? यस, लीलामय कथा है; प्रभु की रसमय कथा है; नि:शंक है। यह तो विवेक प्रगट करने का अरणि मंथन है।

सात सोपान में गोस्वामीजी ने इस 'रामचरितमानस' को ऊतारा। मूल में तो आदि कवि वाल्मीकि। फिर उसके बाद तुलसीजी। कलियुग में हमारे जैसे जीवों का उद्धार करने के लिए तुलसी ने ऊतारा। वाल्मीकिजी ही तुलसीदास है, ऐसी श्रद्धाजगत की मान्यता है। तुलसी ने 'रामचरितमानस' की रचना की। अनादि काल में भगवान शिव ने रचना की। सात सोपान बताये। भगतबापू ने एक कविता लिखी-

अमे निसरणी बनीने दुनियामां ऊभा रे....
चडनारा कोई नो मळ्या रे....

तो बाप! बाल, अयोध्या, अरण्य, किष्किन्धा, सुन्दर, लंका और उत्तर; सात सोपान। प्रथम सात मंत्र लिखें-

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।
भवानीशंङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यंति सिद्धा: स्वान्त:स्थमीश्वरम् ।।

सात मंत्रों में मंगलाचरण किया फिर लौकिक बोली में शास्त्र को ऊतारा। पांच सोरठा; फिर गणेशजी की स्तुति की, फिर सूर्य की स्तुति की, विष्णु की स्तुति की, फिर भवानी और शंकर की स्तुति की। उसके बाद 'बंदउ गुरु पद।' गुरु के पांच रूप पहले बता दिये। यह पंचरूपा गुरु। उसके बाद वंदना। गुरु का एक अर्थ गणेश है, विवेकरूपी गुरु। फिर सूर्य हनुमानजी का गुरु है वो तो गुरु है ही। गुरु का दूसरा रूप है सूर्य। गुरु का तीसरा रूप विष्णु है। 'गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु।' विष्णु को गुरु कहते हैं। चौथा महेश्वर शंकर गुरु है। तो पांचों रूप में ऐसा मेरा जो गुरु है-

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

तो सबसे पहले 'मानस' में गुरु की वंदना की। प्रथम सोपान का प्रथम प्रकरण। कुछ पंक्ति गाई जाए-

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।
अमिअ मूरिमय चूरन चारु।
समन सकल भव रुज परिवारु।।

गोस्वामीजी ने गुरुचरण, गुरुचरण नखज्योति, गुरु चरणरज उसको अंजन बनाके 'रामचरितमानस' का प्रारंभ किया और सबसे पहले ब्राह्मणों की वंदना की। पृथ्वी के देवताओं की वंदना की। फिर समग्र संसार की वंदना करते हुए तुलसी ने कह दिया-

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

ऐसे पूरे जगत को सीता राममय समझकर गोस्वामीजी ने प्रणाम किया। सबकी वंदना बीच में आ गई। महाराज दशरथजी, कौशल्याजी, जनकजी, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न सबकी वंदना करते हुए कहते हैं-

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

आप सब जानते हैं, व्यासपीठ का यही क्रम चला है कि पहले दिन की कथा हनुमानजी की वंदना तक ली जाए। आइए, हम सब हनुमानजी का स्मरण करें 'विनयपत्रिका' से-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन। सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी। हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।
बंदौ राम-लखन-बैदेही। जे तुलसी के परम सनेही।।

तो श्रीहनुमानजी की वंदना की गोस्वामीजी ने। उसके बाद सखाओं की वंदना है क्रम में। उसके बाद सीता-रामजी की वंदना करते हैं। उसके बाद रामनाम महाराज की वंदना करते हैं। उसकी चर्चा हम कल करेंगे।

एक बात याद रखना, अग्नि के पास जिस आदमी को रहना होता है उसको जागना सहज हो जाता है। एक तो सावचेती भी है, कहीं अंगार न लग जाए। लेकिन अग्नि जागृति का प्रतीक है। आदमी सावधान रहता है। तो एक अर्थ में 'रामचरितमानस' की साधना पंचाग्नि साधना है। यह कोई गुरु थोड़ी फूंक मारे और राख उड़ा दे फिर वो ही प्रकाश। जिस शास्त्र के आधार पर हम इतनी अध्यात्म चर्चा अथवा जीवनोपयोगी चर्चा करते हैं इतने सालों से कोई न कोई टोपिक लेकर लेकिन मूल में तो यह 'मानस' का ही धूना है। ऐसा 'रामचरितमानस' विवेकरूपी अग्नि को प्रगट करने के लिए अरणि मंथन है।

मानस–पंचाग्नि – २

गार्गी ये विद्वत्ता का प्रमाण है, मार्गी ये विश्वास का मार्ग है

कुछ जिज्ञासाएं है। एक बहन ने पूछा है, 'बापू, पंचाग्नि अनुष्ठान का विधि-विधान क्या है? हम महिला ये कर सकते हैं?' पंचाग्नि तपना एक तपस्या है। उसे साधुकडी बोली में पंचतपा भी कहते हैं। उसका विधान ऐसा है कि खुली जगह में तीन फूट के वर्तुलाकार में जहां तक संभव हो, गाय के गोबर को चार जगह जलाया जाता है और पांचवीं अग्नि होती है सूर्य के ताप में; उसे कहते हैं पंचाग्नि, पंचतपा। कल्पवास करनेवाले कुंभ मेले में भरद्वाज मुनि के आश्रम में जो महात्मा अनुष्ठान करते हैं, जिसका उल्लेख 'मानस' में है, वहां जो कल्पवास की साधना पूर्वकाल में मानी जाती थी वो पंचधूणी की ही साधना थी। त्रिवेणी के तट पर महात्माओं को जहां जगह मिले; गृहस्थ भी ऐसे तपते थे। सूर्य की उपस्थिति में ही पंचधूणी तपा जाता था।

ये रमजान का महिना चलता है। इस्लाम धर्म में भी रोजा गर्मी का, खैरात वर्षाऋतु की और नमाज शर्दी के दिनों की, उसे तप कहा है। इस्लाम धर्म को माननेवाले जो भाई-बहन रोजा करते हैं, वो गर्मी के दिनों में। इस साल गर्मी के दिनों में ही रोजा आया है, वरना सावन के अगल-बगल में लग जाता है। ये जल्दी आया है पंचाग के अनुकूल। रोजा की महिमा गर्मी के दिनों में, क्योंकि दिन लंबा होता है। और लंबा दिन होने के कारण लंबे अरसे तक खाना नहीं खाया जाता उसीमें उपवास की कसौटी है। इसीलिए इस्लाम धर्म में कहते हैं, रोजा हो तो गर्मी के दिनों का। ठंडी का दिन जल्दी खत्म हो जाए और रोजा छोड़ना, उसको कम महिमा दी गई है। अरबस्तान, मक्का, मदीना जहां ये धर्म का बाहुल्य रहा; इरान-इराक में भी। इरान में धर्म के अनुसार दर्शन करे तो जितने हमारे पारसी भाई है वो इरान से अग्नि लेकर ही हिन्दुस्तान आए। पारसी भाईयों में अग्नि की ही पूजा है और अगियारी में निरंतर अग्नि प्रज्वलित रहता है। जो दूध में शक्कर की तरह हिन्दुस्तान में मिल गए वो पारसी। तो इरान, इराक, आरब देश गर्म प्रदेश है, वहां गर्मी के दिनों में ये रोजे की महिमा है कि लंबे अरसे तक आप तपो, भूख सहन करो। खैरात वर्षाऋतु में करो। वर्षाऋतु में एक जगह से दूसरी जगह यातायात असंभव है। कुछ खैरात करनी है, कुछ देना है, कुछ सत्कर्म करना है तो वर्षाऋतु में जब कष्टदायक यात्रा है, उसीमें जाकर आप खैरात करे, तो उसकी महिमा इस्लाम में मानी गई। ये तप है। नमाज की महिमा शर्दी के दिनों में, क्योंकि नमाज जल्दी करनी होती है सुबह में। तो ठंडी में करे वो तप है।

तो पंचतपा साधना में चार जगह कंडे का अग्नि प्रज्वलित किया जाता है और उपर सूरज होना चाहिए, उसे पंचाग्नि कहते हैं। उसके मंत्र भी होते हैं। इसमें न जाए। ये कलियुग है, इसमें पंचाग्नि तपना जरूरी नहीं है। कोई महापुरुष तपे तो दूर से प्रणाम करो। संसार में जीकर भजन करना वो बहुत बड़ा पंचाग्नि तप है।

आपने पूछा कि 'माताएं कर सकती है?' बिलकुल नहीं। एक झाटके में मना करता हूं। मेरे देश की माताएं या तो विश्व की माताएं; भारतीय माताओं की महिमा इसीलिए क्योंकि भारतीय गृहिणी निरंतर पंचतपा है। पुरुष भी पंचतपा है। पंच प्रकार की अग्नि में हम संसारी जीते हैं।

पहला शोकाग्नि। घर में कुछ टूट-फूट होती है, अनबन होती है, कुछ घटना होती है तो उसकी पीड़ा सबसे ज्यादा माँ को होती है। एक पीडा, शोक, ग्लानि कि ये क्यों हो गया? उसका शोक मातृशरीर को तप्त रखती है। दूसरा चिंताग्नि। मेरे बच्चों की शादी करानी है; उच्च शिक्षा देनी है; पति बीमार रहता है; घर चलाना है। आज की शिक्षा महंगी है, आरोग्य महंगा है। तो भविष्य की चिंता मातृशरीर को ज्यादा से ज्यादा लगी रहती है, उसको मेरी व्यासपीठ कहती है चिंताग्नि। तीसरा, शंकाग्नि। माता जो परिवार में टूट जाती है, उस पर बहू, कभी नासमझ बेटा, कभी जेठ, कभी जेठानी, कभी बेटी, कभी दामाद, पति जो बात-बात में शंका करते हैं। प्रत्येक नारी तपती है शंकाग्नि से। चौथा निंदाग्नि। अगल-बगल के पाडोशी, नासमझ लोग घर की हालत समझते नहीं और बिना सोचे निंदा करते हैं। और उपर से पूरे घर का बोज; सूरज तप रहा है। पांचवां संतापाग्नि। तो माताओं के लिए मेरी समझ में ये पंचाग्नि है।

पुरुष को भी यही पंचाग्नि तपना होता है। क्योंकि हमारी वैदिक परंपरा में अग्नि के पांच रूप बताए। उसमें अग्नि का एक रूप पुरुष है; एक रूप योषिता है; एक रूप मेघ है; एक रूप पृथ्वी है; और एक रूप सूर्य है। ये वैदिक पंचाग्नि है। मैं संतुलन करूं। पुरुष भी बेचारा पंचाग्नि तपता है। कभी-कभी माताएं उड़ाऊ होती है। पुरुष बेचारा कितना काम करता है

और पत्नी मन चाहे पैसे उड़ाती है! तो पुरुष को भी चिंताग्नि लगी रहती है। घर का मोभी, वरिष्ठ, वडील होता है, उसको घर में घटी घटना की पीड़ा, ग्लानि, शोकाग्नि लगी रहती है। पुरुषपात्र भी ऐसा है कि उस पर आशंका, वहम होता रहता है परिवारजनों से, खास करके बीबी से; ये शंकाग्नि है। ये सब पंचाग्नि है। देश-काल के संदर्भ में तपस्या में संशोधन होना चाहिए। महात्मा, त्यागी, वैरागी सब तप करे। हम ओलरेडी तप्त है।

तो कोई भी माता, कोई भी पुरुष पंचाग्नि तप रहा है। माताओं को तो बिलकुल तपने की जरूरत नहीं है। आप समयसर ईमानदारी से, 'मधुराष्टक' गाते-गाते रसोई बनाकर बच्चों को, पति को और अतिथि को भोजन कराओ उसमें तुम्हारी सब तपस्या पूरी हो जाती है। कुछ भी गुनगुनाते हुए, मुस्कुराते हुए खाना बनाए।

हमारे यहां ऐसी मान्यता आई कि बहनों को यज्ञ करने की मना है। मेरा संशोधन कायम ये रहा कि बहनों को यज्ञ करने का अधिकार नहीं है, ऐसी बात नहीं; बहनों को यज्ञ करने की जरूरत नहीं है, क्योंकि वो अन्न पकाती है। अन्न को उपनिषद में कहा है, 'अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्।' वो ब्रह्म को परिपक्व करती है और पति, बच्चों की थाली में ब्रह्म को परोसती है। चूल्हे में रसोई करती है, ये उसका यज्ञ है। ये समिध डाल रही है चूल्हे में। फिर भी आपको समय है तो करो यज्ञ; तो मना भी नहीं है। कुछ बातों में संशोधन बहुत जरूरी है। और साहस करके संशोधन करना चाहिए। हजारों-लाखों लोगों को जिस पर श्रद्धा हो, उस श्रद्धेय को संशोधन करके नई बात पेश करनी चाहिए। थोडी आलोचना हो सकती है; हो तो हो! तो बहनों को पंचाग्नि तपने की कोई जरूरत नहीं है। बहन लोग पंचाग्नि तपे ये बहुत अच्छा भी नहीं लगता। तप ये पुरुषों का प्रदेश है; उसे तपने दो। और उसकी तपस्या की शीतल छाया में तुम परिवार का जतन करो। ये भी तप है।

बहनों को वेदमंत्र बोलने का अधिकार नहीं है, ऐसा कहा जाता है। ये सब बातें निकलनी चाहिए। एक माता अपने बच्चे को पलने में झुकाते लोरी सुनाए ये वेदमंत्र है। आप बच्चों का ध्यान न रखो, प्यार न करो और वेदमंत्र जपो और बच्चे रोते रहे उससे अच्छा बच्चों को लोरी सुनाओ, ये तुम्हारा वेद मंत्र है। वेदमंत्र का अधिकार न होता तो वेद में गार्गी न आती। इस दुनिया में दो ही धारा है। एक है गार्गी धारा, दूसरी मार्गी धारा। गार्गी धारा ये श्लोकधारा है, मार्गी धारा ये लोकधारा है। या तो मार्गी को पसंद करो, या तो गार्गी को पसंद करो। एक शिष्ट धारा, एक इष्ट धारा। हमको लोग मार्गी साधु कहते हैं तो अच्छा लगता है। मेरा 'मार्गी' शब्द सुनकर देश-विदेश में लोग अपनी बेटियों के नाम 'मार्गी' रखने लगे हैं। मैं उनका स्वागत करता हूं। गार्गी है ज्ञानमार्ग, मार्गी है भजनमार्ग। गार्गी ये विद्वत्ता का प्रमाण है, मार्गी ये भोलेपन का रास्ता है, विश्वास का मार्ग है।

अग्नि के छ प्रकार है। धूमाग्नि, दीप्ताग्नि, मंदाग्नि, मध्यमाग्नि, खराग्नि और भडाग्नि। पहला, धूमाग्नि। अग्नि न दिखे, पज्वलित न लगे, लेकिन धुंआ निकले, उसे कहते हैं धूमाग्नि। ये धूमवह्नि न्याय है। जहां धूम है वहां अग्नि होगी ही। कई लोगों का क्रोध भी धूमाग्नि है। प्रगट नहीं होता लेकिन पता चल जाता है क्रोध का। दूसरा दीप्ताग्नि। जिसमें अग्नि प्रगट हो जाता है। शास्त्र में साइझ भी लिखी है, उतनी साइझ की लकड़ी तुम हथेली में पकड़ सको और उसका अग्र भाग जलता हो, उसे कहते हैं दीप्ताग्नि। तीसरा मंदाग्नि। हाथ में लकड़ी पकड़ी है लेकिन न धुंआ है, न अग्नि है, मंद-मंद अग्नि है। चौथा मध्यमाग्नि; बीचवाला अग्नि है; न बहुत भडका, न बहुत शांत। पांचवां खराग्नि। सब समझ सके ऐसा अग्नि प्रगट हो चुका है। आंख न हो तो भी गंध से पता लगे कि कहीं अग्नि जल रही है; उसको कहते हैं खराग्नि। खरे अर्थ में अग्नि। छठ्ठा, भडाग्नि। एक पानी में या तपेली में आप घी का दीप रखो, घी डालो फिर वो दीपक जलता-जलता पूरी तपेली में भडक जाए उसे कहते हैं भडाग्नि।

तो माताओं को वेदमंत्र का अधिकार नहीं, ऐसा मैं न कहूं। कहीं लिखा हो, तो भी प्रणाम करके मैं मेरी जात को प्रमाणित अंतर पर रख दूं; मुझे ये कुबूल नहीं हो सकता। कबीर साहब का अपना मत है, नानक का अपना मत है। लेकिन नानक ऐसा नहीं कह सकते कि कबीर झूठे हैं, या कबीर नहीं कह सकते कि नानक झूठे हैं। कोई अद्वैत मत कहे, कोई द्वैतमत, कोई शुद्धाद्वैत, कोई द्वैताद्वैत; तलगाजरडा कहेगा प्रेमाद्वैत। हमें लगता है कि हम कहे वो ही सच। जिन-जिन महापुरुषों की परंपरा में जो-जो लोग आए, वो अपना ही मत ठीक है, दूसरे का मत भिन्न है तो काटो, मारो, हत्या करो, समाज के बाहर कर दो! अरे! क्या नासमझी कर रहे हो? तुम्हारा सद्गुरु, बुद्धपुरुष नीचे देखने लगेगा कि मेरा शिष्य क्या कर रहा है? सबके मत का आदर करो। लेकिन संसार में ऐसा होता है। कबीर साहब ने तो कहा था-

कबीरा कुआ एक है, पनिहारी अनेक।
बरतन सब न्यारे भए, पानी सबमें एक।

ऐसा कोई बुद्धपुरुष हुआ है साहब! ढूंढने से भी नहीं मिलता। प्रमाण देकर कहूंगा कि कबीर पूरी ज़िंदगी पंचधूणी

तपा है। कभी शोकाग्नि, कभी शंकाग्नि, कभी चिंताग्नि, कभी संतापाग्नि, कभी निंदाग्नि। कबीर साहब को केन्द्र में रखते हुए, हमारे नीतिनभाई ने साहिब पर पूरी सिरियल लिखी। उसमें एक पंक्ति मुझे याद है-

साहिब जगने खातर जागे।
छेक भांगती राते जाते ऊंडुं तळियुं तागे।

एक समय ऐसा आता है कि अस्तित्व के पूरे विभाग सो जाते हैं। कोई कहते हैं, वो समय है डेढ़ से साढ़े तीन; कोई कहते हैं दो से तीन या तो एक से तीन साढ़े तीन; इसमें कहते हैं, नदी के नीर भी सो जाते हैं, हवा भी सो जाती है, रैन प्रगाढ़ हो जाती है, पशु-पक्षी भी सो जाते हैं, वृक्ष के पत्ते भी दो घंटे के लिए विश्राम करते हैं। ऐसे समय में कोई कबीर जागता है; कोई नानक जागता है; कोई तुकाराम जागता है; कोई ज्ञानदेव जागता है; कोई नामदेव जागता है; कोई सहजोबाई जागती है; कोई रमण, कोई अरविंद, कोई ठाकुर परमहंस जागता है। इसीलिए नीतिनभाई ने एक बुद्धपुरुष को केन्द्र में रखकर एक पदावलि लिखी।

कबीर क्यों जागे? किसके लिए जागे? जिसने घोषणा की थी, 'कह कबीर में पूरा पाया।' अब क्या शेष बचा था? कौन पंचधूणी तापनी थी? कौन जागता था? लेकिन बहुत अनुभूत शब्दावलि आई, 'छेक भांगती राते, जाते ऊंडुं तळियुं तागे।' हमारे यहां कहावत है ना, 'साधु तो चलता भला।' तलगाजरडा को लगता है, थोड़ा सुधार करना चाहिए। 'साधु चलता भला।' ये तो ठीक; साधु 'चरैवेति' परिभ्रमण करे, परिव्राजकाचार्य हो। वो एक जगह बैठता नहीं। मेरी व्यासपीठ को लगता है, साधु तो चलता भला, इतना पर्याप्त नहीं है, इसीलिए साधु तो जागता भला। कबीर की तरह, ज्ञानेश्वर की तरह, जगद्गुरु तुकाराम की तरह उसका अभंग जागरण हो। जगद्गुरु तुकाराम जगत के लिए जागते रहे। जब प्रकृति के प्रत्येक अंग नींद लेते हैं तब साधु जागता है। इसीलिए साधु जागता भला, ऐसा तलगाजरडा कहता है। लेकिन कई लोग बहुत जागते हैं, बहुत चलते हैं इसका मतलब ये नहीं कि वो साधु हो गया। मैखाने में लोग देर रात तक जागते हैं। निंदा-कूथली करने में लोग तीन-तीन बजे तक जागते हैं। किसी को शीशे में बंद करने के लिए पांच बजे तक जागते हैं! वो जागना क्या जागना है? मेरे 'मानस'कार ने चौपाई लिखी है-

जानिअ तबहिं जीव जग जागा।
जब सब बिषय बिलास बिरागा।।

गुहराज को लक्ष्मणजी कहते हैं कि संसार में सब सोये हुए हैं, लेकिन उसको जागा हुआ समझना, जब जीव को विषयों के विलास में वैराग आए। विषय से वैराग्य जल्दी नहीं आएगा, याद रखना। हमने विषय छोड़ दिए, ये कहना आसान है। कमज़ोर है हम सब। सिद्धपुरुष, साहेब जैसे लोग है उनकी बात ओर है। हमारी-तुम्हारी औकात क्या कि विषय छूटे? तुलसी बहुत प्रेक्टिकल बात करते हैं कि विषय के विलास छोड़ो। तुम खाना मत छोड़ो। खाना भी एक भोग है। लेकिन भिक्षाभाव से तुम्हारे पात्र में चावल, दाल, रोटी जो आए, खा लो। लेकिन ऐसा मत कहो कि मुझे छप्पन भोग चाहिए। मुझे भजन करने के लिए देह टिकाना है और देह टिकाने के लिए मुझे भोजन करना है। जरूरी हो, सो करो। हमारे विषय विलास है। विलास से वैराग आए, वो जागा हुआ आदमी है।

तो साधु तो चलता भला, साधु तो जागता भला और तीसरी बात मुझे ये समझ में आई गुरुकृपा से कि साधु तो भजता भला। खूब चले, खूब यात्रा करे, परिव्राजक बन जाए। दुनिया के कोने-कोने में घूम जाए; कोई मुल्क उसके पदनक्ष के बिना अछुआ न हो। और रात-रात जागे, लेकिन हरि न भजा तो? 'बिनु हरिभजन न जाई कलेसा।' पतंजलि के पांचों क्लेश का एकमात्र उपाय है हरिभजन। राग-द्वेष निकालना है तो भजो हरि को। अस्मिता मिटानी है, भजो हरि को। अविद्या से मुक्त होने का एकमात्र उपाय है भजो हरि को। जिजीविषा है, कई प्रकार की कामना है, उससे मुक्त होना है तो भजो हरि को। तो क्लेश मिटेंगे भजन से। भजन का कोई विकल्प नहीं है। जैसे शास्त्रों में कहा है, सत्य का कोई विकल्प नहीं; प्रेम का कोई विकल्प नहीं; करुणा का कोई विकल्प नहीं; वैसे भजन का कोई विकल्प नहीं। जो भजता है उसका चलना सार्थक, जागना सार्थक। जो भजता है उसे बहुत वरदान मिला है। गुजराती में एक पद है-

हरिने भजतां हजी कोईनी लाज जतां नथी जाणी रे।
जेनी सूरता शामळियाने साथ वदे वेदवाणी रे।
व्हाले मारे मीरांबाईनुं झेर हळाहळ पीधुं रे,
पूर्या पांचालीनां चीर पांडव-काम कीधुं रे।

जो जगत के लिए जागे हैं, सभी ने विष पीया है। कबीर जागे, तुकाराम जागे, मेरा लक्ष्मण जागा। साधु की विपत्ति की व्याख्या ये है कि नासमझ लोग समझ नहीं पा रहे हैं इसी चिंता में उसका भजन कम हो, उसीको साधु की विपत्ति कहा है। 'मानस' में कहा है-

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई।
जब तव सुमिरन भजन न होई।।

जो समय तुम्हें भजन में डालना है वो तुम्हें वार्तालाप में

बिताना पड़े, निंदा-कूथली में निकालना पड़े ये विपत्ति है। जो निरर्थक है, बकवास के सिवा कुछ भी नहीं है। जो कबीर कहते हैं, 'कह कबीर मैं पूरा पाया।' मुझे सबकुछ प्राप्त हो गया है। उसे जागने की क्या जरूरत? पैर पसारे आराम से न सोये? बशीर बद्र का एक शे'र है-

सोये कहां थे आंख ने तकिये भिगोये थे।
हम भी कभी किसी के लिए खूब रोये थे।

हर्ष ब्रह्मभट्ट साहब की गज़ल है-

या मेरे कदमों को कोई सफ़र तो मिले।
या ठहर जाऊं ऐसा कोई घर तो मिले।
दिल से दिल को यकीनन मिला लेंगे हम,
पहले उनकी नज़र से नज़र तो मिले।

तो हमारी चर्चा चल रही है, पंचाग्नि किसको नहीं लगी है? कौन इससे मुक्त है? पुरुष भी अग्नि है। स्त्री भी अग्नि है। पृथ्वी भी अग्नि है। मेघ भी अग्नि है। सूर्य भी अग्नि है। ये पांच अग्नि का जिक्र ग्रंथकारों ने किया है। तो आपका जो प्रश्न था, बहन लोग पंचधूणी तापे? नहीं, बिलकुल नहीं। हम तपते ही है।

वैदिक परंपरा में अग्नि के पांच रूप बताए- मेघ, सूर्य, पृथ्वी, पुरुष और योषिता। मैं तो ये सब बातें 'मानस' के आधार पर कर रहा हूं। 'मानस' में ऐसा प्रसंग 'सुन्दरकांड' में है। 'सुन्दरकांड' में जितनी अग्नि की बात है उतनी ओर कांड में नहीं है। बाकी था तो हनुमान ने पूरी लंका जलाई! अग्नितत्त्व बीज तत्त्व है। अग्नि कहां नहीं है?

माँ जानकी स्वयं 'सुन्दरकांड' में पंचाग्नि तपती है। पृथ्वी अग्नि है। और धरती की बेटी धरती पर बैठी है। अपने नाखून से धरती को खोदती रहती है। मैं गुरुकृपा से कहना चाहूंगा कि माँ जानकी ने 'सुन्दरकांड' में पंचाग्नि तपी है। एक तो पृथ्वी अग्नि है और अग्नि ब्रह्म है। वेद का प्रसिद्ध मंत्र आप जानते हैं-

एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः।

एक ही ब्रह्म को बिलग-बिलग रूप से बुलाया जाता है। कभी उसको अग्नि कहते हैं; कभी उसको यज्ञ कहते हैं; कभी उसको वायु कहते हैं। वो ही ब्रह्म को कभी हमने अग्नि कहा; कभी हमने यज्ञ कहा; नियंत्रण करनेवाला, सुसंचालन करनेवाला, सुगठित सबको रखनेवाला यज्ञ कहा। उसी ब्रह्म को हमने वायु भी कहा।

तो पृथ्वी अग्नि है। माँ को देखती है। माँ रोती है। जानकी को देखती है; एक ग्लानि, एक पीड़ा। भूगोल के नियम के अनुसार अग्नि को ज्यादा खोदो तो अग्नि ही निकलेगा। पृथ्वी का उपर का पड़ शांत और ठंडा होता है, भीतर तो लावा ही है। तो पृथ्वी अग्नि है। पृथ्वी का एक अर्थ है धैर्य, सहनशीलता। सहनशीलता अग्नि है। माँ सीता पृथ्वीवाली अग्नि तप रही है।

वेद कहता है, पर्जन्य अग्नि है। हां, एक पंक्ति जरूर सोचने पर मजबूर करती है, 'राखिसि जतन कराइ।' सीता को अशोक वाटिका में रखा गया। लेकिन वहां छापरा या कुछ है, ऐसा बताया नहीं गया। वो तो अशोक वृक्ष के नीचे बैठी, ऐसा ही ग्रंथकारों ने बताया। बारिश नहीं होती होगी? होगी ही। ये दक्षिण का भाग है। लंका में आज भी कभी भी वर्षा होती है। इसीलिए 'मानस' में एक पंक्ति भगवान राम के संदेश में आती है-

बारिद तपत तेल जनु बरिसा।

अग्नि है मेघ। हम जिसे ठंडा कहते हैं वो अग्नि है। हर एक पदार्थ में अग्नि है। 'पावकमय ससि स्रवत न आगी।' चंद्र तो शीतल होना चाहिए। तुलसी का विज्ञान पढ़ो, चंद्र भी पावकमय है। सीता कहती है, चंद्र भी अग्नि के समान है। 'हेतु कृसानु भानु हिमकर को।' हर जगह अग्नि, अग्नि, अग्नि।

तो मेघ बरसता होगा, वो भी जानकी के लिए अग्नि था। यद्यपि राम की ओर 'बारिद तपत तेल जनु बरिसा।' लेकिन दोनों ओर प्रेम पलता है। तो भगवती जानकी को केन्द्र में रखकर ये शब्द का प्रयोग होता है। तो पृथ्वी अग्नि है। माँ जानकी पंचाग्नि तप रही है। सूर्य तो अग्नि है ही। पुरुष अग्नि है। यहां पुरुष दो है, एक को भगवान राम 'पुराण प्रसिद्ध प्रकाश निधि।' अग्नि के पुत्र है, उस राम का वियोग है। दूसरा अग्नि रावण। ये रावणरूपी पुरुष का अग्नि तपा रहा है। बार-बार आकर कुछ ना कुछ बोलता है। जो राक्षसियां बैठी है चारों ओर वो विचित्र रूप लेकर जानकी को जला रही है। पांचों पांच अग्नि के बीच मेरी मैथिली बैठी है। ये है 'मानस' की पंचाग्नि, जहां पांच ओर से अग्नि लगी है। तो पूरा शास्त्र अग्नितत्त्व से भरपूर है, उसमें 'सुन्दरकांड' तो गज़ब है!

तो पृथ्वी अग्नि, मेघ अग्नि, पुरुष अग्नि, योषिता अग्नि, सूरज भी अग्नि। यहां सूरज नहीं पर सूरज का चेला उपर बैठा है हनुमान। फिर भी संताप नहीं जा रहा है। इसका मतलब सूर्यांश, सूर्य का आश्रित उपर बैठा है, फिर भी जानकी अशोक के नीचे तप्त है। ये पंचधूणी है जानकी की। तो कभी-कभी जिस स्थान में हम हो वो स्थान ही हमें आग लगाते हैं। तब समझना ये पृथ्वी हमारे लिए अग्नि बनी। कभी-कभी कहते हैं, हम तुम्हारे साथ है, तुम्हारे माथे पर है हमारा हाथ। ऐसे आदमी जब दगा दे तो समझना, सूरज भी अग्नि बन गया है। तीसरा, जब भी कोई कहे कि अवसर मिले बोल देना, बरस न जाए तो कहना!

ऐसा मेघ भी विपरीत हो जाए तब वो अग्नि बन जाता है। मानवीय जीवन की समस्याएं ये सब पंचाग्नि है। कभी भाई भाई के लिए अग्नि बन रहा है; बाप बेटे के लिए, बेटा बाप के लिए अग्नि बन रहा है। यही पंचधूणी हमें तपनी है। जानकी पंचधूणी तापते-तापते धीरे-धीरे वो सफल हुई, अग्नि की कन्या बनकर बाहर आई। ऋषिमुनियों के क्रोध का लोही का घड़ा था इसमें से जानकी आई। इसलिए जानकी का पिता अग्नि हो गया। और यहां तो लंका में अग्नि में से बाहर आई तो अग्नि ही जानकी को भगवान को सौंपते हैं। तो ये अग्निपुत्री है; राम अग्निपुत्र है।

हमारे यहां अग्नि साक्षी का प्रतीक है। सुग्रीव और राम की मैत्री करानी थी तो हनुमानजी ने बीच में अग्नि रखा। पति-पत्नी की शादी होती है तो हम बीच में अग्नि रखते हैं। 'सीता प्रथम अनल महुँ राखी।' क्यों रखी सीता को अग्नि में? क्योंकि अग्नि की साक्षी में रखनी थी; अग्नि की साक्षी से उसका पावित्र्य सिद्ध करना था। वो अग्नि साक्षीदेव है, हर जगह हम अग्नि को केन्द्र में रखते हैं। घर में यज्ञ न करे, लेकिन गरीब से गरीब आदमी घर में दीया करे, ये है अग्नि की साक्षी में मैं तेरा प्रणाम कर रहा हूं। 'श्रीमद् भागवतजी' में है, प्रकृति के कितने तत्त्व हमारे कर्मों का साक्षी है, इसमें एक साक्षीपणा अग्नि है। हम क्या कर रहे हैं इसमें सूर्य साक्षी है। जल को साक्षी माना है। हमारे कर्मों का सबसे बड़ा साक्षी हमारा गुरु होता है। ये बोले नहीं वो उनकी साधुता है। बाकी गति-अगति दोनों की खबर रखनेवाला बुद्धपुरुष माना जाता है। सामने आकर प्रणाम करके कुछ बोलो और बाद में कुछ ओर बोलो तो क्या बुद्धपुरुष को पता नहीं होता है? वो गति-अगति सब जानते हैं, पर साधुता एक बिलग बस्तु है।

तो अग्नि बहुत अद्भुत तत्त्व है। वेद के पहले मंत्र का पहला शब्द 'अग्निमीळे पुरोहितं।' अग्नि इसीलिए देवता है कि जो डालो उसका स्वीकार वो करता है। 'मानस' में बुद्धपुरुष को अग्निरूप माना गया। हनुमान बुद्धपुरुष है; साक्षात् शिव बुद्धपुरुष है। उसके लिए तुलसी ने 'अग्नि' शब्द का प्रयोग किया है। हनुमान, आप अग्नि है, 'प्रनवऊं पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।' बुद्धपुरुष के पास बैठना भी तपना है, तपस्या है। ये ऊर्जा को तपाना बहुत मुश्किल है।

एक अग्नि है भौम अग्नि; एक है व्योम अग्नि। और एक उदराग्नि जिसको मध्य अग्नि कहते हैं। आकाश में बिजली कौंधती है, उसे शास्त्रकारों ने व्योम अग्नि कहा। यद्यपि ये अग्नि स्थिर नहीं रहती। लेकिन बिजली गिरती है तो जला देती है। मैं विज्ञान को प्रार्थना करूं, एक बार 'रामचरितमानस' पढ़े। फिर अपने सिद्धांतो के साथ कम से कम उसका तुलनात्मक अभ्यास तो करो!

तो अग्नि सबका स्वीकार करती है। बुद्धपुरुष अग्नि है। हनुमान अग्नि है। गुरु अग्नि है। पुरुष अग्नि है, वहां बुद्धपुरुष समझ लो वो अग्नि है। योषिता अग्नि है। जगदंबाओं का स्वरूप समझ लो वो अग्नि है। पुरुष का लक्षण अग्नि के रूप में कैसे स्वीकार करे? तो पहला लक्षण, जो दो वो अग्नि स्वीकार करे। गाली दो तो कुबूल; प्रशंसा करो तो कुबूल। अग्नि का स्तवन गाओ, स्तोत्र गाओ तो कुबूल। उसमें घी डालो तो कुबूल, क्रुड डालो तो कुबूल। उसमें आहुत करनेवाले मंगल द्रव्यों को डालो तो कुबूल; हो सकता है, आप कुछ गंदी चीज डालो तो भी कुबूल। घी डालो तो प्रज्वलित हो जाए। पानी डालो तो भी कुबूल। बुझाना चाहते हो तो बुझ जाए। स्वीकार ये बुद्धपुरुष का लक्षण है। अग्नि स्वीकार करे सब। 'मानस' में प्रमाण है। पहला ही अग्नि का नाम लेते हैं तुलसी। 'भानु कृसानु सर्ब रस खाहीं।' सब रस खाती है अग्नि। 'रामचरितमानस' त्रिभुवनीय शब्दकोश है। अनल, अगिनि, पावक, कृशानु, अंगार पांच अग्नि। समुद्र में कई चीज़ समाती नहीं है। समुद्र फैंक देता है बाहर। अग्नि किसीको फेंकेगा नहीं। 'श्रीमद् भागवत' में अग्नि की पत्नी का नाम है स्वाहा। स्वाहा अपने पति अग्नि को आहुतियों से पुष्ट करती है, 'इदं अग्नये न मम।' ऋषिमुनियों की प्रज्ञा देखो, स्वाहा को धर्मपत्नी बनाया, अग्नि को पुरुष बनाया। क्या अद्भुत स्थिति है! तो बुद्धपुरुष और अग्नि एक है। उसी रूप में यदि देखें, 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः।' पवन भी ब्रह्म है तो मेरा हनुमान भी ब्रह्म हो गया। तो अग्निरूप बुद्धपुरुष का ये लक्षण है सबका स्वीकार। राजेन्द्र शुक्ल ने कहा-

निषेध कोईनो नहीं विदाय कोईने नहीं।
हुं शुद्ध आवकार छुं, हुं सर्वनो समास छुं।

सबको स्वीकार करना इसका सबसे बड़ा प्रमाण है अग्नि।

दूसरा, अग्नि में किसी ने घी डाला तो बात ओर है, लेकिन किसी ने गंदी चीज डाली तो भी अग्निरूप बुद्धपुरुष का लक्षण है उपर ही उठना। बुद्धपुरुष को कितनी ही गालियां दो, वो उपर ही उठेगा, क्योंकि घराना ऊंचा है उसका। अग्नि को मोमबत्ती जलाओ और लाख नीचे करो, तो पिघला हुआ मोम नीचे गिरेगा, लेकिन ज्योति तो उपर ही जाएगी। उसको उपर जाने की आदत है। बुद्धपुरुष अपनी ऊंचाई नहीं छोड़ता; कोई जितनी निन्दा करे, गाली दे उतना वो उपर उठे। अग्नि यज्ञकुंड की मर्यादा छोड़ता नहीं, ये उसका तीसरा लक्षण है। तो अग्नि अपने अग्निकुंड

की सीमा को नांघता नहीं है। बुद्धपुरुष अग्नि प्रकाशित करता है, प्रकाश फैलाता है, जलाता नहीं।

पहली वस्तु, सबका स्वीकार। दूसरी वस्तु, सदैव उपर उठना। तीसरी वस्तु, अपनी मर्यादा, अपने शील का त्याग न करे। यद्यपि जरूरी नहीं है, लेकिन लोकसंग्रह के लिए नियमावली निभानी पड़ती है। 'प्रातकाल उठि कै रघुनाथा।' तो क्या राम सो गए थे कि जागे? ये तो ब्रह्म है। रात्रि और दिन तो उनके निमिषमात्र है। कभी-कभी दुनिया को लगे कि अतीत के धूणे में या यज्ञकुंड में अग्नि शांत हो गया है लेकिन अग्नि शांत नहीं हुआ, अंदर है। वैसे कभी-कभी कोई बुद्धपुरुष बैठा हो तो लगे कि सो रहा है। लेकिन झपकी नहीं ली। बिना इंधण जैसे अग्नि की शांत प्रतिष्ठा होती है, ऐसे बुद्धपुरुष की प्रतिष्ठा होती है। अग्निरूप बुद्धपुरुष का पांचवां लक्षण है, कोई भी द्रव्य की मांग नहीं करते। शास्त्र कहे ओर बात है कि घी डालो, जव-तल डालो। ये पंडित और कर्मकांड के आचार्यों का निर्णय है। अग्नि की कोई मांग नहीं है।

तो 'मानस-पंचाग्नि' की चर्चा चल रही है संवाद में। थोड़ा कथा का क्रम लूं। कल गुरुवंदना में चर्चा की थी, गुरु में गौरी भी होती है, गणेश भी होता है, गौरीशंकर भी होता है। विष्णु और सूर्य भी होता है। श्रीहनुमानजी गुरु है, बुद्धपुरुष है। उसमें भी सब है। सूर्य स्वयं गुरु के रूप में है, बड़े तेजस्वी है।

दादा तो कभी-कभी कहते थे, 'बंदऊं गुरुपद कंज कृपासिंधु नररूप हरि।' इस दोहे में पांचों देव आ जाते हैं। गुरु गौरी है, गुरु में विष्णु है, गणपति है, सूर्य है। तो एक ही दोहे में पांचों है। 'गुरुपद कंज' में कंज है, वो लक्ष्मी का आसन है। इसीलिए वहां मातृस्मरण है। गुरु गौरी है। 'मातृदेवो भव' है। 'कृपासिंधु करुना अयन' में कृपासिंधु है शंकर। नररूप हरि माने विष्णु। तो कृपा शंकर के लिए और सिंधु में जो शयन करता है वो विष्णु। 'महामोह तम' महान मोह जो अंधेरा है, वहां गणेश का संकेत दादा ने किया कि बेटा, मोह का विनाश केवल विवेक कर सकता है। जब घन अंधेरा होता है तब विवेक ही काम आता है। सूर्य है गुरु। तो एक ही दोहे में पांचों देव समाहित, वैसे हनुमानजी में पांचों तत्त्व आ जाते हैं। फिर सीतारामजी की वंदना की। उसके बाद नाम महाराज की वंदना भूरिशः तुलसी ने की।

बंदऊ नाम राम रघुबर को।
हेतु कृसानु भानु हिम कर को।।

रामतत्त्व जो परमतत्त्व है वो सूर्य, अग्नि, चंद्र का कारण है। ये नहीं तो कुछ भी नहीं। राममहिमा गाते हुए कहा, ये प्रणव पर्याय है। ॐकार का एकाकार रूप है रामनाम। मंत्रों में मंत्र राममंत्र। ये मंत्रराज है।

कथाओं में कहता हूं कि नाम तो राम का। परममंत्र, महामंत्र, गोप्यमंत्र है रामनाम। रूप तो कृष्ण का। इसका मतलब ये नहीं कि राम रूपवान नहीं थे। तो रूप कृष्ण का। अद्भुत रूप है कृष्ण का। धाम महादेव का कैलास। उसके समान धाम कोई नहीं। यद्यपि वृंदावन, अयोध्या, चित्रकूट सबकी अपनी-अपनी महिमा है लेकिन खास तौर पर धाम तो कैलास। और लीला बुद्धपुरुषों की, जो समझ में न आए।

एने भरोसे रहेवाय जी...
भरोसे रहेवाय पंडनुं डहापण नो डोळाय...
'काग' सघळा रोग नासे, कीधुं एम खवायजी;
वैद्य घरनां वाटेलां ते, ओसड केम ओळखाय?

गोस्वामीजी कहते हैं, कहां तक रामकी बड़ाई गाऊं? स्वयं राम को कहा जाए कि आप राम की महिमा गाओ, तो राम भी नहीं गा सकते। उसको भाव, अभाव, अनख, आलस किसी भी रीत से नाम लेने से मंगल होगा दसों दिशा में। आपकी जो साधना पद्धति हो रखना। गुरु के मार्गदर्शन में आगे बढ़ना, लेकिन कोई वस्तु अनुकूल न पड़े तो प्रभु का नाम। राम का नाम ऐसा मेरा दृढ़ आग्रह नहीं है। कृष्णनाम, शिवनाम, दुर्गानाम, विठ्ठल का नाम, अल्लाह का नाम लो। सब छूट है। तो कोई भी नाम लो।

एक है गार्गी धारा, दूसरी मार्गी धारा। गार्गी धारा ये श्लोकधारा है, मार्गी धारा ये लोकधारा है। या तो मार्गी को पसंद करो, या तो गार्गी को पसंद करो। एक शिष्ट धारा, एक इष्ट धारा। हमको लोग मार्गी साधु कहते हैं तो अच्छा लगता है। मेरा 'मार्गी' शब्द सुनकर देश-विदेश में लोग अपनी बेटियों के नाम 'मार्गी' रखने लगे हैं। मैं उनका स्वागत करता हूं। गार्गी है ज्ञानमार्ग, मार्गी है भजनमार्ग। गार्गी ये विद्वत्ता का प्रमाण है, मार्गी ये भोलेपन का रास्ता है, विश्वास का मार्ग है।

मानस-पंचाग्नि - ३

पंचाग्नि तप से शरीर शुद्धि होती है लेकिन चित्त उग्र हो जाता है

'मानस-पंचाग्नि', जिसकी संवादी चर्चा हो रही है। बहुत से प्रश्न, जिज्ञासाएं है। यथा अवकाश में कोशिश करूंगा। हमारे यहां वैदिक वाङ्मय में बहुत उपनिषद है। कोई १०८ कहते हैं; कोई कम-ज्यादा बताते हैं। शांकरी परंपरा में सारभूत द्वादश उपनिषद को विशेष रूप में प्रधानता दी है। उसमें भी साइज़ के रूप में और चिंतन में भी दो उपनिषद बड़े हैं। पहला 'छांदोग्य उपनिषद' और दूसरा 'बृहदारण्यक उपनिषद।' ऋषिकेशस्थ हमारे कैलास आश्रम ने उसका प्रकाशन किया। बारह को एक साथ संकलित करके ब्रह्मलीन महामंडलेश्वर विद्यानंदगिरिजी महाराज ने उसका संकलन किया था। उसमें भाष्य भी है। कभी हाथ में आए तो देखना। मेरे लिए विशेष महत्त्व की बात है कि स्वतंत्र उपनिषद में पूज्यपाद महामंडलेश्वर, विष्णु देवानंदगिरिजी, हमारे दादाजी ने अपने हस्ताक्षर में उपनिषद के बगल में टिप्पणियां दी है। 'बृहदारण्यक उपनिषद' और 'छांदोग्य उपनिषद' दोनों में पंचाग्नि विद्या का प्रतिपादन है। करीब-करीब मंत्र भी समान है। थोड़ा क्रम बिगल है ऋषिभेदे। दोनों उपनिषद पर दादाजी की टिप्पणियां भी उपलब्ध है। इन सब उपनिषद पर जगद्गुरु आदि शंकराचार्य का भाष्य है।

तो 'शांकर भाष्य' बड़ा कठिन है। दादाजी का संस्कृत बहुत कठिन है। तलगाजरडा जटिल से जटिल भी है और सरल से सरल भी है। क्लिष्ट और जटिल संस्कृत गरिमा वैभव संस्कृत विलास कोई दादाजी से सीखे। और सरल से सरल 'मानस-उपनिषद' का भाष्य कोई त्रिभुवन दादाजी से सीखे। मानो कराल और कोमल का समन्वय। उसकी छाया में पलने का गौरव है, एक आनंद है। तो 'छांदोग्य' और 'बृहदारण्य' में बहुत कठिन बात है, लेकिन मैं बहुत सरलता से, त्रिभुवनदादा की अदा से आपके सामने पेश होऊंगा, विष्णुदादा की अदा से नहीं। श्लोक और लोक दोनों में तलगाजरडा ने काम किया; विद्वत्ता और साधुता दोनों में युगपद मार्ग निकाला इसका मुझे आनंद है। जैसे मैं कल कह रहा था, एक गार्गी और एक मार्गी। गार्गी है विद्वत्ता और मार्गी है साधुता। तो वहां पंचाग्नि विद्या है, उसका शांकर भाष्य उपलब्ध है। लेकिन वो भी बहुत कठिन है। प्रसन्न चित्त से सुनिए। उसमें पांच प्रश्न है उसके जवाब उपनिषदों ने बहुत क्लिष्ट दिए हैं। मुझे ये जवाब गुरुकृपा से 'मानस' से खोजने है और आपको देने है। यही है 'मानस-पंचाग्नि।'

कल जो मैं पंचाग्नि तप की बात कर रहा था उसमें ये भी है कि शर्दी की ऋतु में गंगा नदी में सुबह पांच बजे कंठ तक पानी में खड़े रहो और सुबह से शाम तक खड़े रहो; सुबह सूरज निकले, सूरज मध्यम हो और सूरज ढल जाए तब तक जल में खड़े रहो उसको भी पंचाग्नि तप माना गया है। केवल अग्नि ही नहीं, जहां भी कष्टदायक साधन है वहां पंचाग्नि तप है। पंचाग्नि तप से शरीर शुद्धि होती है; चित्त उग्र हो जाता है।

तो पंचाग्नि तपवाले का चित्त उग्र होता है। और मेरे भाई-बहन, मैंने जितना जाना है, सुना है, इसकी आपको पहचान करा रहा हूं, साधना से शरीर विकृत हो जाए तो समझो, आपकी साधना विपरीत मार्ग पे जा रही है। साधना में शरीर विकृत नहीं होना चाहिए। साधना का तो अर्थ है, वर्ण बदल जाए। कलियुग में आज की विकृत साधना मैं देखता हूं, कई लोग विकृत होते हैं। स्फूर्त रखे वो साधना। उसकी साधना को मैं वंदन करता हूं लेकिन उसके चेहरे बदल जाते हैं, आंख बदल जाती है। इसीलिए मैं घूमघूम करके कहता हूं, हरिनाम लो। आपका तेज बढ़ेगा, स्फूर्ति रहेगी। तुम्हारा वर्ण बदले, तुम्हारे पसीने की दुर्गंध निकलने लगे उसे कहते हैं भजन। मल-मूत्र की भी दुर्गंध न रहे, मात्रा कम हो जाए दुर्गंध की। ओर बहुत से लक्षण है सप्रमाण साधना के। विशिष्ट प्रकार की साधना करनेवाला रात्रि में जागे तो सुबह उसकी आंखों में सुज़न दिखेगी और सुज़न दिखे तो समझना साधना विकृत है। भजनानंदी जागे तो सुबह में उसकी आंख देखो तो तुम प्रसन्नता से भर जाओ। मानो सुबह-सुबह आंख खुले तो लगे फूल खिले, ऐसी महसूसी हो। अब चातुर्मास शुरू होगा तो बहुत से उपवास-एकटाना करेंगे। कोई बहुत मोटे हो जाएंगे! कोई पतले हो जाएंगे! ये क्या है? भजन धमनी-शिरा का संतुलन करता है। आप प्रेम से सूर में गाओ तो आपके शरीर के पूरे रसायण बदलेंगे। रोम-रोम प्रसन्नता से भर जाएंगे।

रामकृष्ण परमहंस का शरीर सप्रमाण था। चैतन्य महाप्रभु की बोडी भी सप्रमाण। रमण भी सप्रमाण। यद्यपि अरविंद ने बहुत उपासना की; वो भी सप्रमाण रहे लेकिन उसने प्रयोग बहुत किए। माताजी सप्रमाण रही। नरसिंह मेहता को भी देखो। आप विकृत साधना करो और मोटे शरीरवाले हो जाओ, तो आप नृत्य कर सको? मीरां नाची, क्योंकि भक्तिरस में डूबी थी। ज्ञानेश्वर देखो, तुकाराम देखो, बाबा तुलसी देखो। किसी की आंखें देखकर आप परख लोगे कि साधना जरा उग्र है ताकि शरीर में विकृति आ गई है। जो शरीर को विकृत कर दे, वो साधना कैसी? क्योंकि शरीर तो साधन है, वो विकृत नहीं होना चाहिए। इसलिए साधना में युक्त आहार-विहार आदि का संतुलन बताया है। नाम संकीर्तन जैसा कोई भजन नहीं है। लेकिन लोगों को आदत-सी हो गई है कि जटिल साधना हो। ऐसी साधना का क्या फायदा जिसका रस हमें ना मिले? तो पंचाग्नि कभी-कभी शरीर शुद्धि का कारण बनती है अवश्य। लेकिन चित्त उग्र हो जाता है। ऐसे समय में 'छांदोग्य' और 'बृहदारण्यक' उपनिषद में जो पंचाग्नि विद्या का उद्घोष हुआ है।

तो श्वेतकेतु गया पांचाल नरेश के पास। उद्दालक का बेटा है, ऋषिकुमार है। उद्दालक को हम गौतम भी कहते हैं। श्वेतकेतु आपको गौतम के बेटे के रूप में भी मिलेंगे और उद्दालक के बेटे के रूप में भी आपको मिलेंगे। श्वेतकेतु जाता है कि मुझे पंचाग्नि विद्या का उपदेश दो। तब वो पांचाल नरेश पांच प्रश्न पूछते हैं। १, मरने के बाद आदमी कहां जाता है? २, मरने के बाद फिर जीव कैसे आता है? ३, इतने लोग मरते हैं तो पितृलोक भर क्यों नहीं जाता? ४, देवयान मार्ग और पितृयान मार्ग कहां से बिलग होते हैं? ५, हे श्वेतकेतु, कितनी आहुति के बाद जलरूप आहुत द्रव्य पुरुष के रूप में प्रकट होता है?

तो ये पांच प्रश्न पूछे। फिर श्वेतकेतु ने कहा, मुझे इसकी कोई खबर नहीं। तो पांचाल नरेश ने कहा, तू इस विद्या का अधिकारी नहीं है, पहले जवाब दे। परीक्षा की गई। हमारे यहां परीक्षा के बारे में जो शब्द है, उसमें भी 'अग्नि' शब्द ही लागू होता है, अग्निपरीक्षा। श्वेतकेतु निराश होकर लौटा। बाप उद्दालक को प्रणाम करके कहा, मैं गया था पांचाल नरेश के पास। पांच प्रश्न मुझे पूछे। मैं पंचाग्नि विद्या सीखने गया था; जिज्ञासु के रूप में गया था। सभी शर्त मैंने पूरी की लेकिन पांच प्रश्नों के जवाब मुझे नहीं आता था तो मुझे लौटा दिया। मुझे आप बताओ पिताजी तो आपके पास से जवाब लेकर जाऊं। वहां फिर ऋषि से ये पंचाग्नि विद्या सीखूं। उद्दालक ने कहा, बेटा, इन पांच प्रश्नों के जवाब मुझे भी नहीं आते। लोग उस समय निखालस थे। और अभी तो हमें थोड़ा आए तो भी रजोगुणी हो जाते हैं। मुझे इसका पता नहीं, ये कहने के लिए बहुत पता होना चाहिए। मुझे ये नहीं आता, इतना कहने के लिए गुरुकृपा से बहुत आना चाहिए वरना कहां ऐसा बोल सके कि मुझे नहीं आता। शिवमंगल सिंह 'सुमन' उज्जैन महाकाल के बड़े शायर ने कहा-

मैं क्षिप्रा-सा सरल-तरल बहता हूं।
मैं कालिदास की शेष कथा कहता हूं।
मुझको तो मौत भी डरा नहीं सकती,
मैं महाकाल की नगरी में रहता हूं।।

उद्दालक ने प्रस्ताव रखा अपने जुवान बेटे से कि हम बाप-बेटा दोनों शिष्य बनकर जाए पांचाल नरेश के पास और छः महीने उनकी सेवा करके पात्र बने फिर उसका जवाब प्राप्त करेंगे। तो बेटे ने जिद्द की, मैं नहीं आऊंगा। उसे लगा कि मुझे नहीं आता था और मैंने कह दिया तो महात्मा को बताना चाहिए था। वो थोड़ा रुठा हुआ था। तो पिता को कहा, आप जाकर सीख आओ। फिर आकर मुझे बताइएगा और फिर मैं जाकर पांचाल नरेश को प्रणाम करूंगा।

उद्दालक को भी पांच सवाल का जवाब नहीं आ रहा है तो भी उसको नहीं लौटाया। श्वेतकेतु को ही लौटाया क्योंकि उसको लगा होगा उद्दालक थोड़ा प्रौढ़ है; इस विद्या को पचाने के योग्य है। श्वेतकेतु ताजा-तरोजा है। वो पचा नहीं पाएगा। ये अग्निविद्या है। ये भी कारण हो सकता है। समिध कबूल कर लिए। भस्म का तिलक कर दिया। मानो एक दीक्षा दे दी। वचन से शिष्यत्व कुबूल कर लिया। फिर पांचाल नरेश, जो कहते हैं वो मंत्र हम बोलें-

असौ वै लोकोऽग्निगौतम तस्यादित्य एव
समिद्रश्मयो धूमोऽहरर्चिर्दिशोऽङ्गारा अवान्तरदिशो
विस्फुलिंगः तस्मिन्ने तस्मिन्नग्नौ देवाः श्रद्धां जुह्वति
तस्या आहुत्यै सोमो राजा संभवति।।

इस अग्नि का फल है, 'सोमो राजा संभवति।'

इन मंत्रों की बड़ी महिमा है; वातावरण अच्छा हो जाता है। कई लोग कहे कि दूसरी भाषा में मंत्र हो तो चले? हां, चले पर संस्कृत तो संस्कृत है। शांकर भाष्य तो इतना जटिल-कठिन है! मैं कोशिश करूं तो समझा सकूंगा लेकिन आपको बोज पड़ेगा। उसमें जो जवाब है कि मरने के बाद जीव कहां रहता है? फिर कर्मानुसार अथवा किसी कारणवश फिर उसका आगमन कैसे होता है? इतने जाते हैं तो पितृलोक भर क्यों नहीं जाता? देवयान मार्ग और पितृयान मार्ग कौन बिंदु से बिलग होते हैं? कितने बार की आहुति से जलरूप आहुत द्रव्य पुरुषरूप में प्रगट होता है? बहुत सरल करके कह रहा हूं। इससे अच्छा है 'राम-राम' करो। वैसे रामनाम भी तो सबसे बड़ी अग्नि है। शास्त्रीय ग्रंथों की महिमा भी थोड़ी गाई जाए कि मेरे देश के ऋषिओं ने क्या चिंतन किया है? बाकी सब अग्निओं का अग्नि है रामनाम। प्रमाण देखते जाइए। 'जासु नाम पावक अग तुला।' ईश्वर का नाम भी अग्नि; मेरे ठाकुर का रूप भी अग्नि; शीतल अग्नि। वहां अग्नि याने तपानेवाला अग्नि नहीं। कृष्ण के दर्शन करे, श्रीनाथजी के दर्शन करे तो उष्मा आए। ठाकुर के पास, द्वारिकाधीश के पास ठंडी में सिगडी रखते हैं, लेकिन उसे देखते ही हमारी उष्मा बढ़ जाती है; उसका रूप ही अग्नि है। परमात्मा की लीला भी अग्नि है, अंधेरे को मिटाती है; उजाला ही उजाला करती है। परमात्मा का धाम प्रकाश पुंज है।

मुझे आज किसीने पूछा है, सत्य, प्रेम, करुणा जो आप सारभूत में कहते हैं तो क्या वो अग्नि है? बड़ा प्यारा प्रश्न है।

शिवरूपी धर्मनां नेत्रो त्रण छे।
सत्य, प्रेम ने करुणा पूर्ण छे।
सतने मारगडे जे कोइ हाले,
गुरु ने गोविंद एनी बावळी झाले।

जैसे माता-पिता अपने बच्चों को लेकर गार्डन में घूमने जाए तो बालक का एक हाथ माँ पकड़े, एक हाथ बाप पकड़े और झूलते जाए। वैसे सत्य के मार्ग में जो गति करेगा उसका एक हाथ गोविंद पकड़ेगा, दूसरा हाथ गुरु पकड़ेगा और झुलाता हुआ हमें मार्गी बनाकर मंज़िल तक पहुंचा देगा। अच्छे दंपती जैसे बैग को पकड़ते है वैसे। पंचगिनी में हम घूमने आए हैं। 'निरुद्दशे निरुद्दशे।' हमारे निरंजन भगत कहे-

हुं तो बस फरवा आव्यो छुं!

हुं क्यां एके काम तमारुं के मारुं करवा आव्यो छुं?

ऐसे घूमने निकलो। जैसे राम-लखन जनकपुर में घूमने निकले थे, ऐसे असंगवृत्ति से घूमो। राम ने गुरु से कहा, आप आज्ञा करो तो लखन को मैं असंगभाव से नगरी दिखाकर ले आऊं। लेकिन गज़ब तो तब हो गया जब राम को उनकी उंमर के लड़के नगरदर्शन कराते हैं। छोटे-छोटे बच्चे हमें दिखा सकते हैं। ये 'मानस' के रहस्य है। ब्रह्मांड को जो एक क्षण में पैदा करे वो धनुष यज्ञ को आश्चर्य से देखते हैं, ये लीला है। लीला भी अग्नि है। ये उष्मा देती है, प्रसन्नता प्रदान करती है, शुद्ध-बुद्ध कर देती है। हम तो पंचगिनी घूमने आए हैं; भजन करने आए हैं; खाने आए हैं; कथा सुनने के लिए आए हैं; आराम करने के लिए आए हैं। दो कवियों को सुन लो, पंचधूणी तपी ऐसा कहलाएगा। किसी महापुरुष को सुनो, पंचधूणी तपे ऐसा कहलाएगा।

शिवरूपी धर्म के तीन नेत्र है, 'त्रिनयनं।' 'वन्दे सूर्यशशांकवह्निनयनं।' शिव त्रिलोचन है, त्रिनेत्र है। तो धर्मरूपी शिव के तीन नेत्र सत्य, प्रेम और करुणा। वहां चन्द्र, अग्नि और सूर्य शंकर के तीन नेत्र है, इससे सिद्ध होता है कि सत्य सूर्य है, अग्नि है। प्रेम तो अग्नि है ही। प्रेमाग्नि, विरहाग्नि, वियोगाग्नि। प्रेम करो तो संभालकर करना, आग है ये।

प्रेमपंथ पावकनी ज्वाळा।

क्यों हम सत्य नहीं निभा पाते? क्योंकि अग्नि में हाथ डालना है। क्यों हम दूसरे का सत्य नहीं कुबूल कर सकते? क्योंकि अग्नि छू रहा है। लोग जानते होंगे कि इस आदमी में सत्य है, फिर भी आग होने के कारण दूर खड़े रहेंगे कि कई लपटे हमें छू न ले। नवाज़ देवबंदी साहब का शे'र है-

मज़ा देखा मियां सच बोलने का?
जिधर तू है उधर कोई नहीं!

ये तीनों सूत्रों के बारे में शायद केदार में कहा गया। फिर दोहरा रहा हूं। सत्य, प्रेम, करुणा के साथ कैसे वर्ताव रखोगे? मेरा अनुभव कहता है, सत्य के साथ चलो। सत्य के पीछे नहीं। कभी-कभी हम अपने अनुकूल सत्य का अर्थ निकाल लेते हैं। या तो हम सत्य के अनुकूल है, ऐसा दिखावा करेंगे। मेरे श्रावक भाई-बहन, सत्य के साथ चलो। खतरा वहां है। सत्य के साथ चलना बहुत मुश्किल है। तो सत्य के साथ चलना साहस है; अग्नि के साथ चलना है। राम के कई निर्णय लक्ष्मण को रास नहीं आए। भगवान तीन दिन समुद्र के तट पर अनशन पर बैठ गए, ये लक्ष्मण को रास नहीं आया। कभी दक्षिण, कभी वाम खड़ा रहा लेकिन राम का साथ नहीं छोड़ा; संग चले। अपने दिल में बात बैठे तो प्रेम के पीछे चलना। कृष्ण में प्रेम था, व्रजवासी उनके पीछे चलते थे। कृष्ण को अर्जुन से प्रेम था तो 'प्रीति पार्थेन शाश्वती' कहकर अर्जुन के पीछे चले। करुणा अपने पीछे रखो और खुद आगे चलो, ताकि करुणा पीठ थपथपाती रहे कि बेटा, आगे चल। ये जीवन की तीन गति मेरी समझ में आई है। तो सत्य, प्रेम और करुणा अग्नि है; शिव के नेत्र है।

तो बाप! पंचाग्नि विद्या पांचाल नरेश उद्दालक को देते हैं और पांचों प्रश्न के उत्तर बड़े जटिल-कठिन है। उपनिषद की बातें कठिन है ही। शांकर भाष्य इसमें भी ज्यादा कठिन है। लेकिन इन पांचों के जवाब अब 'मानस' से सुनिए। 'जीव कहां रहता है?' तो 'मानस' में एक ऐसी जगह है, जहां जाने के बाद लौटना नहीं पड़ता। वो अग्नि है, 'तजि जोग पावक देह हरि पद लीन भइ जहँ नहिं फिरे।' शबरी योगअग्नि में गई और वहां जाकर रह गई जहां से फिर लौटना न पड़े। प्रश्न उपनिषद का और जवाब 'मानस' का। 'मानस' में यदि जवाब मिल जाए तो ग्रंथों में खोजने की जरूरत नहीं। मानस का अर्थ है हृदय। और आखिरी प्रमाण माना जाता है, 'अंत:करण प्रवृत्तय:।' मैंने तो केदार की कथा से कहना शुरू कर दिया कि अंत:करण की प्रवृत्ति भी प्रमाण नहीं, भजन प्रमाण है। तो एक अग्नि है योग अग्नि जहां जाने के बाद, उस अग्नि से गुजरने के बाद जीव को आना नहीं पड़ता। शबरी को ऐसी गति मिली।

दूसरा प्रश्न, कर्मानुसार अथवा जो भी नियम हो उसके मुताबिक जीव वापस कैसे आता है? 'पुनरपि जननं पुनरपि मरणं' की जो शृंखला है, वो फिर उसे लाना, अवतरित करना, उसको प्रगट करना कैसे हो? वो अग्नि है 'मानस' में यज्ञ अग्नि। 'भए प्रगट कृपाला'; जीव कैसे आता है? पुत्र कामेष्टि यज्ञ की अग्नि से आता है। ये परमात्मा है, लेकिन मानवरूप लेकर आए; एक सामान्य जीव की तरह भगवान जीए। वर्ना जिससे काल भी डरे, वो गुरु से क्यों डरे? एक जीवपना है। तो जीव कैसे आता है, उसकी विद्या 'मानस' ने बताई, पुत्र कामेष्टि यज्ञ करो। तो यज्ञ का अग्नि ये दूसरी विद्या है लाने की।

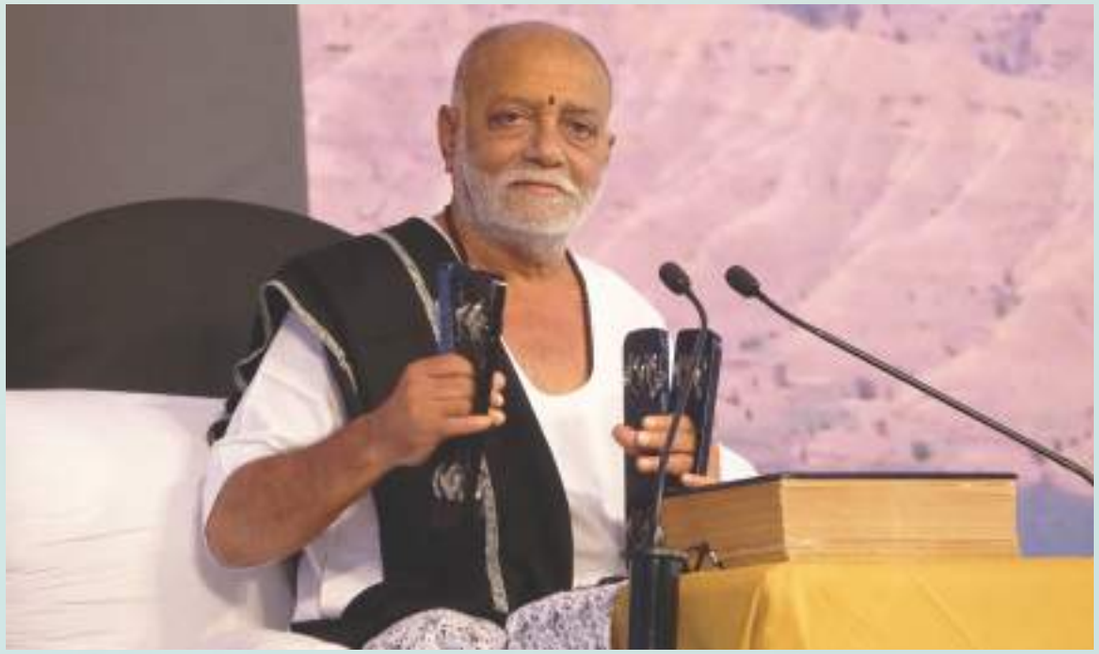

तीसरा प्रश्न है, वहां सब भर क्यों नहीं जाता? वहां जगह तो सीमित है, तो फिर इतने लोग कहां रहते हैं? तो भगवान इनमें से चुनते हैं कि भीड़ न हो जाए और ऐसी चेतनाओं की जगत में जरूरत है इसीलिए-

'कबहुँक करि करुना नर देही।
देत इस बिनु हेतु सनेही।।'

ये तलगाजरडी निवेदन है; कोई अपने नाम चढ़ाए तो जरा मुस्कुरा देना। इसका मुझे आनंद है, गुरुकृपा है। मैंने कुछ कथाओं पहले कह दिया कि मैं रामकथा नहीं गा रहा हूं, आपके सामने मैं गुरु को गा रहा हूं। रामकथा गाने की औकात नहीं है। मैं तो गुरु को गा रहा हूं। और जो गुरु को गाएगा उसमें सबकुछ आएगा।

कबहुँक करि करुना नर देही।

तो ये तीसरा जवाब 'उपनिषद' का, मेरी समझ में। और वो ऐसे सद्गुरुओं को भेजता है, जो मोक्षवादी नहीं है।

हरिनां जन तो मुक्ति न मागे,
मागे जनम जनम अवतार रे;
नित सेवा नित कीर्तन ओच्छव,
निरखवा नंदकुमार रे.

बार-बार ऐसे भेज देता है, ताकि जगह खाली रहे।

देवयान मार्ग और पितृयान मार्ग कौन-से बिंदु से बिलग पड़ते हैं? 'मानस' में देवयान मार्ग का एक अर्थ है ज्ञानमार्ग। ये थोड़ा ऊंचा मार्ग है। धरती पर चलने की बात नहीं है; थोड़ी ऊंचाई है। कृपाण पड़ी है धरती पर और उसकी धार पर चलने का एक मार्ग है देवयान मार्ग। और जितना ऊंचे उठो, गिरने की संभावना है। तो देवयान मार्ग है ज्ञानमार्ग। और पितृयान मार्ग है भक्तिमार्ग। हम मातृ और पितृ दोनों जगह 'भक्ति' शब्द का ही प्रयोग करते हैं। मातृभक्ति, पितृभक्ति, राष्ट्रभक्ति, गुरुभक्ति। हमारे से जो श्रेष्ठ है, उसके प्रति 'भक्ति' शब्द को लगाया गया। भले दूसरी जगह पर है उपनिषद में पर 'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव।' ये भक्तिवाला मार्ग है पितृयान मार्ग।

उपनिषदकार कहते हैं, दोनों मार्ग कहां से बिलग होते हैं? तो तुलसी कहते हैं, बिलग नहीं होते, बिलग दिखते हैं। 'भक्तिहि ग्यानहि नहि कछु भेदा।' दोनों एक दिखते हैं; दोनों का कुल एक है। ये सब शास्त्रीय बात है। लेकिन मुझे तो 'मानस' पर जवाब चाहिए और भेद नहीं है यहां पे। तुलसी तो सगुण-निर्गुण में भी भेद नहीं रखते। 'अगुनहि सगुनहि नहि कछु भेदा।' भेद नहीं है, समांतर है। ज्ञान और भक्ति समांतर जा रहे हैं, बीच में थोड़ा अंतर है। भेद नहीं है। चाहे ज्ञानमार्ग हो या भक्तिमार्ग; भेद है ही नहीं, ऐसा तुलसी कहते हैं। 'मानस' भेद नहीं करता। चाहे तुम्हारा प्रेममार्ग हो, विचार का मार्ग हो, क्या फ़र्क पड़ता है?

कितनी आहुति में जलरूप आहुत द्रव्य पुरुषरूप में प्रगट होता है? उपनिषद का इसका जवाब सरल है। लेकिन व्यासपीठ की अपनी एक मर्यादा है। उसको योषाग्नि कहा है, जिससे पुरुष प्रगट होता है। ऋषि निर्भीक है, निर्दंभ है इसीलिए स्पष्ट कहता है। आप पढ़ लेना। मैं उसमें नहीं जा पाऊंगा। क्योंकि मेरी तुलसी मर्यादा है कि जलरूप द्रव्य कितनी आहुति के बाद पुरुषरूप में प्रगट होता है? ये पूरी एक प्रक्रिया अथवा उसको भी कह दो, 'पुत्र कामेष्टि यज्ञ'; शब्द तो 'काम' जोड़ दिया ना तुलसी ने! पुत्रेष्टि यज्ञ कहे तो भी काम तो आएगा ही। 'जनम हेतु कह सब पितु माता।' लेकिन पुत्र कामेष्टि यज्ञ करवा गया। 'पुत्र काम सुभ जग्य करावा।' यहां काम जोड़ा। लेकिन काम शुभ है, अशुभ नहीं। पूरी प्रक्रिया को छांदोग्य ने यज्ञरूप दे दिया। धन्य है मेरे बुज़ुर्ग ऋषि मुनि! जिसमें से पुरुष प्रगट होता है।

पुरुष प्रसिद्ध प्रकास निधि प्रगट परावर नाथ।
रघुकुलमनि मम स्वामि सोइ कहि सिवँ नायउ माथ।।

वहां आहुति की संख्या बताई है पांच आहुति। बड़ा अद्भुत विश्लेषण है। 'योषा वा अग्निगौतम' कहकर पूरी प्रक्रिया का उल्लेख किया है। उसीमें से परम पुरुष प्रगट होता है; कभी भगवान कृष्ण, कभी भगवान राम। परमतत्त्व का प्रागट्य होता है, उसकी विद्या 'मानस' में ऐसे संदर्भ में भी प्राप्त होती है। अथवा स्पष्ट कहे तो 'जनम हेतु सब कह पितु माता।' और पंच आहुति ही क्यों कहा? यज्ञकुंड के पास बैठे हो दो-तीन बावालोग तो बात करने जैसी है, जो ये अग्नि पचा पाए।

तो ये पंचाग्नि विद्या 'छांदोग्य उपनिषद' और 'बृहदारण्यक उपनिषद' में आई उसके जवाब मुझे गुरुकृपा से 'मानस' में प्राप्त होते हैं; मेरे लिए ये पर्याप्त है। उसके जवाब मुझे समझ में भी नहीं आते और आजके काल में कठिन भी है। दादाजी ने टिप्पणी की है, उसकी तो मैं समझ जाऊं। लेकिन है बड़ा क्लिष्ट; उसमें मत जाओ।

थोड़ा कथा का क्रम ले लूं, उससे पहले आपके कुछ प्रश्न। 'बापू, आपका पुरुष श्रोता तपेला है और स्त्री श्रोता तपेली है। तो बापू आप क्या है?' मैं उसमें न पका हुआ अन्न हूं! खूब खाओ। मेरे बच्चों, व्यासपीठ को खूब खाओ, खूब पीओ। राहत इन्दौरी का शे'र है-

मेरे बच्चों खूब दिल खोल के खर्च करो,
मैं कमाने के लिए अकेला काफी हूं।

नीतिनभाई वडगामा का एक पद है, 'साहिब लाभ-शुभना दाता।' तो मेरे बच्चों, मेरे यारों, मेरे बाप, साहब, खूब खर्च करो। तपेला-तपेली में रामकथा के सूत्रों को पकाकर खूब खाओ। यार! छप्पन भोग तो हवेली में, ठाकुरजी के मंदिर में, श्रीनाथजीबावा के यहां, धजाजी जाए वहां भी छप्पन भोग होते हैं, हमारे लिए तो नव दिन की हर एक कथा छप्पन भोग है। खूब खाओ छप्पन भोग। शून्य पालनपुरी साहब की गज़ल मुझे दी है-

हरदम तने याद करुं ए दशा मळे।
एवुं रुदन न आप के जेनी दवा मळे.

मैं सदा तुझे याद करूं, ऐसी दशा मिले। ऐसा रुदन न दे कि जिसकी कोई दवाई मिले, वरना हमारा रुदन खत्म हो जाएगा।

राखो निगाह शून्यना प्रत्येक धाम पर,
संभव छे त्यां ज कोई रूपे खुदा मळे।

किसी ने पूछा है, 'अवकाश मिलते ही मैं सहपरिवार कथा में आने की ताक में रहता हूं, लेकिन कुछ समय से नज़र सी लग गई है! घर में क्रोधाग्नि का निवास हो गया है! कभी-कभी तो वो भडाग्नि का रूप लेती है! दु:ख तो तब होता है जब इस भडाग्नि के कारण हमारी जठराग्नि प्रभावित होती है। ऐसा क्या करे कि क्रोधाग्नि विवेकाग्नि में बदल जाए? कुछ कहे।' बाप! मेरा सीधा-सादा जवाब है, क्रोधाग्नि हो तब उसी समय प्रतिक्रिया न दो। थोड़ा मौन रहो, चुप जाओ; वो भी मुंह बिगाड़कर नहीं, मुस्कुराते हुए चुप हो जाओ। मेरी व्यासपीठ ने कई बार कहा कि क्रोध अंधेरा है और अंधेरे में निर्णय करने में बड़े-बड़े समझदार भूल कर देते हैं। अंधेरे को हटने दो। विवेक के सूरज को निकलने दो। चुप रहना ही ठीक है। गोरखनाथ ने कहा, सामनेवाला आग बने, तो तू पानी बन जा। तो धीरे-धीरे क्रोधाग्नि शांत होती जाएगी। किसी की नज़र लग गई है तो 'मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवऊ सो दशरथ अजीर बिहारी।।' 'जै जै जै हनुमान गोसांई। कृपा करौ गुरुदेव की नाई।।' उसका मन में स्मरण करो। धीरे-धीरे ठीक हो जाएगा। जठराग्नि प्रभावित होती है, उसमें भूख नहीं लगती है तो जो शब्द सुने वो मेरे देह के बारे में बोला है, मेरी आत्मा के बारे में कोई कुछ नहीं कह सकता, ऐसा सोचकर हटा दो। और कोई क्रोध करे और तुम्हारी जठराग्नि बहुत बढ़ती हो, भूख लगती हो, तो कथा में आ जाओ। प्रसाद ब्रह्म है, उसे बिगाड़ो नहीं।

किसीने पूछा है, 'बापू, पतंगे को अग्निस्नान में आनंद क्यों आता है?' किसने कहा? पतंगे को जलने में आनंद आता है, ये हमारा आरोपण है; किसी पतंगे को पूछो। उसे अच्छे नाम दिए गए हैं, कुरबानी, समर्पण, प्रेम में जान निछावर करना। लेकिन पतंगा जलने में आनंद ले रहा है कि क्या है? ये तो पतंगे को ही पता है। लेकिन कविताओं में उसकी प्रीत उसका समर्पण गाया गया है।

कल हम चर्चा कर रहे थे 'मानस' के आधार पर 'सुन्दरकांड' अंतर्गत माँ जानकी की पंचाग्नि तपस्या की। सूर्य, मेघ, पृथ्वी, पुरुष और राक्षसी याने योषिताएं, जो पांच प्रकार की अग्नि माँ जानकी को तप्त कर रही है। 'रामचरितमानस' में तलगाजरडी दृष्टि में पांच व्यक्ति ने पंचधूणी तपी है। एक सीता; दूसरा पात्र है दक्षकन्या सती; श्री भरतजी; श्री हनुमानजी; मेरे बुद्धपुरुष कागभुशुंडि; ये पांचों ने पंचाग्नि तपी है। इन चरित्रवान चरित्रों में कई प्रकार की अग्नि है 'मानस' में। पांच तो मैंने मुख्य-मुख्य बता दी। काम, क्रोध, लोभ, हर एक

केवल अग्नि ही नहीं, जहां भी कष्टदायक साधन है वहां पंचाग्नि तप है। पंचाग्नि तप से शरीर शुद्धि होती है; चित्त उग्र हो जाता है। पंचाग्नि तपनेवाले का चित्त बहुत उग्र होता है। साधना से शरीर विकृत हो जाए तो समझो, आपकी साधना विपरीत मार्ग पे जा रही है। साधना में शरीर विकृत नहीं होना चाहिए। साधना का तो अर्थ है, वर्ण बदल जाए। कलियुग में आज की विकृत साधना मैं देखता हूं, कई लोग विकृत होते हैं। स्फूर्त रखे वो साधना। उसकी साधना को मैं वंदन करता हूं लेकिन उसके चेहरे बदल जाते हैं, आंख बदल जाती है। इसीलिए मैं घूमघूम करके कहता हूं, हरिनाम लो। आपका तेज बढ़ेगा, स्फूर्ति रहेगी।

विकृतियां अग्नि है। सती, भरत, हनुमान और भुशुंडि ये चार महिमावंत पात्रों ने किस रूप में पंचाग्नि को तपाया, जो हमारे जीवन में प्रेरणादायी हो सकता है। तो प्रगट-अप्रगट अथवा चौपाईयों में देखे तो इन पांचों ने पंचधूणी तपी है; यही है 'मानस' की पंचाग्नि।

तो भगवान का नाम जो अग्नि है, जिसकी नाम महिमा के रूप में थोड़ी चर्चा कल हमने की थी। उसके बाद कथा की पूरी महिमा तुलसी ने गाई। अनादि सर्जक भगवान शंकर जिसने 'रामचरितमानस' की रचना की और 'मानस' को अपने हृदय में रखा। समय पाते उन्होंने भवानी को कथा सुनाई। वो ही कथा भुशुंडि को मिली शिव की कृपा से और भुशुंडि से गरुड ने सुनी। फिर कथा धराधाम पर तीर्थराज प्रयाग में आई, जहां भरद्वाजऋषि ने याज्ञवल्क्य को सुनाई। वो ही कथा गोस्वामीजी कहते हैं, वराह क्षेत्र में मैंने मेरे गुरु से सुनी। गुरु ने बार-बार ये कथा कही तब जाके मेरी मति के अनुसार मेरी समझ में कुछ कथा ऊतरी। और गोस्वामीजी ने निर्णय किया कि मैं इस कथा को भाषाबद्ध करूंगा, मेरे मन को बोध हो इसलिए। सोलह सौ इकत्तीस की साल में 'रामचरितमानस' का प्रकाशन हुआ। शिव के हृदय में जो शास्त्र भावबद्ध पड़ा था, उसे भाषाबद्ध किया गया। और ब्रह्मलीन साकेतवासी पंडित रामकिंकरजी महाराज कह रहे हैं, तुलसी ने चार संवाद के चार घाट बनाए। ज्ञानघाट जहां महादेव भवानी को सुनाते हैं। कर्म का घाट जहां विवेकी याज्ञवल्क्य एक प्रपन्न और शरणागत भरद्वाज को सुनाते हैं। तीसरा घाट उपासना का घाट जहां बाबा भुशुंडि नीलगिरि पर्वत पर सुनाते हैं। तुलसी कहते हैं, मैं तो केवल दीनता और शरणागति के घाट पर बैठकर मेरे मन को कथा सुनाता हूं।

तुलसीजी शरणागति के घाट से कथा का आरंभ करके हमें कर्म के घाट पर ले जाते हैं। उसका अर्थ तलगाजरडा को ये समझ में आता है कि शरणागति के बिना ठीक कर्म हो ही नहीं सकता। शरणागति ही विशुद्ध कर्म करने की प्रेरणा देती है। गोस्वामीजी कहते हैं, प्रतिवर्ष प्रयाग में मकर में सूर्य होता है तब कुंभस्नान होता है। सबसे बड़ी साधना प्रयाग के कुंभ में पंचधूणी की साधना होती है। सभी महापुरुष पंचधूणी तपते थे और फिर साधना में अवकाश मिलता था तब सब मिलकर चर्चा करते थे। सबसे ज्यादा चर्चा होती थी ब्रह्मनिरूपण विषय पर। कबीर साहब तुलसी के कार्यकाल से थोड़े पहले हुए। कबीर साहब का जो दर्शन है ब्रह्मनिरूपण में उसको तुलसीदासजी यहां ला रहे हैं। फिर धर्म का विधिविधान, धर्म का संविधान, साधन उसकी बृहद चर्चा है। मूल में है ब्रह्म-निरूपण। मेरा मनोरथ है, 'मानस ब्रह्म-निरूपण' करूं। कबीर साहब के ब्रह्म निरूपण की कथा बहुत कठिन-जटिल है। बीजक को साथ में ले तो सरल हो जाता है। मैं कुछ ग्रंथ साथ रखता हूं, उसमें बीजक भी साथ रखता हूं। बहुत मदद मिलती है बीजक से। जैसे मीरां का कोई पंथ नहीं, वैसे तुलसी का पंथ नहीं; कोई परंपरा नहीं।

ना कोई गुरु, ना कोई चेला।
मेले में अकेला, अकेले में मेला।

तो कबीर, नरसिंह महेता तुलसी से पहले हैं। इसीलिए पूर्व बुद्धपुरुष की बातें तुलसी के ग्रंथ में आना स्वाभाविक है, क्योंकि उसके सब द्वार खुले हैं; अपनी अनुभूतियां लिखते हैं। 'वैष्णवजन' पद पर मैं बोला हूं। 'वैष्णवजन तो तेने कहीए जे पीड पराई जाणे।' नरसिंह ने जो अठारह सूत्र दिए; तुलसी में अठारह आए हैं। तो तुलसी और नरसिंह के तुलनात्मक प्रवचन का मैं निमित्त बना था। सब लक्षण हैं, क्योंकि सभी शयाने एक मत। तुलसी ने नरसिंह मेहता को पढ़ा न हो शायद लेकिन सभी बुद्धपुरुष की चेतना एक-दूसरे से मिलती-जुलती है। परंपरावाले लड़ाई करते हैं कि कबीर का राम बिलग है, तुलसी का राम बिलग है। 'रामायण' में केवल ब्रह्म निरूपण नहीं है; कई निरूपण है। भगति निरूपण है। ब्रह्म निरूपण जो समझ गया, तो भक्ति के बिना हो ही नहीं सकता।

एक मास का कल्पवास। एक बार के कुंभ के बाद सब महापुरुष विदा लेने लगे। याज्ञवल्क्य महाराज ने भरद्वाजजी से बिदा मांगी तब याज्ञवल्क्यजी ने चरण पकड़कर प्रार्थना की, प्रभु, रामतत्त्व के बारे में मुझे बताओ। याज्ञवल्क्य जिज्ञासा सुनकर मुस्कुराए और बोले, आप रामतत्त्व को पूर्णरूप में जानते हैं। मूढ़ की तरह प्रश्न करके मेरे से रामरहस्य समझना चाहते हैं। आप जैसा रहस्य जाननेवाला साधु मिल जाए तो रामकथा सुनाऊंगा। याज्ञवल्क्यजी रामकथा का आरंभ करते हैं, उसकी चर्चा कल करेंगे।

अग्निकसौटी के बिना रामराज्य नहीं हो सकता

'मानस-पंचाग्नि', गुरुसंकेत और गुरुकृपा से लिया गया ये प्रसंग; उसमें थोड़ी ओर यात्रा करें संवादी सूर में। कुछ प्रश्न इससे जुड़ा हुआ है वहीं से शुरू करूं। 'बापू, कल कहा गया कि परीक्षा के साथ एक शब्द कायम जुड़ा है और वो है 'अग्निपरीक्षा।' लेकिन बाप! मेरी समझ में किसी भी प्रकार की परीक्षा, कहीं भी की गई परीक्षा, परीक्षा सदैव अग्निपरीक्षा ही होती है। रूप भिन्न होते हैं। एक छात्र दसवीं श्रेणी में परीक्षा दे उसको भी लगता है, ये मेरी अग्निकसौटी है। कोई बारहवीं श्रेणी या तो कोई भी श्रेणी की परीक्षा दे या तो जीवन के संघर्ष में आती कसोटियां ये सब अग्निपरीक्षा ही तो है। परिवार में कलह, व्यक्ति-व्यक्ति में असंतुलन अपने विचारों का उहापोह, तर्कजाल, खबर नहीं, किन-किन परीक्षाओं से हम गुजरते हैं! और ध्यान दें कि जब तक अग्निपरीक्षा हम नहीं देते तब तक रामराज्य संभव नहीं है। जानकी की अग्निपरीक्षा के बाद रामराज्य हुआ है। जिसको अंत:करण में रामराज्य प्राप्त करना है उसको अग्निपरीक्षा देनी ही होगी।

कई प्रकार की परीक्षाएं हमारी हो रही है। सूर्य अरबों, खर्वों मिल दूर है लेकिन हमारा सूर्य से अनुबंध है। सूरज ढलता है, अंधेरा होने लगता है और हमारी आंख में नींद आनी शुरू हो जाती है। क्योंकि सूर्य के साथ हमारा अनुबंध है। यद्यपि बहुत दूरी है, कई प्रकाश वर्ष दूर है सूर्य। सूरज निकलता है तो कैसा भी प्रमादी आदमी धीरे-धीरे करवट बदलने लगता है; भले सोया रहे, क्योंकि उसका उगना, हमारा उठना ये सेतु है, एक अनुबंध है। शास्त्र की कोई भी बात, हमारे हृदय से अनुबंध रखती है। रामकथा के कोई भी प्रसंग, कोई भी परीक्षा, कोई भी अग्निविद्या हमारे दिल से संबंध रखती है; हमें कहीं ना कहीं छूती है, वर्ना लोग रामकथा नहीं सुनते। ये अनुबंध है। अनुबंध नहीं होता तो ये अरण्य रुदन हो जाएगा। क्यों आप बार-बार कथा सुनते हैं? क्यों मैं बार-बार यहां पोथी बांधता हूं? कुछ दिनों में फिर पोथी खोलता हूं? क्यों सूर्य हमसे इतना दूर होते सूर्यवंशी राम का भी हमारे दिल से नाता है? उसकी कथा के हर प्रसंग, हर पात्र, हर विचार कहीं ना कहीं हमसे संबंध रखते हैं। इसीलिए कभी कोई प्रसंग आएगा, आपके दिल को छुएगा, आपकी आंख नम हो जाएगी; क्योंकि ये घटना, ये सूत्र, ये शब्दावलि, ये प्रसंग, ये पात्र आपके दिल से अनुबंध है उसका।

'अग्निपुराण' का एक बहुत प्यारा सूत्र है, ये भी उद्घाटित कर दूं। एक चर्चा बहुत रहती है कि आत्मा कहां रहती है? जिसको ओर कोई काम नहीं, वो ऐसी ही चर्चा करते हैं! आत्मा कहां रहती है? 'अग्निपुराण' पढ़िए। 'अग्निपुराण' को विश्व का एक शब्दकोश माना है, साहब! 'अग्निपुराण' अद्भुत शास्त्र है। 'अग्निपुराण' में सब पोज़िटिव थिंकिंग है। प्राचीनतम शास्त्र है 'अग्निपुराण।' अग्निविद्या की चर्चा चल रही है, पंचाग्नि की चर्चा चल रही है। केन्द्र में अग्नितत्त्व है, इसीलिए चारों ओर देखना पड़ेगा। 'अग्नेयः पुराणेऽस्मिन् सर्वविद्याः प्रदर्शिताः।' शास्त्रकार कहता है, 'अग्निपुराण' में सभी विद्या का दर्शन दिया गया है। बहुत अद्भुत बातें 'अग्निपुराण' में कही है।

'अग्निपुराण' ने इस प्रश्न का जवाब दिया है, आत्मा कहां रहती है? हमारे देहातों में, मैं छोटा था तब कुछ लोग बैठे-बैठे ऐसी चर्चा करते थे। मेरी रुचि रहती थी ऐसी कोई शुभ वार्ता में तो मैं भी वहां बैठ जाता था। तो 'आत्मा कहां रहती है?' भटकती है! ये बड़ा गहन प्रश्न है।

कोई रे बतावो मने मारो जोगी,
जोगी मारो काया घडनार रे।
जोगीडो मळे तो अमे जीवशुं,
नहीं तो छोडुं मारा प्राण।
हुं रे मृगली ने गुरु मारो पारधी।

गुरु को पारधी कहना ये विशेष अवस्था है। गुरु मेरे और तुम्हारे दौड़ रहा है, शब्दसंधान करके, वचनसंधान करके, वाणी का अनुसंधान करके, अनुभव का अनुसंधान करके भोले मृग को खोजता है; कहीं औरों के हाथों का शिकार न हो जाए; कहीं किसीका अभक्ष्य भक्षण न कर जाए। इसीलिए बुद्धपुरुष खोजता है किसी आनंद को, किसी सारीपूत को। रामानंद खोजते हैं किसी कबीर को। राजचंद्र खोजते हैं किसी गांधी को। त्रिभुवन दादा खोजते हैं किसी मोरारि को। गुरु की खोज परमात्मा नहीं है; गुरु की खोज है योग्य आश्रित। गुरु को परमात्मा की खोज की क्या जरूरत? गुरु

स्वयं परमात्मा है। गंधर्वराज कहता है, 'नास्तितत्त्वं गुरोपरं गुरुः साक्षात् परब्रह्म।' गंधर्वराज कहता है, गुरु से उपर कोई तत्त्व नहीं। ये विद्वत्ता का प्रदेश नहीं है, ये साधुता का प्रदेश है। गार्गी को प्रणाम करके आओ मार्गी के पास। राम पारधी बनते हैं 'मानस' में किसी मारीच के लिए क्योंकि अभी उसे आधा बाण लगा है। गुरु का आधा बाण लगा हो ऐसा एक मारीच है। बिना फणे का बाण लगा था, उसमें रामाकार चित्त हो गया था। राम को लगा, अब उसकी दशा आश्रित की हो गई है, मुझे परम प्रीतम समझता है, अब उसके पीछे मैं दौडूं। और ध्यान देना, भगवान को दौड़ने दो, तुम मत दौड़ो। कभी-कभी यात्रा गलत हो जाती है। मोगल वंश के आखिरी बादशाह ज़फ़र की गज़ल; जिसको देशनिकाल किया गया, बर्मा में पनाह ली, जिसको मैं सलाम करके आया हूं।

आये थे चार दिन उम्र-ए-दराझ पे,
दो आरझू में कट गई, दो इंतज़ार में।
कितना है बदनसीब ज़फ़र दफ़न के लिए
दो गज ज़मीन भी ना मिली।

मैं कितना बदनसीब हूं कि मेरी मातृभूमि भारत में मुझे दफ़नाने के लिए दो गज ज़मीन भी न मिली! बहुत पीड़ गाई उसने।

आंधियां गम की चलेगी तो संवर जाऊंगा।
मैं तेरी झुल्फ नहीं हूं कि बिखर जाऊंगा।

गम की आंधी चले, तो आदमी बिखर जाए लेकिन मैं तेरी झुल्फ नहीं हूं कि बिखर जाऊं; मैं ओर संवर जाऊंगा जितनी पीड़ा और गम आए।

मुझको शूली पर चढ़ाने की ज़रूरत क्या है?
मेरे हाथों से कलम छीन लो, मर जाऊंगा।
मेरे मुख से चौपाई छिन लो, मर जाऊंगा।

कल सायंकाल को मुझे पूछा गया कि बापू, आपने कहा कि हम जो छोटी-बड़ी करते हैं वो भूल है, पाप क्या कर सकते हैं हम? मैं यह नहीं कहता कि पाप करें, भूल करें, लेकिन हो जाए तो ग्लानि न करे। पाप करने की छूट नहीं दी है लेकिन हम जीव है, भूल हो जाती है। शंकराचार्य कहते हैं, 'मत्समः पातकी नास्ति।' मेरे समान कोई पापी नहीं है। लेकिन मैं क्यों डरूं? क्योंकि तेरे समान पाप से मुक्त करनेवाला कोई ओर नहीं है। पाप नहीं करूंगा तो पाप कैसे मिटायेगा तू? तेरी परीक्षा कैसे होगी?

तो निकट से निकट वो तत्त्व है और दूर से दूर भी वो ही तत्त्व है, ऐसा उपनिषद कहता है। तो मारीच को बाण मारना था। आधा बाण लगा था। राम ने सोचा, मुझे परम प्रीतम कहे। आज उसका पियु मृग मारीच को बाण मारने के लिए पीछे दौड़ा। गुरु शिकार करता है, खोजता है; कलेजा चीरता है गुरु। और हमें खोज नहीं करनी है, किसी भी कुल में जनम हुआ हो एक बार मारीच की तरह समर्पित हो जायेंगे तो राघव दौड़ेंगे। सीता कोई सामान्य महिला नहीं है कि राम को जिद्द करके कहे, जल्दी जाकर लाओ। मेरी माँ जानकी कहती है, भक्ति कहती है कि अब उसका प्रेम पक गया है राघव, तुम उसके पीछे दौड़ो। तुम्हारे पीछे वेद दौड़ते हैं, अब तुम उनके पीछे दौड़ो।

मार्गीओं के घराने ऊंचे हैं गार्गीओं के घराने से भी। गार्गी पहाड़ों में, विमान में; मार्गी पैदल। मार्गी और गार्गी दो तट के किनारे हैं। पहाड़ पर हो वो नीचे आ सकते हैं, लेकिन ज़मीन पर हो वो नीचे नहीं आते क्योंकि ज़मीन की एक गरिमा है। तो मार्गी धरती पर चले, लेकिन घराना ऊंचा है। गार्गी आकाशमार्ग में चलती है लेकिन तुलसी ने कहा, 'ऊंच निवास नीच करतूती।'

तो 'अग्निपुराण' की हम चर्चा कर रहे थे, 'अग्नियेः पुराणेऽस्मिन् सर्वविद्याः प्रदर्शिताः।' विश्व का शब्दकोश है 'अग्निपुराण'; सभी चिंतन पोज़िटिव है इसमें। माताओं की इतनी आलोचना हो रही है! कभी 'अग्निपुराण' पढ़ लो; माताओं का जो पोज़िटिव चिंतन पेश किया है। प्राचीनतम पुराण है 'अग्निपुराण।' अग्निदेव ने खुद अपने मुख से वशिष्ठ को संबोधन करके ये कथन किया है इसीलिए अग्निविद्या वशिष्ठ को दी और अग्निदेव स्वयं बोलते हैं। इसीलिए उसका नाम हुआ 'अग्निपुराण।' प्रधान श्रोता वशिष्ठ है। 'अरुंधती अरु अग्नि समाऊ।' तुलसी उसका संकेत करते हैं, रथ में अग्निहोत्री की सब सामग्री साथ में थी। वशिष्ठ अग्नि उपासक है।

आत्मा कहां रहती है, उसका उत्तर 'अग्निपुराण' ने दिया है। 'अग्निपुराण' ने स्पष्ट कहा है कि आत्मा हृदय में रहती है। कृष्ण हमारी आत्मा है और वो कहां रहता है? 'ईश्वरः सर्वभूतानां हृदेशेऽर्जुनतिष्ठति।' हनुमान की आत्मा राम है। कहां रहती है ये आत्मा? 'जासु हृदय आगार बसहि राम सर चाप धर।' रावण की आत्मा जानकी है, मंदोदरी नहीं। वो केवल जानकी को आत्मा समझकर जानकीमय है।

तो जानकी आत्मा है। राम आत्मा है। इसलिए तो कहा, 'गिरा अरथ जल बीचि सम।' जानकी की आत्मा राम है। राम ब्रह्म है, परमात्मा है, इसीलिए पूरा जगत उसे आत्मरूप दिखता है। राम की आत्मा संपूर्ण जगत। जीव-जगदीश भिन्न नहीं है। विकारमुक्त आत्मा ये परमात्मा है। विकारयुक्त आत्मा ये जीवात्मा है। जो विकारों से ग्रसित है वो जीवात्मा और अविकारीपणा

परमात्मा का है। और वो रहता है हृदय की गुहा में। दो टूक उत्तर मिलते हैं 'अग्निपुराण' से। 'अग्निपुराण' कहता है, ब्रह्म सबकी आत्मा है और इस ब्रह्म से आकाश पैदा हुआ। आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथ्वी, पृथ्वी से सूक्ष्म जीव फिर स्थूल शरीर। ऐसे पृथ्वी का विकास बताया। ऐसे घूमते-घूमते ब्रह्मरूपी आत्मा में सब विलीन हो जाता है। ये पूरा चक्र है। बड़े कठिन से कठिन आत्मतत्त्व के उत्तर 'अग्निपुराण' में प्रदान किए हैं।

मेरे भाई-बहन, 'अग्निपुराण' में हम जो विषय लेकर बैठे हैं उसके बहुत बड़े समाधान मिलते हैं। हर एक परीक्षा अग्निपरीक्षा है और सब घटना का अनुबंध हमारे हृदय से है। सूरज माईलों दूर है। सुबह होती है और हम उठते हैं। सूरज ढलता है तो हम सो जाते हैं; इतना अनुबंध है। शास्त्र इसीलिए प्रिय लगते हैं कि उसकी कोई घटना, कोई पात्र, कोई प्रसंग, कोई सूत्र हमारे हृदय से अनुबंध रखता है, वरना तो अरण्यरुदन हो जाएगा। मेरी सात सौ कथा फेईल हो जाएगी। कोई अर्थ नहीं रहता इतनी कथाएं गाई। नहीं, हम क्यों बार-बार सुनते हैं? क्योंकि कोई न कोई जोड़ है हमारे हृदय के साथ। इसीलिए शास्त्र सुनो तो केवल विचार न करो, उसका स्वाद लेकर उनमें ऊतरो। आदमी अंदर ऊतरे। गांधी ने केवल सत्य का विचार न किया, सत्य में ऊतरे। विनोबा ने पवनार में केवल ब्रह्मविद्या का विचार न किया, ब्रह्मविद्या में ऊतरे। चलो, विचार भी अच्छा है लेकिन आदमी अंदर न ऊतरे तब तक सब झूठा।

तो हर एक कसौटी हमारे जीवन में आती है। मन का उहापोह, तर्क-वितर्क, गेरसमझ, परिवार में कलह; हर तरह परीक्षा होती है। और परीक्षा जिसकी होती है उसको अग्निपरीक्षा ही लगती है। ध्यान देना, इस जगत में जो दूसरे की परीक्षा करेगा, उसकी परीक्षा कभी ना कभी अल्लाह करेगा। प्रमाण 'मानस' है। 'रामचरितमानस' में बारह परीक्षा है। अग्निपरीक्षा तो रामराज्य की पूर्वभूमिका है। मेरा बहुत स्पष्ट मंतव्य है। तो बारह परीक्षा है 'मानस' में। चार परीक्षा 'बालकांड' में है। 'अग्नि' शब्द न लगाया हो, लेकिन सब परीक्षा अग्निप्रवेश ही है। कोई कांड खाली नहीं है बिना परीक्षा। चाहे जीवन का 'बालकांड' है उसमें भी अग्निपरीक्षा है। जीवन का 'अयोध्याकांड' युवानी में भी परीक्षा होती है। जीवन का 'अरण्यकांड' थोड़ा त्याग करके वन की ओर चले, वहां भी परीक्षा होती है। जीवन का 'किष्किन्धाकांड' आता है, वहां भी परीक्षा होती है। जीवन के 'सुन्दरकांड' में महत्त्व की परीक्षा होती है। 'लंकाकांड' में दो परीक्षा होती है और 'उत्तरकांड' में एक परीक्षा होती है।

तो 'बालकांड' में चार परीक्षा है, ऐसा तलगाजरडा को लगता है। मैं तलगाजरडा इसीलिए बोलता हूं कि कोई प्रज्ञाचोरी न कर ले। क्योंकि लोग विचार चुरा लेते हैं! नाम नहीं लेते और दुनिया को तो पता नहीं! इसीलिए मैं जान-बुझकर 'मैं मैं' करता हूं, उसका आप कुछ भी अर्थ ले। लेकिन मैं कहना चाहता हूं कि ये मेरे गुरु की कृपा है।

द्वादश परीक्षा 'मानस' में है, उसमें अंत में अग्निपरीक्षा के बाद रामराज्य हुआ है। जब तक मेरी और आपकी अग्निपरीक्षा नहीं होगी तब तक अंतरमन में प्रेमराज्य नहीं होगा; अंतरमन का संघर्ष खत्म नहीं होगा; अंतरमन में विश्राम नहीं आएगा। रामकिंकरजी महाराज ने अद्भुत बात कही कि रामराज्य की स्थापना गंगातट पर हुई, अयोध्या में नहीं हुई। अयोध्या से तो राम को निष्कासित कर दिया। लेकिन तलगाजरडा को बीच में लाऊं तो रामराज्य का प्रारंभ वहां हुआ लेकिन रामराज्य अयोध्या में नहीं हुआ, लंका में हुआ। अयोध्या में रामराज्य हो उसका कोई मूल्य नहीं है; लंका में होना चाहिए रामराज्य। अयोध्या में रामराज्य हुआ तब शांति थी। 'रामराजु बैठे त्रैलोका।' तुलसी कहते हैं, कईयों को सुख था, बहुत का शौक था। वहां अशोक नहीं है, अशोक तो लंका में है। ये बिलकुल तलगाजरडी निवेदन है। आप सोचिए, मेरा दृढ़ मत है, साहब! मेरी जिम्मेवारी के साथ बोल रहा हूं, मेरे दादा के चरणों में बैठकर बोल रहा हूं। रामराज्य का स्थापन लंका में हुआ है, माँ जानकी की अग्नि कसौटी के पश्चात्। औपचारिकता अयोध्या में है; राम राजगादी पर बैठे। फिर जानकी का दूसरी बार निष्कासन। रामराज्य में किसी का निष्कासन हो? लंका में किसी का निष्कासन नहीं है। जिसको निकाल दिया गया था उसको राज दे दिया। उसके बाद लंका में किसीका वनवास नहीं; किसी बीमारी का वर्णन नहीं। सब निर्वाण को प्राप्त कर गए। मेरी समझ बनी है, रामराज्य लंका में हुआ है।

चार बस्तु याद रखो मेरे भाई-बहन, रामराज्य अंतरमन में करना है तो पहले अग्नि के पास जाना पड़ेगा। हमारे पास अग्नि न आए तो अपने पैरों से चलकर वहां जाना पड़ेगा। जाए इतना पर्याप्त नहीं, रामराज्य के लिए अग्नि में प्रवेश करना पड़ेगा। अग्नि जलाए तो उस क्लेश को शीतल समझना। आया हुआ कष्ट मीठा समझना, तभी रामराज्य होगा। जानकी रोई नहीं कि अरर! मैं जल

गई! कष्ट आए तो उसको भी कृपा समझना; तभी रामराज्य आता है। तो अग्नि के पास जाना, उसमें समाना, उनको शीतल समझना, उसके बाद जो घटना घटेगी वो रामराज्य होगा। इस दो दोहे में स्पष्ट है कि वहां रामराज्य की स्थापना है।

बरषहिं सुमन हरषि सुर बाजहिं गगन निसान।
गावहिं किंनर सुरबधू नाचहिं चढ़ीं बिमान।।
जनकसुता समेत प्रभु सोभा अमित अपार।
देखि भालु कपि हरषे जय रघुपति सुख सार।।

जानकी राम के पास बैठी है। फूल की वृष्टि है। किन्नर गान कर रहे हैं। ये सब माहौल रामराज्य का है। प्रारंभ हुआ भील की नगरी में और स्थापना हुई असुर की नगरी में। अयोध्या में रामराज्य हो, ये कोई महत्त्व की बात है ही नहीं। वहां तो होना ही चाहिए। जानकी को न बोलने चाहिए वैसे शब्द बोले गए! तलगाजरडी निर्णय है कि रामराज्य लंका के रणमेदान में हुआ है, जहां माँ जानकी समेत रघुनाथजी बिराजमान है। जहां अशोक हो वहां रामराज्य है; जहां शोक हो वहां रामराज्य नहीं होता। तुलसी लिखते हैं कि रामराज्य हुआ तो कुछ को सुख हुआ, कुछ को दुःख हुआ। रामराज्य में दुःख? लेकिन बीज बता देते हैं कि असली रामराज्य तो लंका के प्रांगण में हुआ। राम रावण को मारने के लिए नहीं गए थे, रामराज्य की स्थापना के लिए गए थे। तो याद रखे मेरे श्रोता भाई-बहन कि अग्निकसौटी के बिना रामराज्य नहीं हो सकता। यदि अंतरमन में रामराज्य चाहे तो चाहिए अग्निकसौटी।

तो बाप! बारह अग्निपरीक्षा। चार परीक्षा है 'बालकांड' में। दो परीक्षा के केन्द्र में है सती; दो परीक्षा के केन्द्र में मेरा राघव।

जौं तुम्हरे मन अति संदेहू।
तौं किन जाइ परीछा लेहू।

शिव ने कहा, सती, आपके मन में बहुत गहरा संदेह है तो तुम जाओ, राम की परीक्षा करो। जो दूसरों की परीक्षा करने जाए उसकी भी कभी होगी। सप्तर्षि को शिव ने कहा, पार्वती के पास जाकर उसके प्रेम की परीक्षा लो। तुम दूसरों की कसौटी करो तो कभी न कभी कालांतर में तुम्हारी होगी। सावधान रहो। सती राम की परीक्षा करने गई, लेकिन ये प्रश्नपत्र ऐसा है कि सती फेईल हुई। बिलकुल झीरो मार्क्स! तो पार्वती की परीक्षा हुई। राम की परीक्षा करने गई उसमें निष्फल हुई लेकिन प्रेमपरीक्षा में पास हो गई। सप्तर्षि ने कितने मौखिक प्रश्न पूछे और पास करके सप्तर्षि गए; शिवजी को रिपोर्ट किया कि ये पास हो गई। आगे की कथा के लिए हस्त ग्रहण करो।

'बालकांड' में दो परीक्षा भगवान राम की। एक, धनुष तोड़े वो परीक्षा में पास हो और जानकी को प्राप्त करे। तो प्रश्नपत्र मौखिक और उत्तर क्रियात्मक। 'तेहि छन राम मध्य धनु तोरा।' और भगवान पास। एक क्षण के मध्यांतर में पेपर लिख दिया, पास हो गए और जानकी ने जयमाला पहना दी। चौथी परीक्षा आई, 'तेहि अवसर सुनु शिवधनु भंगा। आए भृगुकुल कमल पतंगा।' बहुत बड़ा प्रश्नपत्र आया और धनुष तोड़ा वो परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ लेकिन विष्णु के धनुष को चढ़ा दो। संपूर्ण सफल और जैसे राम को धनुष दिया तो अपने आप चढ़ गया। आचार्यरूप परशुराम ने कहा, जय हो पुत्र। 'कहि जय जय जय रघुकुल केतु। भृगुपति गए बनहि तप हेतु।' तो राम पास हो गए।

चार परीक्षा 'बालकांड' में और दो परीक्षा 'अयोध्याकांड' में। उसमें भी राम और दशरथ की दोनों की परीक्षा, वो है वचन की परीक्षा। कैकेयी के पिता को दिए हुए वचन की कसौटी आई। अब दशरथजी तो वचन में थोड़े फैल होने की तैयारी में थे लेकिन अच्छा बेटा संभाल लेता है; उसने वचन परीक्षा पास करवाली कि मैं वन में जाऊंगा; आपके वचन रहने चाहिए। तो उस परीक्षा में राघव पास हो गए और पिताजी को भी फैल होते हुए बचा लिया। दूसरी परीक्षा जो 'अयोध्याकांड' में है वह त्याग की परीक्षा थी। भरत के सामने सत्ता और सत् दोनों रख दिया गया। बड़ी-बड़ी सभाएं हुई और कहा कि दो प्रश्नों में से एक का उत्तर दो। भरत ने एक सवाल का उत्तर दिया। सत्ता नहीं, सत्। और भरत पास हो गए। बचपन में वचन की परीक्षा नहीं होती, क्योंकि बालक तो कुछ भी बोले, माँ-बाप उसके बचन की परीक्षा नहीं करते। तो 'बालकांड' बचपन है। वचनपालन की जिम्मेवारी होती है जुवानी में, 'अयोध्याकांड' में। और उसमें उत्तीर्ण हुए। जुवानी में त्याग करे वो बड़भागी है। बूढ़ापे में सब हमारा त्याग करने लगेंगे। दांत, काले बाल सब चले जाते हैं। वचन और त्याग की कसौटी 'अयोध्याकांड' में होती है।

'अरण्यकांड' में एक कसौटी है। जुवानी में यदि चरित्र में इधर-उधर हो तो क्षम्य है। आदमी का एक नशा होता है; जुवानी में सब चले। लेकिन 'अरण्यकांड' वानप्रस्थी का कांड है। जब आदमी तपस्या की ओर जाए तब चरित्र की कसौटी होती है। युवानों युवानी में चरित्रवान रहे ये बहुत अच्छा है। लेकिन ज्यादा अपेक्षा भी न रखो। ये उम्र भी ऐसी है। प्लस पोईन्ट लो कि युवानी कथा सुन रही है! टीका क्यों करते हो? लोग कहते हैं, बच्चें क्लब में जाते हैं! लेकिन बच्चें कथा में भी आते हैं। वानप्रस्थी की चरित्र की कसौटी है। इसीलिए सुंदर स्त्री बनकर शूर्पणखा आई और राम-लक्ष्मण दोनों चरित्र की परीक्षा में पास हो गए। मुझे कहने दो साहब, शूर्पणखा भी पास हो गई। चरित्र की कसौटी वहां है कि आप चरित्रवान हो और दूसरा चरित्रहीन हो और तुम आनंद करो कि ये चरित्रहीन है और मैं चरित्रवान; उसकी खुशी मनाओ तो अपने चरित्र में आप पास नहीं हो। आप चरित्रवान हो तो दूसरों को भी चरित्रवान बना दो, वहां चरित्र की कसौटी है। राम-लक्ष्मण ने शूर्पणखा को भी सुंदर बना दिया। वो तो नकली सुंदरी बनकर आई थी, लेकिन सुंदर बनाई गई विचारों में। लंका में जाकर वो बोली है अद्‌भुत! चरित्रवान निकट आनेवाले को भी सुंदर बना देता है। जगत के खेल में जीतनेवाला हारे पर मुस्कुराता है। आध्यात्मिक जगत में जीत उसकी है जो दूसरे को हारने न दे। तो तलगाजरडी दृष्टि में चरित्र की परीक्षा होती है 'अरण्यकांड' में।

'किष्किन्धाकांड' में एक परीक्षा आई, वो थी मैत्री की परीक्षा। उसमें सुग्रीव फैल हो गया, 'राम काज सुग्रीव बिसारा।' आठ पंक्तियों में पूरा मित्राष्टक रामजी ने उठाया। 'मानस-मित्राष्टक' पर मैंने कथा कही है। लोग मैत्री तो बहुत करते हैं; मेरे राम ने निभाई लेकिन जो चुक गया था उसको थोड़ा डर दिखलाकर फिर कृपागुण से पास कर दिया। सुग्रीव को आखिर में पास कर दिया।

'सुन्दरकांड' में हनुमानजी की परीक्षा हुई। 'जात पवनसुत देवन्ह देखा।' बड़े-बड़े परीक्षक आए देवता और उसको नियुक्त किया। कंडक्टर के रूप में सुरसा को कि जाओ, हनुमान जा रहा है, उसकी परीक्षा करो। सुरसा आई। बहुत बड़ा प्रश्नपत्र था ये! मुख फैलता जा रहा है लेकिन इस प्रश्नपत्र में हनुमानजी पास हुए। उसने सर्टिफिकेट दिया, 'तुम्ह बल बुद्धि निधान।' हनुमानजी को प्रमाणपत्र दे दिया, आशीर्वाद दे दिया और 'हरषि चलेउ हनुमान।' तो 'सुन्दरकांड' में श्री हनुमानजी की अग्निपरीक्षा, ये भी एक कसौटी मानी जाती है।

'लंकाकांड' में दो परीक्षा। अग्निपरीक्षा जो अग्निविद्या की बात चल रही है, वो तो हुई है; उसके बाद रामराज्य हुआ। लेकिन उससे पहले हुई अंगद के विश्वास की परीक्षा। जो विश्वास रखता होगा उसकी कभी ना कभी कसौटी होगी। फिर तुलनात्मक अभ्यास 'महाभारत' और 'रामायण' का करे तो 'महाभारत' पांच पांडव द्रौपदी को जुए में रख देते हैं और 'रामायण' का अंगद जानकी को जुए में रख देता है। किस रूप में उसका मूल्यांकन करे? क्या भरोसा होगा? इसीलिए तो 'दोहावली रामायण' में लिखा, 'अंगद पद बिस्वास।' अंगद को विश्वास का प्रतीक बता दिया। अंगद ने कहा, मैं गलत हूं जो जानकी को हार जाऊं। कल के अखबार में रिपोर्ट आई है कि साऊदी अरब का राजकुमार उसकी नव पत्नी; वो होटेल में जुआ खेलने गया; अरबो रूपिये हार गया और नव में से पांच पत्नी को भी हार गया! जमाने का नाम बदलता है, संस्कार वो ही का वो ही रहता है। लेकिन यहां दूसरा संदर्भ है, 'बिस्वास एक रामनाम को।' एक वानर जो चंचल जात है, उसे जितना रघुनाथ कृपा पर विश्वास कि बिना राम की इजाजत उसने पैर रख दिया कि कोई मेरा चरण उठा ले तो मैं सीता को हार जाऊं। वहां विश्वास की कसौटी है। और वालिपुत्र अंगद पास हो गया इस परीक्षा में। 'भगवद्‌गीता' में एक विश्वास पंचक है, ये पांच बस्तु तुम्हारे में हो तो समझना कि तुम्हारा विश्वास पक्का है और तुम इस परीक्षा में पास हो। शंकराचार्य का 'साधनपंचक' है।

मैं जो भी करूं वो मेरे हरि का काम है, मेरा कोई काम नहीं है। भगवान राम ने अंगद को संकेत किया था, ये विश्वास पंचक का सूत्र है। जब अंगद रावण की सभा में गया तो राम ने कहा, 'काज हमार', तेरा काम नहीं, मेरा काम है, तू निमित्त बन। ये पांच वस्तु याद रखना मेरे भाई-बहन, विश्वास की महिमा को समझना हो तो। मैं जो भी करूं, मेरा कर्म नहीं है। इतने बंदर बैठे हैं समंदर के तट पर। संपाति खाने के लिए तैयार है; जीवन-मृत्यु का संघर्ष चल रहा है। हनुमानजी को न

रामराज्य अंतरमन में करना है तो पहले अग्नि के पास जाना पड़ेगा। हमारे पास अग्नि न आए तो अपने पैरों से चलकर वहां जाना पड़ेगा। जाए इतना पर्याप्त नहीं, रामराज्य के लिए अग्नि में प्रवेश करना पड़ेगा। अग्नि जलाए तो उस क्लेश को शीतल समझना। आया हुआ कष्ट मीठा समझना, तभी रामराज्य होगा। जानकी रोई नहीं कि अरर! मैं जल गई! कष्ट आए तो उसको भी कृपा समझना; तभी रामराज्य आता है। तो अग्नि के पास जाना, उसमें समाना, उनको शीतल समझना, उसके बाद जो घटना घटेगी वो रामराज्य होगा। अग्निकसौटी के बिना रामराज्य नहीं हो सकता। यदि अंतरमन में रामराज्य चाहे तो चाहिए अग्निकसौटी।

दु:ख है, न शोक है; बैठे हैं क्योंकि अपने लिए कुछ है ही नहीं; तभी एक बुज़ुर्ग ने हनुमान को कहा, 'रामकाज लगि तव अवतारा।' तुझे तेरा कुछ करना नहीं है, रामकार्य तुझे करना है। तभी हनुमानजी पर्वताकार हो गए और सुरसा भी प्रमाणपत्र देती कह गई, 'रामकाज सब करिहहु।' तेरा जन्म रामकार्य के लिए है, 'रामचंद्र के काज संवारे।' हनुमान शंकर के रूप में विश्वास है। तो विश्वास पंचक का पहला लक्षण है, मैं जो करूं मेरे हरि के लिए, मेरा कुछ नहीं।

दूसरा सूत्र विश्वास पंचक का है, मत्परम; मेरे परायण रहे। एक इष्ट के परायण रहो। दूसरे इष्ट की निंदा न करो। एक नाम के परायण रहो। एक गुरु के परायण रहो यदि विश्वास है तो। भटकना नहीं, एक तत्त्व के परायण हो जाना। क्यों हम 'रामपरायण' कहते हैं? ये संकेत है कि रामपारायण करनेवाला रामपरायण रहे। विश्वास होगा वो एक के परायण रहेगा।

एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास।
एक राम घन स्याम हित चातक तुलसीदास।
विश्वास एक रामनाम को।

विश्वास पंचक का तीसरा सूत्र, 'मद्भक्त।' मेरा भक्त हो। पांडुरंग दादा ने भक्त का अर्थ बताया है कि किसी भी प्रकार से परमात्मा से विभक्त न हो उसका नाम भक्त है। जिसके पास से सुना होगा उसका मैं स्मरण करूंगा ही; भूल जाऊं तो बात ओर है। अथवा जिससे मैंने सुना उसके पहले मेरे दादा ने कह दिया हो तो उसका नाम मैं प्रणाम करके निकाल दूंगा क्योंकि पहले से मुझे किसीने कह रखा है तो कोई बुरा न माने। बाकी नाम लूंगा। हमारा है क्या? सब लोग व्यास का जूठा ही खा रहे हैं। केवल गुरुकृपा है, वरना क्या है हमारा? अपनी क्या औकात है साहब!

विश्वास पंचक का चौथा सूत्र है, 'संगवर्जित।' सबके साथ रहनेवाला विश्वासु सबसे दूरी बनाए रहता है। सबको लगे कि ये आदमी मेरा है। हमारे साथ बातों में कितना डूब गए हैं! लेकिन फिर भी उसकी असंगता अक्षुण्ण होती है। प्रभावित न हो जाए। मुस्कुराएगा, आनंद करेगा, रस लेगा लेकिन असंग रहता होगा। बहुत मूल्यवान लक्षण है ये। 'निर्वैर: सर्वभूतेषु।' विश्वास का पाचवां लक्षण है ये। कई लोग मुझे कहते हैं, बापू, आप व्यासपीठ पर से कैसे-कैसे लोगों को याद करते हैं! और वो लोग बाद में क्या-क्या बोलते हैं! लेकिन उनका वो जाने, कौन गिनती करे यार! मैं समझता हूं कि मेरी व्यासपीठ से समर्पित दु:खी होते हैं कि बापू, आप सबका आदर करते हैं और वो ऐसा बोलते हैं! सबके अपने संस्कार होते हैं। मैं नीचे आ नहीं सकता, क्योंकि मेरा ऊंचा घराना है। जानते हुए भी निर्वैर रहूं, वरना तो मेरे तुलसी की चौपाई लजाए! 'सीया राममय सब जग जानी।' कई लोग मुझे कहते हैं, 'बापू, विश्वास कब तक रखे?' मैंने कहा, मेरे विश्वास की आप बात ही मत करो। पूरी दुनिया डूब गई तब शास्त्र कहता है कि अक्षय वट था वो रहा। मैं ये अक्षय वट की छाया में बैठनेवाला आदमी हूं। जगत खत्म हो जाए, मेरा विश्वास कभी खत्म नहीं होगा। 'बट बिस्वास अचल निज धरमा।' धरम याने स्वभाव, अक्षय वट की तरह अखंड स्वभाव बना रहे। शंकर विश्वास है। तो हमने क्या कर दिया कि शिवलिंग को स्थापित कर दिया और हम भटकते रहे! हमने मूर्ति बना दी बस! विश्वास कभी इधर, कभी उधर! अखंड विश्वास वो है कि खुद बैठ जाए और हरि उनकी परिक्रमा करे; ये पक्का विश्वास है। 'जग जपु राम राम जपु जेहि।' हमारे विश्वास की कसौटी तब, जब हम बैठ जाए। और हरि हमारी परिक्रमा करे तब आनंद आता है।

मधुर मधुर नाम सीताराम सीताराम।

अगली कथा का विषय मैंने निश्चित कर दिया है, 'मानस-सीता।' सीते शरण की कथा है, जो सीता की आश्रिता है। 'मानस' में मेरी जानकी सीता के रूप में कैसी है उसका दर्शन करेंगे। उस पर बोलने को मन कर रहा है। 'मानस-सीताराम' नहीं, केवल सीता। 'सीता प्रथम अनल महँ राखि।' जहां सीता के स्वतंत्र व्यक्तित्व की परिक्रमा मेरे गोस्वामीजी ने की है उस सीतातत्त्व के बारे में बोलने का मनोरथ है। पूरा अल्लाह करे, मेरा गुरु करे।

तो विश्वास की परीक्षा ये 'अंगद पद बिस्वास।' उसके बाद जो 'लंकाकांड' में है वो जानकी की अग्निपरीक्षा। उसके बाद 'उत्तरकांड' में एक परीक्षा है, जहां भुशुंडिजी 'लीन्ही प्रेम परिच्छा मोरी।' भगवान रघुनायक ने मुनि की बुद्धि भोरी कर दी। लोमस और भुशुंडि के संवाद में प्रेमपरीक्षा का जिक्र आया। तो 'रामचरितमानस' में इतनी परीक्षाएं है और ये सब परीक्षाएं अग्निपरीक्षा है।

तो बाप! जीवन में आती कसौटियां ये सब अग्निपरीक्षा है। और कथा के प्रसंग में, सूत्रो में, पात्रों में कोई ना कोई रूप में हमारे हृदय से अनुबंध होता है। इसीलिए ये प्रसंग हमें उसमें डूबोए रखता है, वरना अरण्यरुदन हो सकता है। तो 'अग्निपुराण' का स्मरण आया और ये प्रवाह चला।

विषयी का छायादर्शन, साधक का दर्पणदर्शन और सिद्धों का प्रगट-प्रत्यक्ष दर्शन होता है

रामकथा अंतर्गत 'मानस-पंचाग्नि' जिसके बारे में हम साथ मिल करके कुछ सात्त्विक-तात्त्विक बातें गुरुकृपा से कर रहे हैं। बहुत-सी जिज्ञासाएं है। मैं यथाशक्ति, यथासमय कोशिश करूंगा।

'रामचरितमानस' में महत्त्व के पात्र पंचाग्नि में तपे हैं। जिसमें माँ जानकी पंचाग्नि में तपी, जिसकी चर्चा दो-तीन दिन पहले हुई। अब ओर पात्र की हम चर्चा करें। सती; दक्षकन्या सती भी पंच अग्नि में तपी है। सती का पूरा चरित्र हम 'बालकांड' में देखते हैं, तो किसी भी कारणवश पांच प्रकार के अग्नि में वो तपी है। उसका प्रसन्न चित्त से, प्रशांत चित्त से कुछ दर्शन करें गुरुकृपा से।

तुलसी कहते हैं, जीव की तीन श्रेणी है- विषयी, साधक और सिद्ध। वेद प्रमाण देकर गोस्वामीजी कहते हैं, जीवों को तीन श्रेणी में बांटा जा सकता है। हम जैसे बहुत मात्रा में जो जीव है; मैं तुम्हारे साथ हूं; करीब-करीब हम विषयी प्रकार के जीवों में आते हैं। हम और आप सब। हम सब संसारी लोग हैं, विषयी है। इनमें से कुछ जो निकले हैं जो साहस करके वो जीव साधक श्रेणी में आते हैं। और साधक श्रेणी में इकठ्ठे हुए साधकों में से कुछ विशेष करके बाहर आते हैं, उसको तुलसीजी सिद्ध कहते हैं। यद्यपि तलगाजरडा का मत मैं हर वक्त कहता रहा। तलगाजरडा की रुचि सिद्ध में नहीं है, शुद्ध में है। सिद्ध होना बहुत बड़ी उपलब्धि है, अवश्य। 'सिद्ध' बड़ा प्यारा शब्द है। लेकिन कई लोग ऐसे सिद्ध है 'मानस' में लेकिन शुद्ध नहीं है। इसलिए उसकी सिद्धाई की प्रशंसा तुलसी ने की, लेकिन ऐसे लोग विश्व का आदर्श नहीं बन पाए।

मैं आप से बिनंती करूं, आप सोचो, रावण के पास कम सिद्धि थी? वो वेश परिवर्तन कर सकता था। वो कहीं भी प्रवेश कर सकता था। वो अग्नि, जल, वायु किसी पर भी काबू कर सकता था। वो अदृश्य हो सकता था। जो सिद्धि के प्रकार हैं; लघिमा, गरिमा आदि जो सिद्धि है वो सब करीब-करीब रावण में है, लेकिन रावण का जीवन शुद्ध नहीं था। इसलिए रावण समाज का आदर्श नहीं बन पाया।

यद्यपि राम इश्वर है। उसमें सिद्धियों की क्या कमी है? लेकिन राघव ने दो-तीन जगह छोड़कर कहीं अपनी सिद्धियों का प्रदर्शन नहीं किया 'मानस' में। केवल मानव रूप में ही रहे। मानव की तरह जानकी के वियोग में रोते रहे, खोजते रहे। मानव की तरह, एक भाई की तरह; लक्ष्मण मूर्छित हुए तो विलाप करते हैं। कभी-कभी उसने-

अमित रूप प्रगटे तेहि काला।

सिद्धि का प्रयोग किया। कई रूप धारण कर लिए। माँ कौशल्या को विराट रूप का दर्शन करवाया। त्रिशला के युद्ध के सामने खर-दूषण को परस्पर रामदर्शन करवा दिए। यह सब सिद्धि और ऐश्वर्य का प्रयोग है। लेकिन भगवान अनिवार्य संजोगों में 'मानस' में यह प्रयोग करते हैं। लेकिन उसकी रुचि उसमें न होने के कारण वो मानवीय रूप में प्रस्तुत हुए हैं। 'लीन्ह मनुज अवतार।' यद्यपि हममें श्रेष्ठ है; सर्वसामान्य नहीं है। यह नरश्रेष्ठ है; इश्वर है, ऐश्वर्यपूर्ण है लेकिन सिद्धियों का दर्शन नहीं करवाते। शुद्ध-बुद्ध है राम। इसलिए राम जगत का आदर्श है, रावण आदर्श नहीं। 'रामचरितमानस' में राक्षस है कालकेतु; सिद्धिवाला राक्षस है। कालनेमि सिद्धवाला आदमी है। इंद्रजित सिद्धिवाला है लेकिन विश्व का आदर्श नहीं बन पाए क्योंकि शुद्ध नहीं है। तो तलगाजरडा की रुचि ज्यादा शुद्धि में रही। और सिद्धाई यदि स्खलित न हो जाए तो शुद्धाई का पर्याय बन सकती है, सगोत्र बन सकती है; स्खलन न हो तो। लेकिन खतरा है सिद्धाई में स्खलन का।

तो बहुधा हम जैसे लोग है जो विषयी है। इनमें से कुछ निकले हैं जो साधक है। इनमें से कोई-कोई निकले हैं जो सिद्ध है। इन में से कोई-कोई माई का लाल निकलता है जो संत 'विशुद्ध ही परि तेही।' जिनके आगे तुलसी 'विशुद्ध' का प्रयोग करते हैं। कोई विशुद्ध संत; नखशिख शुद्ध।

तो विषयी, साधक और सिद्ध जीवों की तीन प्रकार की श्रेणी होने के कारण कोई भी प्रसंग, कोई भी पात्र, कोई भी घटना, उनका दर्शन भिन्न-भिन्न होने लगता है। हम पंचाग्नि का दर्शन करते हैं तो पंचाग्नि के बारे में विषयी का दर्शन भिन्न होगा, साधक का भिन्न होगा, सिद्ध का भिन्न होगा। शांत चित्त से सुनिए, दर्शन तीन प्रकार के होते हैं। एक छायादर्शन होता है। एक दर्पणदर्शन होता है। और तीसरा प्रगट दर्शन होता है।

छायादर्शन विषयी करते हैं। हम सब माया-छाया में हैं। 'माया महा ठगनी।' इस माया में हम सब भटक रहे हैं। जानकी अग्नि में समा गई उसका हम छायादर्शन ही कर पाए, मायादर्शन ही कर पाए। हमारी दृष्टि, औकात, चश्में छाया को ही देख पाती है। हम अपनी छाया में है। कोई अपने को पद की छाया में नापता है। किसी को बोलना आ जाता है; बहुत अच्छा बोल लेता है; श्रोताओं को प्रभावित कर देता है। तो अपने आपको इस वक्तव्य की छाया में नाप लेता है। किसी को अच्छा गाना आता है, किसी के पास बहुत पैसे है, किसी की वाह-वाह दुनिया में होती है। कोई जीतता है। कई प्रकार की छाया में हम दर्शन करते हैं। इसको शास्त्र छायादर्शन कहते हैं। छाया का दर्शन शाश्वत नहीं है। दिन बदलते ही छाया छोटी-बड़ी होती है। सूरज का एंगल बदलते ही छाया की साइज़ छोटी-बड़ी होती है।

दूसरा, छाया का दर्शन शाश्वत नहीं होता। सूरज डूब गया, अंधेरा हो गया तो छाया भी खो गई। हां, फिर मोमबत्ती जलाओ, कुछ छाया दिखे, बात ओर है। बहुधा हम विषयी है। इसलिए 'मानस' के किसी भी प्रसंग पर विषयी दृष्टि से देखा जाए तो सती बिलग दिखेगी; साधक दृष्टिकोण से देखा जाए तो सती बिलग दिखेगी; सिद्ध दृष्टिकोण से देखा जाए तो सती बिलग दिखेगी। कौन-से पंचाग्नि में सती तप रही है?

संजय तो क्या है, यह दूर बैठा-बैठा व्यास से उसको दिव्य दृष्टि मिली थी तो महाभारत के युद्ध का ज़िक्र वो धृतराष्ट्र से कर रहा है। युद्ध के मेदान में नहीं था, आप याद रखें। दूर से वो दिव्य दर्शन कर सकता था। यहां 'मामकाः पांडवाः।' क्या-क्या हो रहा है वो सब टी.वी. के परदे पर देख रहा है, और सुना रहा है धृतराष्ट्र को।

'रामायण' का दर्शन ऐसा नहीं है; दूरदर्शन नहीं है, निकट दर्शन है। तुलसी 'लंकाकांड' का वर्णन- 'लंकाकांड' अभी मैंने उठाया ही कहां है? अभी तो मैंने कुछ उठाया ही नहीं है। मैं बार-बार इतनी कथाओं के बाद कह रहा हूं कि अभी मैं 'मानस' का 'बालकांड' का मंगलाचरण कर रहा हूं। कथा तो अभी मैंने शुरू ही नहीं की है। शायद अगले जनम में कथा शुरू करूं। कथा कहां शुरू हुई है? अभी तो मैं 'मानस' का माहात्म्य कह रहा हूं। मुझे पता है, 'हरि अनंत हरि कथा अनंत।' आप 'मानस' का पाठ कर रहे हैं; आप दर्शन करते होंगे। तुलसी रण मैदान में स्वयं खड़े हैं। कई हिंमतवान पत्रकार होते हैं; कश्मीर में पत्थरबाजी होती है, कहीं जमेला होता है तो साहसिक पत्रकार बीच में खड़े रहते हैं; फोटोग्राफ़ी करते हैं; ऐसे साहसी होने चाहिए। मेरा तुलसी अभय है। साधु अभय होना चाहिए। लंका के रणमैदान में यह कैसे हुआ? वो आये और देखा तो क्या हो रहा था? प्रत्यक्ष सुन रहे हैं। अब आप मुझे पूछो, तुलसी कहां खड़े थे? भगवान कृष्ण की तरह युद्ध में बीचमें खड़े थे; नरहरि गुरु की कृपा से खड़े थे। तुलसी चारों ओर देख रहे थे। साधु अभय होना चाहिए। बीवे ई बावो नहीं, अपना सूत्र है।

डोक्टर साहब ने आज लिखा है-

घायल नर तो घूम्या करे, सूतेला कांई बांधे छे ओट।

जतन करे पण जीवे नहीं, लागी जेने सद्गुरुनी चोट।

तो पूछा है कि बापू, इसका क्या अर्थ है? किसी को कोई चोट लगी हो तो १०८ बुलाकर अस्पताल में भर्ती कर दे। यहां उपर से घायल की बात नहीं जो बचनों से अंदर से घायल बन गए हैं वो कहीं सो नहीं सकते। आज हमारी दशा क्या है? कहीं के नहीं रहे हैं! घुमते ही रहते हैं! क्योंकि घायल है। जिसको अंदर की चोट लग गई वो फिर बावरा बन जाता है, फ़कीरी में घूमता रहता है। तो ये घायलपना भीतर का है, जैसे मीरां को-

घायल की गत घायल जाने।

व्यवहार में भी घायल हुआ तो सीधा स्थिर ही कर देगा, डोक्टर मना करेगा कि एक महिना कहीं बाहर मत जाना। और भीतर का घायल घूमता रहेगा।

सूतेला कांई बांधे छे ओट।

सोया हुआ यानी जो मोहनिद्रा में सोया हुआ है, वह सुरक्षा मांगता है। जो ऐसी सुरक्षा मांगता है वो इधर-उधर जाता है, लेकिन चैन से जी नहीं सकता। जिसको सद्गुरु की ओट हो, सद्गुरु की सुरक्षा हो वो ही जी सकता है। हम और आप ये नव दिन का जीवन जी रहे हैं। इसीलिए मैं कहता हूं कि साल में एक बार मेरे देश के युवान लोग केवल नव दिन दे तो मेरी व्यासपीठ उसे नवजीवन देगी। ये मेरा कोल है।

तो बाप! गुरु से सब कुछ मिलता है और एक गुरु की शरणागति मिल जाए तो फिर दूसरे का आश्रय मत करना। प्रणाम करना सबको। और तुम्हारे गुरु की निंदा दूसरा कोई करे तो उसके सामने मुस्कुरा करके सत्संग मत करना, चल देना। मैं नहीं कहता, 'मानस' कहता हैं-

जो मन लाय न सुन हरी लीले।

कहिअ न कामिहि क्रोधिहि लोभीहि।।

तुम्हारे गुरु से तुमने जो सत्संग पाया। कोई कामी या क्रोधी को मत सुनना। भगवान कृष्ण स्वयं कहते हैं, अर्जुन, मैंने तुझे जो 'गीता' सुनाई, खबरदार, अभक्त को, अतपस्वी को, जिसको सुनने में रुचि नहीं उसको सुनाया! और मेरी इर्ष्या करनेवाले को मत सुनाना। किसी को लगे कि कृष्ण इर्ष्या से बचना चाहते हैं। कृष्ण को निंदा का डर नहीं है। लेकिन मेरी जो इर्ष्या करता है उसे तू मेरी बात सुनाने जाएगा तो उसकी इर्ष्या ओर बढ़ेगी और बेचारे की इर्ष्या बढ़ेगी तो उसकी दुर्गति होगी। करुणा से ये कृष्ण बोले हैं। कई लोग एक जगह आश्रित भी होते हैं और दूसरी जगह रुचि भी लेते हैं; उसकी आध्यात्मिक यात्रा बार-बार खंड़ित होती है।

उपनिषद का श्वेतकेतु जब अपने गुरु के पास गया तो गुरु ने कुछ नहीं कहा। न उपदेश, न संदेश, न कोई विशिष्ट वार्तालाप। गुरु ने कहा, गायों को चराओ और शाम को लौटना। शाम को लौटे तब कहे, गाय को दोहन कर ले। यज्ञ करने को कहे वो यज्ञ करे; गोबर से लेपन करे; समिध ले आए। गुरु कहे तब यज्ञकुंड के पास सो जा तो वो सो जाता था। वहां अखंड अग्नि था। सब गतानुगति चल रही है। न कुछ श्वेतकेतु ने पूछा, न उसके गुरु ने कुछ कहा।

एक दिन अग्निदेव को करुणा फूटी और यज्ञकुंड में रहा अग्नि प्रगट हुआ और कहा, श्वेतकेतु, मुझे करुणा आ रही है और ये तेरा गुरु कैसा है कि कुछ बताता नहीं है तुम्हे! आओ, मैं तुम्हें बताउं। श्वेतकेतु ने कहा, मैं आप का ऋणी हूं, लेकिन मैं केवल मेरे गुरु से ही सुनुंगा। श्वेतकेतु ने कहा, आप मेरे गुरु के अग्नि हो, आप में भोजन-द्रव्य आहुत करूं लेकिन जिससे मैंने दीक्षा ली उसी से सुनुंगा। वह ज़िंदगीभर न बोले तो कोई बात नहीं। उसने मुझे अपनाया यही बहुत है। गाय को एक जगह रहने योग्य लग जाए फिर वो भी दूसरी जगह नहीं जाती।

अमे तारां अंग कहेवाईअे,

जीवण! कोने आशरे जाईअे।

हमारी शरणागति बहुत डांवाडोल है। गजब का आदमी रहा होगा! उपमन्यु के सामने प्रलोभन आया तब उसने कहा, मैं मांगूं तो मेरे इष्ट से ही मांगूं। मर जाउं लेकिन दूसरों के पास न मांगूं। अग्निदेव युवा श्वेतकेतु को समझा रहा है, हम जलानेवाला हैं, हम कठोर है और गुरु तो करुणामूर्ति माना जाता है, फिर भी उसको करुणा नहीं आती? श्वेतकेतु ने कहा, मेरा गुरु स्वयं अग्नि है। वो बोले, आप करुणावान हो, धन्यवाद!

अग्निदेव को जरा तेजोवध हुआ कि ये लड़का मेरी बात काट रहा है! और उन्हों ने कहा, तेरा गुरु तेरे से बोलता क्यों नहीं? ये काम करना ही तेरी ज़िंदगी? कोई आध्यात्मिक रहस्य नहीं? कोई विशेष बात नहीं? ये तेरा जीवन बरबाद हो रहा है। यात्रा में प्रलोभन ज्यादा आएगें। प्रभावशाली सद्गुरु यात्रा में आयेगें जो तुम्हें विमोहित कर दे तब अपने आप में टिके रहना। श्वेतकेतु ने कहा, मेरा गुरु कोई आध्यात्मिक बात नहीं बताते इसमें गुरु का दोष नहीं है, मेरी कोई कमी होगी।

तीन दृष्टांत श्वेतकेतु लाता है कि वो नहीं डालता है; शायद मेरे गुरु को लगा होगा कि मेरे घड़े में कंपन है, अभी डालेगा तो में छलक जाउंगा। और मेरे गुरु के एक-एक वचन अमृत वचन है। अमृत छलक जाए ये ठीक नहीं। चित्त एक घड़ा है; उसमें कंपन होता है तब

तक गुरु डालता नहीं है। मैंने पहले दिन बहुत साहसी निवेदन किया है कि यदि हमारी शरणागति पक्की है और सामनेवाली पीठ यदि कमजोर है तो भी हमारी शरणागति के कारण हम धन्य हो जायेंगे। और सामनेवाली पीठ परम सत्य है और शरणागति व्यभिचारिणी है तो कोई काम की नहीं।

मैं आप से पूछता हूं कि 'रामायण' में हनुमानजी ने भगवान राम से कोई प्रश्न पूछे कभी? चुप रहा आदमी। और जो काम सोंपते है वो करते हैं। सुग्रीव को भय लगा और कहा कि तू जा और पूछ, ये कौन है? तो सुग्रीव के लिए प्रश्न पूछे-

को तुम श्यामल गौर शरीरा।

गुरु की शरणागति पर्याप्त है। क्या पूछना? क्या सुनना? बात खतम। हनुमानजी ने कुछ भी नहीं पूछा। रामराज्य के बाद जब बाग में घूमने जाते हैं तो हनुमानजी को कुछ भी पूछना नहीं है। भरत के मन में जिज्ञासा होती है। वो बोलते हैं-

नाथ भरत कछु पूछन चाहा।

हनुमानजी ने कहा, मुझे कुछ लेना-देना नहीं है; मुझे तू मिल गया।

श्वेतकेतु ने कहा, मेरा चित्त का घड़ा कंपनवाला है, इसलिए मेरा गुरु नहीं डालता उसमें कुछ। क्योंकि उनके एक-एक वचन अमृत है। मैं क्यों पूछुं? कोई जरूरी नहीं। ठाकुर परमहंस का एक गया बीता आदमी था लेकिन दूर बैठा रहता था। लोग कहते थे, ये बहुत पापी है; ऐसा है- वैसा है। फिर भी आप ऐसे लोगों को क्यों रखते हो? और उसको भी कहते थे कि तू ठाकुर के पास जाता है और सुधरता नहीं? वो बोला, मैं नहीं सुधर पाउंगा। मैं एक गड्ढा हूं लेकिन मुझे खातरी है कि जब करुणा बहेगी तो मेरे जितने कई गड्ढे हैं, भर जाएंगे और मेरे जैसे अधम का उद्धार हो जाएगा। ये भरोसा है।

श्वेतकेतु अग्निपुरूष को कहता हैं कि दूसरा कारण मेरे घड़े का ये हो सकता है कि मेरे घड़े में छेद हो। और गुरु को लगे कि मैं डालूंगा तो सब बेकार चला जाएगा। हो सकता है ये भी। अपनी कमी खोज रहा है, गुरु की नहीं।

तीसरा कारण श्वेतकेतु ने बताया कि मेरा घड़ा उल्टा हो। अग्निदेव ने कहा, ला, मैं तुझे मदद करूं। तेरा घड़ा मैं सुल्टा कर दूं। श्वेतकेतु ने कहा, खबरदार, छुओ तो! मुझे उल्टा रखना कि सुल्टा ये सब मेरे बाप की मरजी है। गुरु कुम्हार है और शिष्य घड़ा है। क्या तीव्रता है शरणागति में कि साक्षात् अग्निदेव बात कर रहे हैं और ये उसकी हर एक चीज को ठुकरा रहा है!

कोई इन्द्र जितना बड़ा राजा हो लेकिन जिसको रामकथा में रुचि नहीं है, द्विजपद प्रीति नहीं है, जो नीतिवान नहीं है, जो संत पर भाव नहीं रखता उसको ये कथा कभी देना नहीं। कृष्ण कहते हैं, मेरा गीताज्ञान अतपस्वी को मत कहना। अब प्रश्न उठता है कि तपस्वी किसको कहे? अध्यात्म परदेश नहीं है, अध्यात्म हम जहां बैठे है वहीं है। गुरु का देश वही हमारा स्वदेश। उसके अलावा सब परदेश है; घूम ले ये बात ओर है। शंकर पार्वती को कहते हैं कि-

जदपि प्रथम गुप्त करि राखी।

मैंने कथा गुप्त रखी थी, और लायकात देखी तब पार्वती को कथा कही। लेकिन कथा हठाग्निवाले को मत कहेना। जो मन लगाकर भगवान की लीला का श्रवण नहीं करता उसको, देवी, कथा न सुनाना। क्रोधी को, लोभी को, कामी को मत सुनाना।

जो न भजहि सचराचर स्वामी।

जो सचराचर का भजन नहीं करता, उसको ये कथा मत सुनाना। निंदक को ये कथा मत सुनाना, भले बड़ा राजा हो। पार्वती ने पूछा कि तो कथा का अधिकारी कौन?

रामकथा के तेहि अधिकारी।
जिन्ह को सत्संगति अति प्यारी।।

रामकथा के वो अधिकारी है, जिसको सत्संग प्रिय है। जिसमें ब्रह्मत्व प्रगट हुआ है, उसकी सेवा में लगा है वो अधिकारी है। धन्यवाद प्रकरण चल रहा है 'उत्तरकांड' का, वहां ये नियमावलि आई है। तपस्वी कौन?

पहला सूत्र, दुनिया के समस्त द्वंद्वों को जो सहन कर ले वो तपस्वी है। पंचधूणी ताप ले, अस्सी उपवास करे वो अपने ढ़ंग का तपस्वी है, लेकिन जो सुख-दुःख, मान-अपमान, स्वीकार-तिरस्कार, प्रशंसा-गाली ये सब मुस्कुराते हुए सहन करे वो तपस्वी है।

द्वन्द्वैर्विमुक्ता सुखदुःख संसे गच्छन्ति मूढ़ाः पदमव्ययं तत्।

सत्संग करते-करते मुझे और आप को ये समझना होगा कि कोई गाली दे, कोई स्तुति करे तो दोनों सह लेना। स्तुतियां भी सहन करनी पड़ती है। ये थोड़ी मीठी मार है।

दूसरा सूत्र, काम-क्रोध का आवेग आता है, तब सद्गुरु के वचनों से प्राप्त विवेक का उपयोग करके जो आवेग को काबू में रख ले, वो तपस्वी। 'गीता' ने भी काम-क्रोध का जो वेग कहा है उसीको कन्ट्रोल करे वो तपस्वी। भूखा रहे वो भी तपस्वी है लेकिन ये वेग तो मार डाले ऐसा है। ये वेग से तो हरिनाम ही बचा पाता है।

राम भजन बिनु मिटहि कि काम।

परमत सहिष्णु होना ये तप है। दूसरों के मत के प्रति सहिष्णु रहना। दूसरों का मत हम से भिन्न है तो असहिष्णु मत होना, गुस्सा मत करना। 'गीता' के मुताबिक ये तप है। मेरे पढ़ाए आप फ्लावर्स हो, श्रावक हो; जीवन की संध्या आए तब तो सब को मुरझाना है लेकिन जब तक जीवन है, फूल खिले रहे, मुस्कुराते रहे। दूसरों का मत भिन्न हो तो हमें क्या लेना-देना? यदि उसका मत सच्चा है तो हमें फायदा, झूठा है तो लेना-देना नहीं। हम दूसरों के मत के आगे असहिष्णु हो जाते हैं, मारामारी करते हैं। और शास्त्रार्थ करते हैं वो भी शस्त्रार्थ ही है; शुभ शब्दों में गालियां बोलते हैं! कोई अद्वैत में माने तो कोई द्वैत में माने। उलझो मत। तो हमें परमत के प्रति संवेदना बनाए रखना चाहिए।

तपस्वी की चौथी व्याख्या, तुम तपस्वी तभी माने जाओगे कि तुम्हारे निकट के, तुम्हारे ही धंधे में हो और तुम से पांच गुनी ज्यादा कमाई कर ले, उसी समय भी तुम्हें इर्ष्या न आए तो आप तपस्वी हो। सहधर्मी, सहव्यवसायी, तुम से बिलकुल पीछे हो और आगे निकल जाए उसी समय तुम्हें इर्ष्या और द्वेष न आये तो तुम तप कर रहे हो। एक वस्तु याद रखना, रहना सब के साथ लेकिन चित्त के उपर कोई रेखा अंकित न हो जाए ये ध्यान रखना। चित्त के कागज को कोरा रखना, वरना सब लोग रंग और पींछी लेकर घुम रहे हैं कि चित्त कब बिगाड़ दे! किसी के बारे में कुछ का कुछ कहकर तुम्हारे चित्त में लकीर कर देंगे। चित्त पर रघुनाथ का चित्र रखो, जानकी का चित्र रखो।

ठाकुर रामकृष्ण बैठे थे। एक तो उसकी छबि ही मुस्कुराती हुई, निर्दोष मुस्कुराहट से युक्त है। दुनिया में जितनी मूर्तियां बनी है महापुरुषों कि उसमें ठाकुर की मूर्ति परफेक्ट बनी है। तलगाजरडा के हनुमान की मूर्ति ये मूर्ति है। ये मुझे अच्छी लगती है इसलिए नहीं; आप को अच्छी लगे तो हां कहना वरना कोई बात नहीं। त्रिभुवन दादा की मूर्ति वैसी की वैसी ही है; मैंने जिसे सेया है वो वैसे ही बेठा

है। तलगाजरडा की तुलसी की मूर्ति परफेक्ट है। कबीर आश्रम के कबीर की मूर्ति, रामशकला मूर्ति है; दूसरा राम बैठा है। कबीर साहब की ऐसी मूर्ति मैंने नहीं देखी है। लाल बापू के गेबी आश्रम में रामदेव पीर की मूर्ति अच्छी है। रामदेवपीर के बारे में हम ज्यादा जानते नहीं। मैं तो सबसे डिस्टन्स ही रखूं। पूरी कथा भले की उस पर की। वह मूर्ति सुन्दर है। भाईश्री रमेशभाई ओझा उनका सांदिपनी आश्रम है, वहां भी अंबाजी की मूर्ति बहुत अच्छी है। वरना कई मूर्तियां अच्छी नहीं भी होती है।

तो ठाकुर बैठे थे और बगुले की कतार उड़ रही थी। उस बगुले की कतार की परिछाया पानी में गिर रही थी। घटना बिलकुल सामान्य है और ये मुस्कुरानेवाला बादशाह भगवान रामकृष्ण उस दिन ज्यादा मुस्कुराए। निकटवाले आदमी ने पूछा कि आज क्यों आप ज्यादा मुस्कुरा रहे हो? कुछ रहस्य है? तो ठाकुर बोले कि पंक्ति देखता हूं तो सोचता हूं कि मेरा चित्त कब ऐसा होगा? ये पंक्ति इतनी उड़ रही है। न आकाश को लेना-देना और परिछाया पानी में पड़ रही है फिर भी बगुले की पंक्ति को कोई लेना-देना नहीं है। और सरोवर जहां प्रतिछाया पड़ रही है वो भी नहीं कहता पक्षियों को कि देखो तो जरा, मैंने तुम्हें रिसिव किया है। मेरा चित्त कब ऐसा असंग होगा? ये तपस्वी है।

कृष्ण कहते हैं, जिसको मेरी कथा, मेरी बातें अच्छी नहीं लगती उसे कथा मत कहना। जिसे कथा अच्छी नहीं लगती उसके साथ बहस करने का अर्थ नहीं है। कई लोग कहते हैं कि उसको बहुत समझाया लेकिन वो आता नहीं। वो नहीं आएगा।

अति हरि कृपा जाहि पर होई।

अत्यंत हरिकृपा होगी तभी इस मार्ग का मार्गी बनेगा। वरना इस मार्ग पर चलना कठिन है। पत्नी कथा न सुनती हो तो उसके पति को मेरी प्रार्थना कि जिद्द मत करना कि तू आ। और पति न सुनता हो तो बहनों को जिद्द नहीं करनी चाहिए; वो बैठकर साइकल के पंक्चर भले निकाले! आप को कथा में आने दे उस बात का उपकार मानना, जिद्द न करना। कृष्ण कितनी करुणा से बोला है कि मेरी बातें अच्छी न लगे उसे न सुनाना। मेरी इर्ष्या करे उसको ये कथा मत सुनाना।

तो बाप! श्वेतकेतु कहता हैं, या तो मेरे घड़े में कंपन है, या छिद्र है, या उल्टा है। थक गए अग्निदेव। पर युवक श्वेतकेतु नहीं माना। गुरु को पता लगा तब पूछा, वत्स श्वेतकेतु, कल कोई देवता से बात हो रही थी? तो बोला, हां, अग्नि से बात हो रही थी। उसने कहा, तेरा गुरु कठोर है। मैं तो अग्नि हूं, विषम हूं, लेकिन मुझ में करुणा फूटी ये स्थिति देखकर तब उसने ये करूं, वो करूं सब कहा लेकिन मैंने मना कर दिया। गुरु की आंख में आंसू आ गए। श्वेतकेतु, अब तू अधिकारी हो गया। और हाथ फैलाए और कहा कि अब तुझे देने के लिए कुछ नहीं है, तुने सब कुछ पा लिया है। बिना बोले, बिना कहे पा लिया है, जिसको शरणानंदजी मौन सत्संग कहते हैं। कोई बुद्धपुरूष के पास चुप हो जाओगे तब तुम्हारे लिए अस्तित्व बोलेगा। श्वेतकेतु चुप हो गया तो अग्नि को बोलना पड़ा। पृथ्वी, जल, आसमान, पंचभूत बोलेगें। वसंत बापू कि कविता है मार्गी के बारे में-

मार्गी, मार्गी रे ओ मार्गी,
मार्गी एवा अमे मार्गी जेने जावुं हरिना मार्गे।
करुणाना कोडियामां प्रगटाव्या दीवा,
ज्योतुं सत्य, प्रेम केरी जगे रे।

जिज्ञासा है, 'परम धर्ममय पय दुहि भाई। अवटे अनल अकाम बनाई।' बापू, अग्नि अकाम या सकाम कैसी होती है? अग्नि भी बुभुक्षु होती है और अग्नि मुमुक्षु भी होती है। ये सकाम अग्नि है। दशरथजी को चरू देकर अदृश्य हो गई वो निष्काम अग्नि है। कोई भी अग्नि सकाम-निष्काम दोनों होती है। संगीत के पांच अग्नि है-

सुराग्नि स्वराग्नि लयाग्नि तथैव च।
तालाग्नि रागाग्नि पंचधा पंचाग्नि उच्यते।।

सूर अग्नि है। उसका बिलग देवता होता है। स्वर अग्नि है। आप सुस्वर में गाओ तो एक प्रकार की अग्नि प्रज्वलित होती है। एक ऊर्जा, उष्मा, उष्णता प्रगट होती है। कोई भी राग एक अग्नि है। केवल दीपक राग ही अग्नि नहीं है, कोई भी राग अग्नि है। और ऊर्जा संघर्ष के बिना पैदा नहीं होती। संघर्ष में ये ऊर्जा उष्मापूर्ण होती है। ताल भी एक अग्नि है।

रागाग्नि दोनों अर्थ में है। संगीत का राग भी और किसी के प्रति आकर्षण का अग्नि दाहक ही है। मानो कि राग मीठा लगे। तो द्वेष अगर अग्नि है तो राग और द्वेष सापेक्ष होने के कारण एक सिक्के के दो पहलू होने के कारण राग भी अग्नि है। तो इन संगीत के पांचों तत्त्वों को पंचाग्नि कहा है। सब का दर्शन बिलग होता है। विषयी का दर्शन छायादर्शन। साधक का दर्शन दर्पणदर्शन और सिद्धों का दर्शन प्रगट और प्रत्यक्ष दर्शन। हम अपने आप को माया की छाया में नापते हैं।

विषयी जीव छाया में भटक जाता है। छाया शाश्वत नहीं होती। सूर्य प्रकाश की दिशा बदलने से छाया छोटी-बड़ी हो जाती है, लुप्त हो जाती है। छायादर्शन शाश्वत नहीं है। दर्पणदर्शन मूल्यवान है फिर भी दर्पण यदि रजोमय है तो छाया भी धुंधली दिखती है। दर्पण स्वच्छ है, फिर भी हम जैसा है वैसा दिखाता है। साधक का दर्शन जैसा है वैसा दिखता है, लेकिन दर्पण भी झूठा है। दर्पण में हमारा दायां हाथ- बायां लगता है और बायां हाथ दायां हाथ लगता है। इसी कारण दर्पणदर्शन भी परफेक्ट नहीं माना जाए।

तो 'मानस' की प्रत्येक घटना में विषयी का अपना दर्शन होता है। साधक का अपना दर्शन होता है। सिद्ध का अपना दर्शन होता है। सती पंचाग्नि में तपी है।

एक; सती का एक अग्नि, अहंकार का अग्नि है। तुलसीदासजी ने 'वैराग्य सांदीपनि' में वैराग्य को अग्नि कहा है। मैं दक्ष की बेटी, पति के साथ गई लेकिन कुंभज से क्यों सुनूं? 'वैराग्य सांदीपनि' का ये सूत्र मैंने लिख लिया-

जदपि साधु सबही बिधि हीना।
तदपि समता के न कुलीना।

साधु सब प्रकार से हीन हो तो भी जो अपने आप को कुलीन कहलाते हैं। साधु की तुलना में वो नहीं आता। भले घड़े में जन्म हुआ हो लेकिन कुलीन खानदान की सती उसकी तुलना में नहीं आ सकती। साधु निरंतर रामनाम जपता है इसलिए तुलना में नहीं आता।

यह दिन रैन नाम उच्चारे वह नित मान अग्नि मँह जरे।

जो कुलीन कहलाता है अपने को वो निरंतर अभिमान की अग्नि में जलता है। यहां शंकर साधु है; 'सबही बिधि हीना' कुंभज है जो रामनाम जपते हैं।

तुम पुनि राम राम दिन राती।

सती अभिमान की अग्नि में जल रही है। तुलसी 'वैराग्य सांदीपनि' में लिखते हैं-

अहंकार की अग्नि में दहत सकल संसार।
तुलसी बाँये संतजन केवल शांति अधार।

पूरा संसार अहंकार की अग्नि में जल रहा है; संतजन ही बच जाता है। जिसे केवल शांति का आधार है।

दूसरा अग्नि, संशयाग्नि।

सुनहु सती तव नारी सुभाऊ।
संशय अस न धरिअ उर काहु।

देवी, संशय धारण मत करो, राम पर शंका न करो। शंका करे वो निरंतर आग में जलता है।

तीसरा, राम की अग्निपरीक्षा करने सती गई तो कोई भी अग्निपरीक्षा ये अग्नि है। दो परीक्षा के केन्द्र में सती है। कल चर्चा हुई उसकी। चौथा, राम की परीक्षा करके आई और शिव के सामने झूठ बोली, ये 'असत्याग्नि।' पांचवी अग्नि है, हठाग्नि।

कहि देखा हर जतन बहु रहई न दच्छकुमारि।
दिए मुख्य गन संग तब बिदा कीन्ह त्रिपुरारि।

हठ का परिणाम ये आया कि 'अस कहि जोग अगिनि तनु जारा।' तो पंचाग्नि सती तपी है। 'मानस' में भरत तपे हैं, हनुमानजी तपे हैं, भुशुंडि तपे हैं। आज की कथा यहां विराम ले रही हैं।

विषयी, साधक और सिद्ध जीवों की तीन प्रकार की श्रेणी होने के कारण कोई भी प्रसंग, कोई भी पात्र, कोई भी घटना, उनका दर्शन भिन्न-भिन्न होने लगता है। हम पंचाग्नि का दर्शन करते हैं तो पंचाग्नि के बारे में विषयी का दर्शन भिन्न होगा, साधक का भिन्न होगा, सिद्ध का भिन्न होगा। शांत चित्त से सुनिए, दर्शन तीन प्रकार के होते हैं। एक छायादर्शन होता है। एक दर्पणदर्शन होता है। और तीसरा प्रगट दर्शन होता है। सब का दर्शन बिलग होता है। विषयी का दर्शन छायादर्शन। साधक का दर्शन दर्पणदर्शन और सिद्धों का दर्शन प्रगट और प्रत्यक्ष दर्शन। हम अपने आप को माया की छाया में नापते हैं।

कथा-दर्शन

- 'रामचरितमानस' विवेकरूपी अग्नि को प्रगट करने के लिए अरणि मंथन है।
- जिसको अंत:करण में रामराज्य प्राप्त करना है उसको अग्निपरीक्षा देनी ही होगी।
- संसार में जीकर भजन करना वो बहुत बड़ा पंचाग्नि तप है।
- बहिर् शक्ति के लिए और भीतरी शांति के लिए पंचाग्नि में तपना ही होगा।
- जहां भी कष्टदायक साधन है वहां पंचाग्नि तप है।
- बुद्धपुरुष के पास बैठना भी तपना है, तपस्या है।
- जब आदमी तपस्या की ओर जाए तब चरित्र की कसौटी होती है।
- जो जगत के लिए जागे हैं, वो सभी ने विष पीया है।
- व्रत और नियम की ज्योति जलाना आसान है, निभाना मुश्किल है।
- तुम दूसरों की कसौटी करो तो कभी न कभी कालांतर में तुम्हारी कसौटी भी होगी।
- लोगों की मान्यता अथवा अमान्यता दोनों ही अग्नि है।
- जितनी स्पृहा कम होती है इतनी दूसरों के साथ स्पर्धा भी कम होती है।
- कभी-कभी हमारी कामनाएं दूसरे के वनवास का कारण बन जाती है।
- अश्रु मूल्यवान वस्तु है। अश्रु प्रेम की पीड़ावालों की संपत्ति है।
- चरित्रवान निकट आनेवाले को भी सुंदर बना देता है।
- गुरु की खोज परमात्मा नहीं है; गुरु की खोज है योग्य आश्रित।
- जागा हुआ आदमी किसीका द्वेष नहीं करता।
- उदासीन हो उसको कोई प्रिय-अप्रिय नहीं होना चाहिए।
- स्वीकार ये बुद्धपुरुष का लक्षण है।
- नाम संकीर्तन जैसा कोई भजन नहीं है।
- भजन का कोई विकल्प नहीं है।

मानस-पंचाग्नि - ६

जीवन की शांति के लिए अग्निपरीक्षा तो देनी पड़ेगी

'मानस-पंचाग्नि', उसी शब्दब्रह्म को केन्द्र में रखते हुए हम और आप कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं; कुछ आगे बढ़ें। तुलसी ने 'रामचरितमानस' में 'अगिनि' शब्द का प्रयोग केवल नव बार किया है पूर्णांक में; ये पूर्णांक अगिनि है। और 'पावक', 'अनल', 'कृषानु' अन्य जो शब्द है वो एक सौ बार प्रयोग किए गये हैं। एक गिनती मुझे हमारे हरीशभाई बडौदावाले ने सब खोज कर दिया है। कई मेरे श्रोता व्यासपीठ से समर्पित लोग कथा में न आ सके लेकिन अपनी-अपनी खोज एक स्वाध्याय करके भेज देते हैं तो काम थोड़ा सरल हो जाता है। हमारे कुंडलावाले गुणवंतबापू वो तो इन्टरनेट, फलां-फलां, कहां-कहां से खोज-खोज करके निकलते हैं! कई मेरे श्रोता भी पुराणों से निकाल करके, 'महाभारत' से निकाल करके भेजते हैं। 'विनयपत्रिका' में भी कई बार 'अगिनि' शब्द का प्रयोग तुलसीदासजी ने किया है। लेकिन एक बहुत बड़ी अग्नि जिसका नाम है 'वडवानल अग्नि'; वडवानल-अनल आ गया तो अग्नि लगाने की जरूरत नहीं है। लेकिन एक आदत-सी बन गई है कि वडवानल अग्नि। वडवानल अग्नि का अर्थ है, वो सबको जला देती है; कुछ नहीं बचता। वडवानल अग्नि का जो स्वभाव है वो है जल को भी जला देना। 'रामचरितमानस' में उल्लेख है कि प्रभु को कहा गया कि महाराज, समुद्र तो आपके वडवानल क्रोध की अग्नि से पहले ओलरेडी जल चुका है। ये तो फिर पानी से भर गया। ये तुम्हारे रावण आदि जो शत्रु है उसकी स्त्रीओं के आंसूओं की धारा से फिर भर गया इसलिए खारा हो गया। बाकी तुम्हारे प्रतापरूपी वडवानल से समुद्र ओलरेडी जल चुका है।

तो वडवानल अग्नि का जो स्वभाव है, प्रकृति है वो जल को भी जला देती है। बहुधा जल अग्नि को बुझा देता है। लेकिन यहां उल्टा है, अग्नि जल को बुझा देती है। तो एक प्रचंड आग जो सबको भस्मीभूत कर दे। उसके सामने बिलकुल एक दूसरा छोर पर अग्नि है जिसको विश्वानल अग्नि कहते हैं। एक वडवानल और दूसरा विश्वानल। और विश्वानल अग्नि का स्वभाव है सबको पचा देना। वडवानल का स्वभाव है जला देना।

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्।।

भगवान कृष्ण कहते हैं, अर्जुन, मानवी के शरीर में मैं विश्वानल अग्नि के रूप में बैठता हूं और वो जो भोजन करता है उसमें चार प्रकार से मैं उसको पचाता हूं। ज्ञान पच जाये। सत्य पच जाये। प्रेम पच जाये। किसीकी हम पर करुणा ऊतरी हो तो वो पच जाये। किसीने हमें बहुत प्यार किया हो तो प्यार पच जाये। किसीने हमारे साथ सत्य ही वर्ताव किया हो तो वो सत्य पच जाये। इसलिए प्रत्येक साधक के अंदर गुरुकृपा से एक विश्वानल अग्नि की जरूरत है, वरना पचता नहीं। भड-भड-भड जला देगा सब! तो एक कृष्णकृपा की विश्वानल-वैश्वानल अग्नि जो है वो पचाती है। ये अंदर तो अन्न पचाती है जो खाते हैं लेकिन अन्न का अर्थ भारतीय उपनिषद में तो ब्रह्म है। अन्न मानी ब्रह्म। ब्रह्म को पचा देती है। कई लोग कहते हैं, हमें ब्रह्म का दर्शन हो, हमें भगवान का दर्शन हो। पचेगा? नहीं पचेगा। बहुत मुश्किल है। करुणा पचा देगी।

तो हमारी ये यात्रा है वैसे तो पंचाग्नि की ये धूणी तप रही है पंचगिनी में नव दिन से। और 'मानस' के कौन-कौन पात्र किस-किस रूप में पंचधुनी में तपे? और याद रखें मेरे श्रावक भाई-बहन, बहिर् शक्ति के लिए और भीतरी शांति के लिए पंचाग्नि में तपना ही होगा। सती है बहिर् शक्ति, सीता है भीतरी शांति। शंकराचार्य ने सीता को शांति कहा। जिसको भीतरी शांति चाहिए और बहिर् सामर्थ्य चाहिए उसको कभी न कभी अग्निपरीक्षा देनी ही होगी। और मेरे सूत्र को भूलना मत, हर एक परीक्षा अग्निपरीक्षा है। इसलिए तुलसी ने 'विनयपत्रिका' में त्याग को अग्नि कहा, अहंकार को भी अग्नि कहा, कृपा को भी अग्नि कहा, क्षमा को भी अग्नि कहा।

ऐसी आरती राम रघुबीरकी करहि मन।
हरन दुखदंद गोविंद आनन्दघन।।

अब देखो ये तुलसी की पंक्ति, व्याख्या करने को जी करता है ऐसी 'विनय' की आरती कठिन है, गहन है। फिर कभी उसकी चर्चा भी करूंगा। 'अशुभ-शुभकर्म-घृतपूर्ण दश वर्तिका'; वर्तिका मिन्स वाट। कौन वर्तिका है इस आध्यात्मिक आरती की? 'त्याग पावक सतोगुण प्रकाशं।' एमां त्यागनो अग्नि छे। दस वाट वो दस इन्द्रिय है। और शुभ और अशुभ कर्म घृतपूर्ण शुभ और अशुभ कर्म उसी घृत में दस ये इन्द्रियां डूबी हुई है। इन्द्रियां वाट है। कभी शुभ-अशुभ कर्म से मेरी और आपकी इन्द्रियां बाहर आएगी तो तुलसी कहे 'त्याग पावक' जब त्याग का अग्नि जलेगा। और फिर अग्नि जलेगा तो प्रकाश होगा ही; इसमें ये शुभ-अशुभ कर्म जल जायेंगे दशों इन्द्रियों के विषय उसका खोराक है वो खत्म हो जायेगा और 'सतोगुण प्रकाशम्।' सत्त्वगुण का प्रकाश पैदा होगा। 'भक्ति-वैराग्य-विज्ञान-दीपावली।' भक्ति-ज्ञान-वैराग्य ये सब दीपशिखा है, दिपावली है। 'अर्पि नीराजनं जगनिवासं।'

तो 'विनयपत्रिका' में मेरे गोस्वामीजी त्याग को अग्नि कहते हैं। वैराग्य तो अग्नि है ही। त्याग अग्नि है; इसलिए जो लोग त्याग करते हैं उसको बहुत सावधान रहना चाहिए कि त्याग की आग खुद को खतम न कर दे और त्याग की आग जिसको छोड़कर तुम निकल गये हो इस परिवार को भी खतम न कर दे। त्याग की लौं बड़ी प्रज्वलित है। त्याग यदि तमोगुणी हो जाये, त्याग यदि रजोगुणी हो जाये तो दोनों ओर जलायेगा। इसीलिए मेरे गोस्वामीजी 'विनय' में कहते हैं, 'सतोगुण प्रकाशम्।' त्याग सत्त्वगुणी होना चाहिए। कभी-कभी त्याग का अग्नि आदमी को जलाता है। या तो कोई कच्चा त्यागी निकल जाता है तो परिवार खतम हो जाता है। परिवार बेचारा दुःखी-दुःखी हो जाता है और कच्चा त्यागी ये लोक-परलोक दोनों को नाश कर देता है। इसलिए निष्कुळानंद ने कहा, 'त्याग न टके वैराग्य विना।' कोई कोटि उपाय क्यों न करे? 'त्याग' बड़ा पवित्र शब्द, औपनिषदीय शब्द है। 'वैराग्य' शब्द का उपनिषद कम उपयोग करता है, 'त्याग' का बहुत उपयोग करता है। त्याग अग्नि है।

'विनयपत्रिका' का ये बड़ा प्रसिद्ध पद है। मनोरथ तो मैं करता रहता हूं, खबर नहीं, अल्लाह कब पूरा करे! एक 'मानस-विनयपत्रिका' पर कथा करनी है। इसमें सभी 'विनय' का पद लेकर। तुलसी ने रामकथा अपने मन को सुनाई है ये नियम है 'राम भज सुनु सठ मना।' 'मोरें मन प्रबोध जेहिं होई।' 'स्वान्तः सुखाय।' अंतःकरण में मन ओलरेडी आ जाता है। अंतः माने मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार में मन आ जाता है। तो तुलसी ने रामकथा तो मन को सुनाई। लेकिन तुलसी के पास कोई व्यथा नहीं थी क्या? प्रत्येक व्यक्ति के पास कोई ना कोई अग्नि है, कोई ना कोई पीड़ा है, कोई ना कोई समस्या है, कोई ना कोई प्रोब्लेम है। आदमी स्ट्रगल कर रहा है हर एक अग्नि परीक्षा से पास हो रहा है। तो रामकथा अपने मन को सुनाई और 'विनयपत्रिका' में अपनी व्यथा उसने रघुनाथजी को सुनाई। 'विनयपत्रिका' का श्रोता राम है और रामकथा का श्रोता तुलसी का आतमराम है, माने मन है; मन को सुनाई।

दादाजी 'विनय' को बहुत आदर देते थे। त्रिभुवन दादा 'विनय' को बहुत आदर देते थे। तो वहां वडवानल अग्नि पावक-प्रचंड का उल्लेख है। एक ओर पद जो हम गाते रहते हैं, 'बीर महा अवराधिये।' जिसमें क्षमा को अग्नि कहा! ये तो तुलसी ही कह सकते हैं। जहां तक मेरी जानकारी है, एकमात्र तुलसी है जो क्षमा को अग्नि कहे। वरना क्रोध को अग्नि कहे; राग-द्वेष को अग्नि कहते हैं, लेकिन क्षमा को अग्नि! कोई तुम्हारे पर संदेह करे, कोई तुम्हारे पर वहम करे, कोई तुम्हारे पर गैरसमझ करे और कोई तुम्हारे पर आरोप डाले और तुम सच्चे हो तो उसी समय तुलसी कहते हैं, उसके संशय को क्षमा के अग्नि में खतम कर दो; क्षमा कर दो। क्षमा अग्नि है, शीतल अग्नि है। श्रीखंड सम पावक है क्षमा। क्रोध ये भडाग्नि है। तो इस पद में गोस्वामीजी क्षमा को अग्नि कहते हैं।

प्रेम-बारि तरपन भलो, घृत सहज सनेहु।
संसय-समिध, अगिनि छमा, ममता-बलि देहु।
बीर महा अवराधिये, साधे सिधि होय।
सकल काम पूरन करै, जानै सब कोय।

मेरी ममता के पात्र है इसीलिए दिल से कहता हूं मेरे भाई-बहन, तुम्हारे बारे में कोई गलत बात करे, कोई राग-द्वेष करे, कोई कठोर वचन करे तो वो अभी-अभी पैदा हुआ बच्चा है; उसकी हत्या कर दो; बड़ा मत होने दो; याद मत किया करो। उसने मेरे लिए ये बोला था! उसने मेरे लिए ये निंदा की थी! मार दो। बड़ा होगा तो तुम्हें दुःख देगा। हम क्या करते हैं, उसको रोज दूध पिलाते हैं! उसको बहुत जीवित मत रखो; खतम कर दो। हम उसको पालते हैं। जीवन की शांति के लिए अग्निपरीक्षा तो देनी पड़ेगी। लेकिन कुछ सीखना पड़ेगा। नव दिन की ये पंचाग्नि

जो हम तप रहे हैं उसमें कई प्रकार की अग्नि साधक जेल रहे हैं। लेकिन आखिर में नवें दिन तो मुझे ये कहकर बिदा देनी है कि ये पंचाग्नि पचाग्नि हो जाये; पंचाग्नि पच जाये। निंदा पच जाये; कूथली पच जाये; किसी का द्वेष पच जाये; किसी की विकृति हम पचा लें।

आज एक भाई ने मुझे पूछा है, 'बापू, विश्व की अंतिम अवस्था क्या है?' ओशो ने उसका ओलरेडी जवाब दिया है। जब ओशो के दरबार में ये प्रश्न पूछा गया कि आपकी दृष्टि में विश्व की अंतिम अवस्था का नाम क्या है? तब तुरंत जवाब दे दिया, प्रेम। और तलगाजरडा उसके साथ सहमत है। ये ओशो का, प्रबुद्ध व्यक्ति का जवाब है। हां, अंतिम अवस्था सत्य भी है, करुणा भी है। लेकिन सत्य कितना निभा पा रहे हैं? सत्य पर बोला जाता है, जीया कहां जाता है? करुणा की चर्चा होती है। करुणा होती तो हम द्वेष क्यों करते? करुणा होती तो हम दूसरों के पीछे निंदा क्यों करते? ओशो के साथ मेरी सहमती है प्रेम के साथ। कबीर को पूछो, 'ढाई आखर प्रेम का।' मेरे तुलसीदास को पूछो, 'प्रेमाम्बुपुरम् शुभम्।' डूबो; गोता लगाओ; अंतिम अवस्था प्रेम है। इसीलिए परमात्मा अकेला होता है, उसको इच्छा होती है कि किसीसे मैं प्रेम करूं। इसलिए 'एकोऽहम् बहुस्याम्।' ये खुद खेलना चाहता है इसीलिए प्रगट करता है दुनिया। बिलकुल सत्य है। ओशो का जवाब बड़ा प्यारा है। ओशो से ओलरेडी मैंने ये पढ़ा है। इसीलिए मुझे जवाब देने की जरूरत नहीं, वरना मैंने उसको न पढ़ा होता और मुझे देना पड़ता तो मैं यही कहता, अंतिम अवस्था प्रेम है। एक कविता है।

आम तुं तडकाने पीश तो ओगळी जईश।
हे बरफ! गुस्सो करीश तो ओगळी जईश।
हुं स्मरणना पात्रमां पड्यो छुं जो खांड जेम,
जळ बनीने तुं त्यां रहीश तो ओगळी जर्लश।

- अनिल चावडा

'महर्षि विश्वामित्र ऋषि कौन-सी पंचाग्नि की श्रेणी में आते हैं?' विश्वामित्र के पास तीन अग्नि है। एक अग्नि है यज्ञाग्नि। वो यज्ञ करे जहां-जहां; मुनि यज्ञपूर्ति के लिए राम को ले गए। दूसरी अग्नि, विश्वामित्र का स्वभाव बहुत क्रोधी है, क्रोधाग्नि। और तीसरा वशिष्ठ के साथ असूया के कारण द्वेषाग्नि भी है। तीन प्रकार की अग्नि के ये वाहक है। लेकिन राम आने के बाद सभी अग्नि पंचाग्नि भी वो पचाग्नि हो गई; पच गई अग्नि। डूब गए राम के तेजरूपी अग्नि में। मैंने कहा एक दिन कि रूप भी अग्नि है, नाम भी अग्नि है, लीला अग्नि है, धाम भी अग्नि है।

'विनोबाजी किस अग्नि में रहते थे?' विनोबाजी का प्रधान अग्नि रहा विवेकाग्नि। यद्यपि विश्वामित्र को 'मानस' ने महामुनि कहा है और मेरी व्यासपीठ ने विनोबाजी को महामुनि कहा है। विवेकाग्नि; बावलिया का जो विवेक था! उसने जो भाष्य दिए हैं, वेदों के सूत्र जो उसने चुनचुनकर निकाले! और युवान भाई-बहनों को कहूं, विनोबाजी का जो भाष्य है, गीताभाष्य जो जेल में प्रवचन दिए वो पढ़ने जैसे हैं। 'गीता' की एक मौलिक व्याख्या महामुनि विनोबाजी ने की है। 'कुरानसार' उसका पढ़ने जैसा है। विनोबाजी ने पूरे कुरान का सार एक छोटी-सी पुस्तक में दिया। धम्मपद सार, पूरा बुद्ध को नीचो कर सार दिया। महावीर का सार; सभी का सार दिया। बड़ा ऋषिकार्य विनोबाजी कर गये। वे विवेकमार्गी थे।

तो 'रामचरितमानस' में पंचाग्नि की तपस्या माँ जानकी ने की जिसकी चर्चा हम संक्षेप में कर चुके। 'रामचरितमानस' के 'बालकांड' में पंचाग्नि की साधना भगवती सती ने की जिसकी कल संक्षिप्त चर्चा हुई। अब 'रामचरितमानस' का एक तीसरा पात्र जिसने पंचाग्नि की तपस्या की वो है संत भरत। मेरे निवेदन को याद रखिए। कोई भी कसौटी अग्निकसौटी है। कोई भी समस्या अग्निसमस्या है। भरतजी ने पांच प्रकार की अग्नि में जीवन को तपाया। जो दूसरे संदर्भ में कई बार मेरी व्यासपीठ बोल चुकी है। अग्नि को जलाना शायद आसान है, लेकिन जलाते रखना मुश्किल है। समय-समय पर आहुति आवश्यक है। अथवा तो चीमनी जरूरी है कि कोई हवा उसको बुझा न दे। पहुंचे हुए फकीरों की बात ओर है। बाकी हम जब ज्योत जलाते हैं, अग्नि जलाते हैं, हमें ये अखंड अग्नि रखना है तो चीमनी जरूरी है, आवश्यक है। पूरी अयोध्या को भरत प्राणप्रिय हो गये जब भरत ने ये प्रस्ताव रखा। बाकी राज का क्या हो बाद में सोचा जायेगा; हम और आप सब भगवान के दर्शन के लिए प्रातःकाल चित्रकूट की यात्रा पर निकल पड़ें। भरत प्राणप्रिय है। सबने सर्व संमति से ये प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। बाद में जो होना हो राज्य का, हम एक बार ठाकुर का दर्शन करें।

एक पहला अग्नि जो भरत ने जलाया लेकिन वो जलता रहे इसीलिए वो बहुत सावधान तो रहे। लेकिन पहली अग्निकसौटी ये आई कि अखंड नियम को उसको तोड़ना पड़ा। और वो नियम था कि राम अयोध्या से बन गये तो पैदल गये। यद्यपि शृंगबेरपुर तक रथ है लेकिन उसके बाद नौका से गंगा पार करके भगवान पैदल गये। तो भरतजी ने एक व्रत लिया, एक दीप जलाया। वैसे व्रत लेना आसान है, निभाना कठिन है। आप कोई भी नियम ले लो कि सावन महीने में मैं फलाहार करूंगा तो ले रखते हैं; एक महीने तक उसको निभाना कभी कठिन भी पड़ सकता है। भरत ने निर्णय किया, मैं चित्रकूट पैदल जाऊंगा। ये व्रत का दीप जलाया था; ये व्रत की अग्नि जलाई थी। कोई भी व्रत अग्नि है। क्योंकि व्रत कष्ट है, कसौटी है और कसौटी अग्नि है।

इक्कीसवीं सदी में मेरे भाई-बहन, मैं तो प्रार्थना करूं, कोई जटिल-कठिन तप, जप, व्रत उसमें मत जाना। जो सहज हो वो करना। जब भरतजी पैदल चलने लगे तो पूरी अयोध्या के लोग सब वाहन छोड़-छोड़ के नीचे ऊतरने लगे। दो-तीन कारण हो सकते हैं। एक तो भरत राजकुमार है। हमारा राजकुमार नीचे चले; एक आदर, एक विनय, एक शील के खातिर लोग नीचे ऊतर गये। हमारा राजकुमार न बैठे तो हम कैसे बैठे? एक गतानुगति उसने किया वो ठीक ही होगा। नकल करने लगे ये भी हो सकता है। तीसरी बात ये आई, हम कोई कम नहीं है। भरत ये व्रत कर सकता है तो हम भी करे। कोई भी क्रिया स्वाभाविक करे। स्वाभाविक कर्म में आप सफल ही होओगे। निष्फल कभी नहीं होओगे। जब तुम स्वाभाविक कर्म छोड़ दोगे, विफल होने के पूरे खतरे हैं। मुझे कई लोग पूछते हैं, बापू, आप इतनी कथा कहते हैं, कभी अपनी कथा खुद को नीरस लगी है? मैं कहता हूं, नहीं; क्योंकि मैं ये सहज कर रहा हूं। मैं किसी की देखादेखी नहीं कर रहा हूं। ये स्वाभाविक कर्म है।

तो मैं चर्चा कर रहा हूं मेरे भाई-बहन, व्रत और नियम की ज्योति जलाना आसान है, निभाना मुश्किल है। इक्कीसवीं सदी है; बहुत ज्यादा कड़े नियम मत लेना। आप सहज कर सको तो जरूर करियेगा। ज्यादा उपवास भी मत करना। कर सको तो करो; ये कोई मेरी कोई मना नहीं।

तो भरतजी ने जब व्रत लिया, पैदल जाऊं तो कसौटी आई। हर कसौटी अग्नि है। सब देखकर ऊतरने

लगे। तब जाकर माँ कौशल्या ने अपनी डोली भरत के पास ले जाने की कहोरों को आज्ञा दी और डोली उठानेवाले कहोर गये भरत के पास और डोली का परदा उठाकर माँ कौशल्या का वात्सल्य हस्त भरत के सिर पर रखा, बेटे! तू नीचे चल रहा है तो पूरी अयोध्या नीचे चल रही है। और तेरे पिता के वियोग में और राम के विरह में अयोध्यावासियों की शारीरिक स्थिति ऐसी नहीं कि वह चलकर चित्रकूट पहुंचे। कईओं की तबियत बिगड़ेगी। जिम्मेवारी हमारी है। तुम रथ में बैठ जाओ। व्रत की ज्योति की पहली बाधा आई; व्रतभंग, नियमभंग। लेकिन भरत प्रेक्टिकल है, वास्तविक है। भरत ने बहुत अच्छा अर्थ निकाला कि हजारों लोग चित्रकूट जा रहे हैं अयोध्या के। मैं ऐसे पैदल चला कि सब लोगों ने मुझे देखा इसीलिए ये नौबत आई तो सब नीचे चलने लगे। मैं किसीको पता न चले ऐसे चलता तो शायद व्रत पर कसौटी न आती। हमारे नियम और व्रत का जब प्रदर्शन होता है तब कसौटी आती है।

पहली अग्निकसौटी भरत की व्रतभंग। उसके बाद यात्रा आगे बढ़ी। उसके बाद घटना ये घटी शृंगबेरपुर जब अयोध्या का समाज पहुंचा है तो गुहराज और निषाद ये जो गुह का समाज है उसको गेरसमझ हुई कि कैकेयी का बेटा निष्कंटक राज्य करने के लिए निकला है; राम को अकेले वन में मारने के लिए निकला है ताकि चौदह साल के बाद राज्य में कोई भाग न मांगे। ये तो राम के समर्पित हो चुके थे गुह आदि। तो राम के आश्रित होने के कारण पूरे समाज को गुह ने ललकारा। हम जब तक जीवित है, अयोध्या का एक आदमी गंगा पार न करे। हम राम के सेवक हैं। और सब तैयार हो गये। तो भरत राम को मिलने जा रहे हैं। उसके बदले गुह आदि ने सोचा कि भरत विग्रह करने जा रहे हैं। ये कैकेयी का बेटा है। उसके मन में अच्छी भावना नहीं हो सकती। इसका मतलब मेरी व्यासपीठ करती है, ये दूसरी अग्निकसौटी है। जब साधक यात्रा पर निकलता है तो बीच में आनेवाला समाज हमारी यात्रा की आलोचना करता है, गैरसमझ करता है। क्योंकि जैसे तुम भजन के मारग पर चलोगे तो लोग आयेंगे ही बीच में। सब बाधायें, ये सब गैरसमझ होगी; अग्नि कसौटी है। किन-किन के मुंह में तुम स्पष्टता करने जाओ! किन-किन को समझाओगे तुम? शे'र है-

घर से मैं सोचकर निकला हूं कि मर जाना है।
अब कोई राह दिखाये कि किधर जाना है?

सोचकर तो निकला कि मर जाना है लेकिन शायर कहता है कि अब मुझे कोई राह दिखाये कि किधर जाना है?

नशा ऐसा था कि मयखाने को दुनिया समझा,
होश आया तो खयाल आया कि घर जाना है।
- राहत इन्दौरी

प्रेममारग पर चलेगा भरत की तरह तो लोग गैरसमझ करेंगे ही। तो जो प्रेममारग का पथिक होगा उसके बारे में गैरसमझ होगी; दूसरी कसौटी है। लेकिन भरत की तरह यदि हमारी यात्रा, हमारा मार्ग, हमारा मार्गीपना बिलकुल शुद्ध-बुद्ध है तो वो ही विरोध करनेवाले, वो ही गैरसमझ करनेवाले जब पता लग जाएगा कि आदमी सच्चा है तब वो ही आदमी उसका सन्मान करेगा। थोड़ी प्रतीक्षा करो। ये मारग प्रतीक्षा का मारग है। सहन नहीं होगा। जो तुरंत जवाब देने के लिए तैयार हो जाये वो चुक जायेगा। ये दूसरी अग्नि कसौटी भरत की थी। वहां रुके। फिर यात्रा आगे बढ़ी। फिर तीसरी अग्नि कसौटी हुई भरत की। भरद्वाज ऋषि के आश्रम में जब संत भरत आया तो भरद्वाज जैसे सिद्धपुरुष ने, महापुरुष ने भरत की कसौटी करना चाहा। सोचा, अयोध्या का राज छोड़कर ये आदमी आया है। तो रिद्धि-सिद्धि प्रगट हुई और भरद्वाजजी से आज्ञा मांगी, महाराज, हमें हुकम करो। अतुलित अतिथि है राम का भाई तो जैसा देवता ऐसी पूजा होनी चाहिए। आप हमको आज्ञा करो तो इतनी सुख-सुविधा आश्रम में कर दे। भरद्वाजजी ने आज्ञा दी। स्वर्ग में भोग न हो, स्वर्ग में सुविधा न हो ऐसी सुविधा भरद्वाजजी के आश्रम में रिद्धि-सिद्धि ने की। ये भरत की कसौटी है। सब कुछ सुविधा, सब जिसको जो भोग में डूबना हो डूबे, खाये, पीये, मौज करे, नाचे, गाये। और चकवा-चकवी रात के विजोगी पक्षी माने जाते हैं। और सोने के पिंजरे में चकवे और चकवी को आप बंद कर दो। अब पिंजरे का परिसर कितना होता है; अब चकवे और चकवी को मिलना है, चोंच में चोंच डालना है; एक दूसरे के पंख से छूना है। कितनी देर लगती? बिलकुल निकट-निकट है लेकिन रात के वियोगी पक्षी होने के कारण रात होती है तब तक चकवी चकवे के सामने नहीं देखती। चकवा चकवी के सामने नहीं देखता। ये नियम है। मेरे तुलसीदासजी ये रूपक डालते हैं। रिद्धि-सिद्धि के द्वारा जो भोग-समृद्धि वो चकवी है। मुनि मानो इस दो पक्षी को, संपत्ति और साधु को मिलाना चाहते हैं; एक-दूसरों में डुबोना चाहते हैं। लेकिन पूरी रात भरतजी देखते रहे। संपत्ति का प्रभाव ना भरतजी पर पड़ा और चकवे की दृष्टि-साधु की दृष्टि भोगों के प्रति न लालायित हुई। सुबह तक दोनों को रखे लेकिन दोनों अपनी-अपनी जगह असंग रहे।

साधुओं द्वारा कसौटी हुई। भरत उस अग्निपरीक्षा में भी पास हो गए। व्रतभंग की अग्निपरीक्षा; गैरसमझ की अग्निपरीक्षा; मुनि समाज के द्वारा अग्निपरीक्षा। उसके बाद भरतजी आगे बढ़े तो देवराज इन्द्र और देवताओं ने विघ्न डालने चाहा कि भरत और राम की भेंट न हो। बृहस्पति को कहते हैं कि हे सुर गुरु, भरत-राम मिल जायेंगे तो हमारी योजना विफल हो जाएगी। ये राम को लौटा आयेंगे। रावण मरेगा नहीं। हमारे भोग खतरे में! और स्वार्थी देवता लोग बृहस्पति को कहते हैं, हमें बचाओ। मेरे भाई-बहन, चित्रकूट की यात्रा कोई मार्गी बनकर करेगा भरत जैसा साधु, तो उपर से भी विघ्न आयेगा; देवता भी विघ्न डालेंगे। ऊंचे रहनेवाले सब अच्छे नहीं होते। सूर्य की भूल कर्ण को कितनी महंगी पडी? उजाला भूल करे तब उसकी संतान कर्ण बेचारा पग-पग ठोकर खाता रहा! क्योंकि भूल सूर्य की। भूल है कि नहीं लेकिन कुछ गड़बड़ तो है; नियति जो थी चलो। लेकिन यात्रा यदि हमारी सही है, सही मारग है और सही मारगी है तो कोई ना कोई तत्त्व विघ्न करनेवालों को डांटेगा; हमें डांटना नहीं पड़ेगा। बृहस्पति ने डांटा कि राम के स्वभाव को इन्द्र, तू जानता है? राम का अपराध करेगा तो राम कभी गुस्सा नहीं करेंगे, लेकिन उसके भरत का तूने अपराध किया तो राम के क्रोधाग्नि में तू जलकर भस्म हो जाएगा। ये चौथा विघ्न, चोथी अग्निपरीक्षा से भी भरत बाहर आये।

पांचवीं अग्निपरीक्षा बहुत कठिन थी। और भरत उससे भी बाहर आये। और जो चित्रकूट के नज़दीक पहुंचते हैं, ब्रह्म साक्षात्कार के नज़दीक पहुंचते हैं, जो परम की महसूसी के कगार पे पहुंचते हैं; करीब-करीब इतिहास देखने से पता लगता है कि ये कसौटी सबको आती है। और वो कसौटी थी जब चित्रकूट निकट आया; गुहराज ने भरतजी को हाथ ऊंचा करके गिरिराज का दर्शन कराया। कई प्रकार की आनंद की सृष्टि वहां बताई है। सुबह का समय है। जिस ओटे पर, जिस वेदिका पर जनकनंदिनी जानकी ने सुकोमल हाथ से, गाय के गोबर से लिंपन किया है, राम वहां बैठे हैं। लक्ष्मणजी बैठे हैं। मुनि की मंडली बैठी है। सुबह का समय है। रोज का नियम था, संतों से वार्तालाप होता है। ऐसे समय में उत्तर दिशा में धूल ऊड़ रही है। पशु-पक्षी डरडर के राम के आश्रम में सुरक्षा पाने के लिए आते हैं। एक खलभली मच गई! भगवान राम जिस वेदिका पर बैठे हैं, खड़े हो गये कि ये क्या है? ये धूल क्यों ऊड़ रही है? जब से हम चित्रकूट में आये, पशु-पक्षी बिलकुल शांत विहार कर रहे हैं। कौन आया है इस जंगल में कि मेरे पशु-पक्षी इतने परेशान हैं?

भगवान संतों का सन्मान करके बैठे हैं। उत्तर दिशा में भगवान का मुख है। आकाश में धूल ऊड़ रही है। बहुत बड़ी संख्या में पशु-पक्षी सब भाग रहे हैं। कुछ क्षणों के लिए भगवान का चित्त चकित हो गया, ये क्या है? इतने में तो कुछ भील और कौल-किरात दौड़ते-दौड़ते आये, महाराज, हमने सुना कि अयोध्या के राजकुमार भरत-शत्रुघ्न चित्रकूट आ रहे हैं। भरत आ रहा है! और तुलसी की प्रतिक्रिया देखिए, 'सुनत सुमंगल बैन।' सुमंगल वेण जब ठाकुर ने सुना कि भरत आ रहा है, मेरे प्रभु कि आंख में स्नेह के आंसू आ गये, मेरा भाई आ रहा है! आंख में आंसू है, मन आनंद में डूबा है।

तुम्हारे बारे में कोई गलत बात करे, कोई राग–द्वेष करे, कोई कठोर वचन करे तो वो अभी–अभी पैदा हुआ बच्चा है; उसकी हत्या कर दो; बड़ा मत होने दो; याद मत किया करो। हम क्या करते हैं, उसको रोज दूध पिलाते हैं! हम उसको पालते हैं! जीवन की शांति के लिए अग्निपरीक्षा तो देनी पड़ेगी। लेकिन कुछ सीखना पड़ेगा। ये पंचाग्नि जो हम तप रहे हैं उसमें कई प्रकार की अग्नि साधक जेल रहे हैं। लेकिन आखिर में तो मुझे ये कहकर बिदा देनी है कि ये पंचाग्नि पचाग्नि हो जाये; पंचाग्नि पच जाये। निंदा पच जाये; कूथली पच जाये; किसी का द्वेष पच जाये; किसी की विकृति हम पचा लें।

लेकिन दूसरी ही क्षण भगवान चिंतित है कि भरत के आने का कारण क्या होगा? चिंता इसीलिए प्रभु को हुई कि भरत आयेगा और प्रेम से पैर पकड़कर कहेगा कि ठाकुर, घर लौटो तो भरत के प्रेम की रक्षा के लिए मुझे बाप के वचन तोड़ने पड़ेंगे; उसका प्रेम जीतेगा। मेरा वचन छूट जायेगा।

ये सब लक्ष्मणजी देख रहे हैं कि ये क्या है? मेरे प्रभु एक क्षण के पहेले इतने प्रसन्न और एक क्षण के बाद एकदम चिंतित क्यों है? लक्ष्मण को लगा कि मेरे प्रभु के दिल को चोट लगी है। और इतने में तो एक भील आया, राघव, सुनिये प्रभु, अकेले भरतजी नहीं आ रहे हैं, चतुरंगिनी सेना है। चतुरंगिनी सेना? और लखन की भृकुटि घूमी। भरत के हृदय में यदि प्रेम होता तो अकेले आता। चतुरंगिनी सेना लाने का अर्थ शायद ये है कि राम को मार दिया जाय और चौदह साल के बाद कोई कंटक हमारे राज्य में बाधा न डाले। निष्कंटक राज्य करने के लिए भरत आता है। मन में मन में सोच रहे हैं। विष की वेल को अमृत के फूल नहीं लगते। कैकेयी का बेटा है। भरत के प्रति कोई द्वेष है ऐसा नहीं; राम के प्रति अधिक प्रेम उसका कारण है। हम जिसके प्रति ज्यादा सीमा से बाहर प्रेम करेंगे तब उसको कोई कष्ट दे, ऐसी आशंका भी हमें उनके प्रति क्रोध पैदा कर देती है। उसमें द्वेषबुद्धि नहीं है। जागा हुआ आदमी किसीका द्वेष नहीं करता। लखन जागा हुआ है। लेकिन मेरे प्रियतम, मेरे प्रभु को चिंता हो रही है। और फिर जो लक्ष्मण मुखर हुए है! बहुत आक्रोश किया है। बिना पूछे राघव को आज कहने लगे कि महाराज, भरत अच्छा है माना लेकिन जब विषयी जीव को बड़ाई मिलती है तो ये अपनी मूढ़ता दिखाये बिना नहीं रहता। क्योंकि मोह का अंधेरा उसे दिखाने नहीं देता। बहुत बोले हैं लक्ष्मणजी।

इसी घटना को मेरी व्यासपीठ पांचवीं अग्नि परीक्षा मानती है। कोई भी मारगी, कोई भी भजन का साधु उसका अंतिम विघ्न है, तुम अत्यंत निकट हो, पहुंचने की तैयारी में हो, उसी समय तुम्हारे परिवार का निकट का सदस्य ही तुम्हारा विरोध करेगा। और विरोध तो क्या, तुम्हारी हत्या करने तक ऊतर आये! लक्ष्मण ने कहा, भरत को मैं मार दूं। अब राम की भी अग्निकसौटी है। भरत को कोई मार दे, ये राघव कैसे सहन करे? और लक्ष्मण, जो सबकुछ छोड़कर मेरे पीछे रहे; मेरे प्रति प्रेम के कारण वो इतना सब बोला। अब उसको डांटना भी नहीं। अब राम का शील; शीलवान का स्वभाव कैसा होता है? भगवान लक्ष्मण का हाथ पकड़कर कहते हैं, लक्ष्मण, भैया, तू बोलता तो कई बार है लेकिन आज तू बहुत अच्छा बोला। तूने जो ये कहा कि विषयी जीव को जब सत्ता मिलती है, प्रभुता मिलती है तब वो भान भूल ही जाता है। तेरी बात साथ मैं शत प्रतिशत सहमत हूं। लेकिन धीरे से कहा, लखन, भैया, एक बात कहूं। यह बात भरत को लागू नहीं होती। ये भरत को नहीं छूती। भरत को कभी राजमद नहीं हो सकता। ब्रह्मा, विष्णु, महेश ही पदवी भरत को मिलेगी तो भी उसको राजमद नहीं आ सकता। और लखन, तू बुरा मत लगाना भाई। मैंने ज़िंदगी में तेरी कसम कभी नहीं खाई लेकिन लखन, मुझे पिता दशरथ की आन और तेरा सौगंद बाप! इस विश्व में पवित्र और सुबंधु भरत जैसा कोई है ही नहीं। लक्ष्मणजी ने प्रभु के चरण पकड़ लिए, मुझे माफ़ करीए!

यहां भरतजी आते हैं। 'पाहि नाथ कहि पाहि गोसाईं।' भगवान जान गये कि भरत आ गये। भगवान चुप है क्योंकि विरोध करनेवाला आदमी मुझे प्रार्थना करे कि भरत आ गया। प्रभु, देर न करो; उसको ले लो। इसीलिए चुप रहे राम। और लखन ने कहा, राघवेन्द्र, 'भरत प्रनाम करत रघुनाथा।' देखो, तुम्हारी हत्या करनेवाला तुम्हारी प्रार्थना करेगा। ये अंतिम अग्निकसौटी है; अंतिम परीक्षा है। संत भरत की पांच अग्निपरीक्षा, पंचाग्नि इसमें आखरी ये अग्निपरीक्षा थी; खुद का भाई उसको मार देने का संकल्प कर चुका था। शंकर मदद करे तो भी मैं छोडूं नहीं, ऐसा निवेदन कर चुका था। वो ही विरोधी विनय करने लगा।

बाप! हरिभजन के मारगी बनोगे तो ये पंचाग्नि तपना ही पड़ेगा। एक तो व्रतभंग; दूसरा, बीच के समाज द्वारा गैरसमझ; तीसरा, कोई-कोई साधु कसौटी करेगा। चौथा, ऊंचे रहनेवाले लोग, देवता लोग की तैयारी और आखिर में बिलकुल निकटवाला विरोध करेगा; तभी साक्षात्कार कि तभी प्राप्ति। तो भरत पंचाग्नि इसी संदर्भ में तपे हैं। और एक पात्र ओर जो हनुमानजी पंचाग्नि तपे हैं; और एक पात्र ओर जो बाबा कागभुशुंडि पंचाग्नि तपे हैं उसके पंचाग्नि की चर्चा आगे के तीन दिनों में हम करेंगे।

दुनिया की कोई भी विद्या अग्नि है

पंचाग्नि की चर्चा हमारे जीवन के प्रकाश के लिए उपयोगी है इसलिए हम कर रहे हैं। 'रामचरितमानस' की कथा में सीताजी की पंचाग्नि तपस्या, जिसकी चर्चा हमने की। भगवती उमा माँ भवानी की पंचाग्नि, जिसकी चर्चा भी 'मानस' के आधार पर की गई। आज एक जति की पंचाग्नि परीक्षा। सीता भी सती है। उमा भी सती है। लेकिन आज एक जति की पंचाग्नि परीक्षा। और वो जति है हनुमान जति। हनुमान को हम जति कहते हैं। लेकिन संस्कृत भाषा में जति का मूल शब्द है 'यति।' यति मानी संन्यासी। और संन्यासी जो होता है उसको अग्नि को छूने की मना है। तो 'मानस' में दो जति है। एक लक्ष्मण और एक हनुमान जति। रावण भी जति है, लेकिन कुछ समय के लिए। छल करने के लिए, प्रपंच करने के लिए वो वेश का जति है। 'आया निकट जति के बेसा।' जानकी का अपहरण करने के लिए ये जति के वेश में आता है। संन्यासियों में जो बहुत बड़ा यति होता है उसके लिए संन्यास जगत में एक शब्द है 'यतीन्द्र कुल तिलक।' यतियों में इन्द्र और उसका भी तिलक। लक्ष्मण जति होते हुए भी वो अग्नि को छूआ है। यति को अग्नि को छूने की मना है।

लछिमन होहु धरम के नेगी।

जानकी ने कहा, लखन, आप धर्म के नेगी बनो। आप कहीं से पावक ले आओ और अग्नि प्रगटाओ। और मैं अग्नि परीक्षा से पास हो जाऊं। एक अर्थ वो भी है कि सुग्रीव और राम ने मैत्री की तब दोनों ने अग्नि को छूआ है। दोनों ने अग्नि प्रज्वलित किया और सुग्रीव और राम की मैत्री हुई। तो आज हम 'मानस' के आधार पर हनुमानजी महाराज जो जति है, संन्यासी है; और संन्यासी मानी जो गेरुए कपड़े पहने वो तो संन्यासी है ही; हाथ में दंड रखे वो संन्यासी है ही; शिखा का त्याग करे, यज्ञोपवित निकाल दे वो तो संन्यासी है ही; कांचन-कामिनी को छूए नहीं वो तो यति है ही; बहुधा परिव्राजक रहे वो यति है ही; ब्रह्मश्रोत्रिय हो ये यति है ही।

आज एक युवान श्रोता का प्रश्न है, 'बापू, मैंने केमिकल लाईन में डिग्री प्राप्त की है। कुछ कथा मैं टी.वी. पर सुन चुका हूं। यहां मैं प्रत्यक्ष कथा सुन रहा हूं। कथा सुनते-सुनते मुझे आध्यात्मिक पीड़ा हो रही है। और इच्छा होती है कि संसार छोड़ दूं।' भाव तो अच्छा है। पहली बात बाप! अध्यात्म पीड़ा नहीं है। मूल में आप चूक कर रहे हैं, ऐसा मैं नहीं कहूंगा। मैं आप से दिल की बात कहूं। मैं विनोद जरूर करूं। लेकिन मुझे जगत में किसी की भूल नहीं दिखती है। ये मेरी कमज़ोरी है। मुझे किसी की भूलें दिखती ही नहीं। यदि दिखती है तो मुझे मेरी खुद की भूलें दिखती है। लोगों की मान्यता अथवा अमान्यता दोनों ही अग्नि है। 'मानस' में तुलसी ने लिखा कि लोकप्रतिष्ठा एक बहुत बड़ी अग्नि है। जिसको भी मिलती है उसको बहुत सहन करना पड़ता है। 'लोकमान्यता अनल सम।' और जैसे-जैसे लोग प्रतिष्ठा देने लगते हैं और अग्नि बढ़ती है। तो जिसके बारे में लोग बोलने लगते हैं उसका तप का जंगल जलने लगता है। उसका भजन, उसका तप कम होने लगता है। इसीलिए नरसिंह मेहता ने कह दिया कि-

एवा रे अमे एवा रे, तमे कहो छो वळी तेवा रे।

अध्यात्म पीड़ा नहीं है। यद्यपि आधि भौतिक, आधि दैविक और आध्यात्मिक तीनों को ताप कहा है। त्रिबिध ताप इसको कहते हैं। लेकिन ये ताप इनमें आध्यात्मिक ताप, आधि दैविक ताप ये तो है। शरीर में बुखार आया, पित्त प्रकोप हुआ, शरीर में कोई फोल्ला हुआ ये शारीरिक ताप है। आधि दैविक यानी कभी अकाल पड़ा, कभी सूखा पड़ा, कभी सुनामी आया, कभी भूकंप हुआ, कभी कोई अकस्मात हुआ उसको आधि दैविक कहते हैं। उसीमें आध्यात्मिक को भी ताप कहा है। उसमें अध्यात्म पीड़ा है; उसमें युवक, तू सच्चा है लेकिन इतना जरूर समझो कि आध्यात्मिक ताप मूल में ताप है, लेकिन हमारे पास आते-आते शीतल हो जाता है। जैसे सूर्य मूल में ताप है, लेकिन चंद्र आता है तो शीतल हो जाता है।

चंद्र ने सूरज से उधार लिया है ताप। यदि सूरज न हो तो चांद तेजस्वी लग सकता है? विज्ञान मना करता है। जगत में कोई दीप नहीं जलता यदि सूरज नहीं होता। और कहते हैं कि जो स्पेस में जाये उसको पृथ्वी भी तो प्रकाशित दिखती है। लेकिन चंद्र शीतल लगता है। अध्यात्म ताप है, डायरेक्ट लो तो। कोई चंद्रमाँ जैसे शीतल बुद्धपुरुष के थ्रू लो तो ठंडक है। वाया लेना पड़ेगा। ब्रह्म भी एक अग्नि है, ब्रह्माग्नि। ब्रह्म एक अग्नि है। किसी बुद्धपुरुष की शरण में जाना पड़ता है। कोई पहुंचे हुए फ़कीर के पास चुपचाप बैठना पड़ता है।

प्रत्येक विद्या भी अग्नि है। दुनिया की कोई भी विद्या अग्नि है। जिसके पास ये अग्नि होती है वो आदमी रात-दिन जलता है। लेकिन गुरु के थ्रू आये तो सूर्य का ताप शैत्य देता है। सूरज न हो तो भाप न हो; भाप न हो तो बादल न हो; बादल न हो तो नीर ना हो और जल न हो तो कोई पौधा पनपेगा नहीं। चंदन का काष्ट भी, सूरज उसका मूल पियर है। लेकिन ये ताप चंदन के साथ हमारे पास आता है तो चंदन शीतल लगता है। जानकी अग्नि में बैठी है, अग्नि परीक्षा लेकिन 'श्रीखंड सम पावक।' ये अग्नि डायरेक्ट नहीं आया, वाया चंदन आया। ठंडी में हम क्यों हाथ रगड़ते हैं? थोड़ी उष्मा आती है। चंदन घिसो तो उसे तो घिसना ही है, लेकिन अग्नि नहीं, शैत्य पैदा होता है। द्वारिकाधीश के दर्शन करने जाओ, तुमने छप्पन भोग धराया तो हम सीधा उसको ले सकते हैं? और ले भी तो क्या खा सकते हैं? खाये तो क्या पचा सकते हैं? पूजारी जितना दे वो ही ले सकते हैं; वो ही प्रसाद है, वो ही पाचक है। सीधा ब्रह्म नहीं पचेगा; अग्नि है। सीधा अध्यात्म नहीं पचेगा; अग्नि है। किसी बुद्धपुरुष के थ्रू आये तो सूरज की गर्मी शीतल होकर हमारे पर बरसती है। तो मूल में अध्यात्म पीड़ा नहीं, वाया चांद आये तो। डायरेक्ट आये तो पीड़ा ही पीड़ा।

बाप! अध्यात्म पीड़ा नहीं है; पीड़ा तो प्रेम है। प्रेम दर्द है, प्रेम महापीड़ा है। और कभी-कभी एक ऐसी पीड़ा होती है कि वो पीड़ा ही स्वास्थ्य बन जाती है। पीड़ा का अतिरेक तंदुरस्ती में कन्वर्ट हो जाता है। प्रेम है महापीड़ा। वृंदावन में देखो, काशी में जाओ। पीड़ा तो प्रेम की है। पीड़ा तो व्रजवासियों ने पायी। कहां अध्यात्म था व्रजवासियों के पास? वो मुस्कुराता हुआ आया अध्यात्मवादी उद्धव। बड़ा सजधज कर आया। उसको क्या पीड़ा से लेनादेना? वो तो सलाह देता है, क्यों रोती हो, क्यों भूखी हो, क्या ये करती हो? छोड़ो न! लेकिन गोपी कहती है कि ओधो, तू ज्ञान की पोटरी लेकर आया; तुझे क्या पीड़ा? पीड़ा तो प्रेमियों को होती है।

युवक, अध्यात्म को पीड़ा मत समझ बाप! किसी बुद्धपुरुष के थ्रू आये तो ये शीतल है। 'गुरु पूनम नो चांद।' हमारे भजनों में गाया जाता है। इस लिए हम गुरु की अमास नहीं मनाते, गुरु की पूनम मनाते हैं। ये हमारा प्रकाश है। मैं बार-बार कहता हूं, जिसको गुरु मिल जाये उसकी माँ कभी नहीं मरती। हमारा नया जन्म गुरु गर्भ में होता है। माँ के गर्भ में तो संसारी बालक पैदा होता है, गुरु गर्भ में तो नचिकेता पैदा होता है। गुरु गर्भ में श्वेतकेतु पैदा होता है। प्रह्लाद पैदा होता है; ध्रुव पैदा होता है; उपमन्यु पैदा होता है। भगवान राम ब्रह्म होते हुए बोले, जब भरत ने कहा कि मैं अयोध्या में जाके सबको कैसे संभालूं, तो कहा कि 'घर बन गुरु रखवारा।' भगवान कहे, मुझे भी चिंता नहीं क्योंकि रक्षा करनेवाले अपने गुरु है। राम ये कहते हैं। लेकिन चाहिए परम निष्ठा। गुरु और शिष्य एक-दूसरे को खाता है। गुरु खाता है शिष्य की मूढ़ता और शिष्य खाता है गुरु की परम निष्ठा। गुरु से क्या पाना है साहब! गुरु को खाओ। क्या खाना? उसकी निष्ठा; मेरे गुरु का विश्वास कितना अटल है! कितनी-कितनी मुश्केलियां होती है, लेकिन उसका भजन बरकरार है। और गुरु खाता है हमारी मूढ़ता। साधु-ब्राह्मण किसी के घर भोजन करे तो वो हमारी रोटी नहीं खाता। हमारे परिवार का पाप खाता है। उसकी ये महिमा है। कोई साधु भोजन करता है तो प्रसन्नता क्यों होती है? साधु खाना खा रहा है और पाप हमारे चले गये; प्रसन्नता प्रगट हुई। गुरु हमारी मूढ़ता खाता है।

तो बाप! अध्यात्म पीड़ा नहीं है। बुद्धपुरुष के थ्रू ग्रहण करो तो पीड़ा तो प्रेम है। अध्यात्मवादियों की आंख में आंसू कम देखोगे आप। जिसने केवल ज्ञान की चर्चा की है उनकी आंखों में मैंने कभी आंसू नहीं देखे हैं। घडे में जब आप कुछ बहुत भर देते हो और फिर ये छलकता है। किसी

के शरीर में भगवद् भजन इतना भर जाता है तब वो आंखों से बाहर निकलता है। अश्रु मूल्यवान वस्तु है। अश्रु प्रेम की पीड़ावालों की संपत्ति है। और प्रेम की पीड़ा जो सहन करता है वो जिसे प्रेम करता है उसको कभी पीड़ा नहीं देता। प्रेमशास्त्र समझो। उद्धव ने जब व्रज से बिदा ली तब गोपीजनों को कहा कि कुछ कहना है? बोले, कुछ बोलचाल हो गई हो तो माफ़ करना। कृष्ण यहां थे न तब भी हम बहुत शिकायतें करते थे। लेकिन ओधो, एक काम करना; उसको कहना कि वृंदावन आना अच्छा न लगे तो मत आये; कभी भी न आये; हमें भी न बुलाये लेकिन जीव के नाते हम एक चाह करते हैं कि उसको कहना कि जहां रहे बस कुशल रहे।

सब बिधि कुसल कोसलाधीसा।

हनुमानजी लंका गये जानकी को कहने तो जानकी ने पूछा कि भगवान कुशल तो है न? हनुमानजी ने कहा कि माँ, राम सब प्रकार से कुशल है। जानकी ने कहा कि मैं जिसे प्यार करती हूं वो कुशल रहे। और हनुमान ने कहा कि सब बिधि- सब प्रकार से कुशल है।

तो हमारी चर्चा चल रही है, प्रेम पीड़ा है, जो साधक खुद भोगता है। जिसको हम प्रेम करे उसको कभी पीड़ा न होने दे। ओधो, कृष्ण को कहियों, वो जहां रहे कुशल रहे। हमें उसकी कुशलता चाहिए, दर्शन भी नहीं चाहिए। हमें कोई ऐसी खबर न मिले कि वृंदावन प्राणत्याग करे। जब भी खबर मिले, कृष्ण की कुशल की खबर मिले। ये गोपियों की मांग है। अध्यात्मवादियों को कौन पीड़ा होती है?

ये युवक ने लिखा है कि कथा सुनने के बाद ये संसार छोड़ देना है। बेटा, इतनी बड़ी दुनिया क्यों छोड़ते हो? थोड़ी ईर्ष्या छोड़ दो, थोड़ा द्वेष छोड़ दो, थोड़ी निंदा छोड़ दो। छोड़ना ही है तो जो सरलता से छोड़ना हो वो कर दो ना।

ज्ञेयः नित्य संन्यासी योन द्वेष्टि नकांक्षति।

'गीता' कहती है कि ये नित्य संन्यासी है जो द्वेष छोड़ देता है। दुनिया छोड़ने की जरूरत नहीं है। अग्नि परीक्षा में जीओ। जगत में रहकर पंचधुनी तापो। और जानकी की तरह कनक पंक की कलि की तरह बाहर निकलो। सोने की कसौटी से बाहर निकलो।

मैं आपसे निवेदन करने चला हूं कि संन्यासी अग्नि को छूता नहीं। लेकिन यहां दो जति, हनुमान जति और लक्ष्मण जति दोनों सुग्रीव और राम की मैत्री में अग्नि लाते हैं। जानकीजी लक्ष्मणजी से अग्नि मांगती है। तो एक ऐसा जति है ये कि किसी नियम को जड़वत् नहीं पकड़ते। जिस समय जो जरूरी है उसमें असंग रहकर ये काम करते हैं। तो आज हमें चर्चा करनी है हनुमान जति की पंचाग्नि तपस्या। हनुमानजी की पहली पंचाग्नि तपस्या है कि श्रीहनुमानजी जाते हैं 'किष्किन्धाकांड' में राम की परीक्षा के लिए। यद्यपि सुग्रीव के कहने पर गये। और राम का प्रश्नपत्र ही तो रखा है।

को तुम्ह स्यामल गौर सरीरा।

श्याम और गौर आप कौन हो? ये पहला प्रश्न।

छत्री रूप फिरहु बन बीरा।

दूसरा प्रश्न, क्षत्रिय का रूप है आपका तो फिर बन में क्यों घूमते हो? क्षत्रिय तो राज में शोभता है। आप जंगल में क्यों है?

कठिन भूमि कोमल पद गामी।

कवन हेतु बिचरहु बन स्वामी।।

पृथ्वी कठिन है; आपका चरण बहुत कोमल है। आप ऐसे ही क्यों घूमते हैं स्वामी? अभी हनुमान ने पहचाना नहीं लेकिन फिर भी उन्होंने स्वामी क्यों कहा? क्योंकि भगवान उदासीन व्रत है और उदासीन व्रत संन्यासी का माना जाता है। और संन्यासी को हमारी परंपरा स्वामीजी कहते हैं। प्रश्न आगे का-

मृदुल मनोहर सुंदर गाता।

सहत दुसह बन आतप बाता।।

आपका सुकोमल, सुंदर शरीर है और बन में वर्षा, ठंडी, ताप क्यों सहन करते हो?

की तुम्ह तीनि देव महँ कोऊ।

नर नारायन की तुम्ह दोऊ।।

ब्रह्मा, विष्णु महेश तीन देवताओं में से आप दो तो नहीं हो? प्रश्न पर प्रश्न! परीक्षा हो रही है। और फिर कहते हैं कि आप तो दो ही है तो आप नर-नारायण तो नहीं है?

जग कारन तारन भव भजन धरनी भार।

की तुम्ह अखिल भुवन पति लीन्ह मनुज अवतार।।

आगे का प्रश्न, आप जगत का जो कारण तत्त्व ईश्वर माना जाता है वो है? क्योंकि पूरे जगत का कारण तत्त्व ईश्वर है। और ईश्वर कारण है, इसीलिए जगत में कार्य चल रहा है। कारण के बिना कार्य नहीं होता। यद्यपि शुद्ध ब्रह्म को कोई कार्य-कारण सिद्धांत लागू नहीं होता फिर भी लीला विग्रह में जग कारण; और तुलसी भी भगवान को कारण कहते हैं। आप जगत का कारण तो नहीं है? ये संसार को तारनेवाला तारक तत्त्व तो आप नहीं है? चौदह ब्रह्मांड का एकमात्र पति है वो तू है? धरणी का भार ऊतारनेवाला तू है? इतना लंबा प्रश्नपत्र! परीक्षा है।

कोसलेस दसरथ के जाए।

अब भगवान प्रश्नपत्र का उत्तर देते हैं। कौशलेश महाराज दशरथजी के हम पुत्र है। आप राजा के बेटे है? हां। सही जवाब, लेकिन बन में क्यों घूमते?

हम पितु बचन मानि बन आए।

जिस राजा के हम पुत्र है उस पिता के बचन को लेकर हम बन में आये। ठीक है, वन में आये हैं तो केवल घूमने आये, विहार करने आये? बोले, नहीं, एक समस्या आयी है।

इहाँ हरी निसिचर बैदेही।
बिप्र फिरहिं हम खोजत तेही।।

यहां एक राक्षस वैदेही को मानी सीता को अपहरण करके ले गया है। विप्र, हम उसको खोज रहे हैं। प्रश्नों का जवाब दिया। अब आपकी बारी कि हे भूदेव, आप कौन है? और जैसे भगवान ने हनुमानजी की परीक्षा का प्रश्न पूछा और ठाकुर बोले ही कि इतने में हनुमानजी पहचान गए। प्रभु को पहचानते ही ब्राह्मण का रूप सब निकाल दिया। मूलरूप में आ गये। प्रभु मुस्कुराए और ठाकुरजी के चरण पकड़ लिए। उसको उठाया और उसके भगवान ने हनुमानजी को अपने गले लगा लिया। पैर पकड़ लिए परमात्मा के और भगवान ने उठाया; सीने से लगाया। हनुमान को जरा बुरा लगा। कहा, महाराज, मैं तो जीव हूं, मैं भूल जाऊं। आप मुझे कैसे भूल गये? आप तो ईश्वर है, सर्वज्ञ है। फिर भगवान उन्हें प्रसन्न करने के लिए गले लगाकर कहते हैं-

सुनु कपि जियँ मानसि जनि ऊना।
तै मम प्रिय लछिमन ते दूना।।

तीन ही लोग वहां खड़े हैं लक्ष्मण, राम और हनुमान। राम ने हनुमान को गले लगाकर कह दिया कि तू मुझे इस लक्ष्मण से भी दुगुना प्यारा है। शीलवान समझकर व्यक्ति ऐसा कभी बोल ही नहीं सकता। क्योंकि उसको ठेस लगेगी ना।

तलगाजरडी दृष्टि में हनुमानजी पंचाग्नि तप रहे हैं उसीमें पहली अग्नि ये परीक्षा है। अब दूसरी अग्नि जब हनुमानजी सीता शोध के लिए निकले तब पहली कसौटी, पहला प्रश्नपत्र आया।

जलनिधि रघुपति दूत बिचारी।।
तैं मैनाक होहि श्रम हारी।

अंजनी का बेटा सागर से उपर से उड़ान भरा और कसौटी आई। समुद्र ने अपने अंदर मैनाक नाम का एक सोने का पहाड़ था उसको कहा कि तू बाहर निकल और हनुमानजी की परीक्षा कर। विश्राम के नाम से परीक्षा कर। सोने का पहाड़ था।

चाहे शक्ति, चाहे शांति, चाहे भक्ति, सीता के तीनों रूप; शक्तिरूपेण संस्थिता, शांतिरूपेण संस्थिता, भक्तिरूपेण संस्थिता; सीता को प्राप्त करना है उसको विश्राम के बहाने स्वर्ण वैभव बीच में आयेगा। ये कसौटी है। जिसको भक्ति करनी है उसको प्रलोभन आयेगा विश्राम के बहाने। समृद्धि विघ्न है, परीक्षा है, अग्निपरीक्षा है। अहंकार तो मैं क्या करूं? अहंकार करने जैसा कुछ है नहीं। स्वभाव ही नहीं, क्या करे? कोई कुछ समझे तो समझे! बाकी विष्णुदेवानंद दादा ने जब तक वो महामंडलेश्वर रहे, ऋषिकेश के कैलास आश्रम का विकास नहीं होने दिया। मैं शिव साधना के लिए आया हूं, इंटो के ट्रक गिनने के लिए नहीं! ये दादा का जवाब है। ट्रस्टियों को मना कर दिया। विकास मेरे जाने के बाद करना। क्योंकि विश्राम के बहाने लोग हमारी अग्निकसौटी करे। कमरा बनवा देने के बाद फिर सेवक आयेंगे कि बापू ए.सी. लगवा दे। उसका मतलब ये नहीं कि आश्रम में सुविधा न हो। मारुं एक ज सूत्र छे के भजन ना भोगे कांई न कराय।

ये समाज साधुओं को भी घुमाता रहता है! साधु बहुत कर रहे हैं। कितने गायों की रक्षा साधु कर रहे हैं आज! कितने अन्नक्षेत्र चला रहे हैं! कितने निदान

केम्प! साधु लोग बहुत कर रहे हैं। लेकिन मेरी प्रार्थना ये है कि साधु रचनात्मक हो, कार्यात्मक हो। साधु प्रमादी नहीं होना चाहिए। लेकिन, लेकिन, लेकिन भजन के भोग पर कुछ नहीं होना चाहिए। फिर मेरा वाक्य याद करना इस कथा का कि भजन का कोई विकल्प नहीं है। जैसे सत्य का कोई विकल्प नहीं है, ये ओशो का वाक्य है। भजन का कोई विकल्प नहीं, ये मोरारिबापू का वाक्य है। इसका गलत अर्थ करो तो ये तुम जानो लेकिन मुझे मेरी जिम्मेदारी लेनी है कि मैं ऐसा सोचता हूं। भजन की अवेजी में कुछ नहीं। भजन का कोई विकल्प नहीं। वो बहुत शक्ति देता है। तो प्रलोभनों दिखा-दिखा के आराम के नाम से जो अग्नि परीक्षा होती है। तो हनुमानजी को लगा कि सोने के द्वारा मेरी कसौटी हो रही है। तो हनुमानजी ने मैनाक के सिर पर हाथ रखा। सोने को ग्रहण भी नहीं किया और इन्कार भी नहीं किया; केवल छू दिया। 'राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ विश्राम।' तू विश्राम मुझे सोने द्वारा देना चाहता है लेकिन मेरा विश्राम ये सोना भी नहीं है। मेरा विश्राम रामकार्य करने में है; भगवद्कार्य करने में है।

तो दूसरी अग्नि कसौटी स्वर्ण। उसके बाद सुरसा देवताओं के द्वारा भेजी गई एक परीक्षा थी। हनुमानजी को ग्रस लेने की बात करती है। हनुमानजी तीसरी अग्निपरीक्षा से भी पास हो गये। प्रमाणपत्र मिला 'तुम्ह बल बुद्धि निधान।' फिर आगे गये तो एक चौथी परीक्षा आई और जैसे हनुमानजी लंका में प्रवेश करते हैं तो लंकिनी नामक राक्षसी परीक्षा में खड़ी है। हनुमान जैसे ही छोटा रूप लेकर प्रवेश करने गये ही और लंकिनी ने उसे रोक लिया। 'कहां जा रहे हो? मेरा खोराक ही चोर है।' हनुमानजी उनसे बातचीत करते हैं, मारते नहीं है। लेकिन उसने हनुमानजी को कहा, तू चोर है! जो एक साधु है उसको कहा, तू चोर है! तो फिर हनुमानजी से नहीं रहा गया। एक मुष्टिका का प्रहार कर दिया। मुख में से रक्त निकल गया! हनुमानजी को चरण पकड़कर कहने लगी, महाराज, आपने मुझे मुष्टिका का प्रहार किया; मैं प्रहार करने आई थी लेकिन मेरी परीक्षा हो गई।

रक्त निकल गया। मैं आपको चोर कहती थी लेकिन ब्रह्मा ने जाते-जाते मुझे कहा कि एक बंदर लंका में आयेगा और मुष्टि प्रहार से तेरे मुख से रक्त निकल जाये तब समझना कि अब कुछ समय में पूरे राक्षस मार दिये जायेंगे। आज मेरे बहुत बड़े पुण्य है कि मैंने आज रामदूत का दर्शन किया। जो चोर कहती थी उसको अब संत का दर्शन होने लगा। क्योंकि किसी संत की मुष्टि प्रहार हमारी बुद्धि पर हो जाय और बुद्धि शुद्ध हो जाय तो चोर की जगह साधु दिखने लगेंगे। दृष्टि बदल गई। हनुमानजी ये चौथी अग्नि परीक्षा से पास हुए। पांचवीं परीक्षा स्वयं हनुमानजी को जलाने की कोशिश की गई लंका के दरबार में।

तो मेरे जति हनुमान इसी प्रकार वो अपनी पंचाग्नि परीक्षा से उत्तीर्ण हुए। तो कौन-कौन पंचअग्नि तपे हैं उसकी चर्चा 'मानस' के आधार पर हम कर रहे हैं। और मैं ये समझता हूं कि जीवन को धन्य बनाने के लिए हम सब को किसी न किसी रूप से अग्नि कसौटी देनी चाहिए। लेकिन वो अग्नि हमारे लिए शीतल हो जाएगा यदि कोई बीच में बुद्धपुरुष होगा तो।

गरल सुधा रिपु करहिं मिताई।
गो पद सिंधु अनल सितलाई।।

अग्नि शीतल हो जाएगा। केवल सीता के लिए नहीं, हनुमान के लिए भी शीतल हो जाएगा। और केवल हनुमान के लिए नहीं, बल्कि भजन करेगा उन सभी के लिए संसार की अग्निकसौटी शीतल हो जाएगी। केवल सत् का संग किया जाय। ये ही काम। सत्संग है क्या? पांच कमरे में यात्रा करने का नाम सत्संग है। ये सब तलगाजरडी विधा है। आज तक हमें कोई पता नहीं है कि तमोगुण क्या है, रजोगुण क्या है, सतोगुण क्या है? सत्संग करने से पता लगता है कि तमोगुण है क्या? प्रमाद, क्रोध, द्वेष, प्रतिक्रिया, प्रतिशोध ये सब तमोगुण है। सत्संग करने से इन विकारों की थोड़ी परख हो जाएगी। डोक्टर के पास जाने से हमें पता लगेगा कि हमें ये बीमारी है। विकार ही है केवल ये समझ में आये तो आदमी इसे तुरंत छोड़ देगा। हमें विकार का पता नहीं। इसीलिए सत्संग का पहला कमरा है तमोगुण। तमोगुण की जानकारी के बाद भी हम लडाकु है, बात-बात में गुस्सा करते है, हमें नींद आ जाती है। ये सब तमोगुण है। हमें प्रमाद आ जाता है। ये सत्संग का पहला कमरा है। लेकिन अच्छा है, कम से कम विकार से परिचित तो हुए हम और आप।

सत्संग आगे बढ़ा तो दूसरा कमरा आयेगा रजोगुण। रजोगुण आयेगा तो इसका मतलब ये नहीं कि क्रोध मिट जाएगा। लेकिन रजोगुण के कमरे में प्रवेश करने से क्रोध करने के बाद फिर ग्लानि भी आयेगी। हमने सत्संग किया था और हमने क्रोध कर दिया? अभी तो हम महापुरुष के पास बैठे थे और बाहर निकलते ही गाली देने लगे? ये ग्लानि, अपराधभाव ये रजोगुण कमरे का प्रभाव है। फिर तीसरा कमरा आता है सत्संग में उसे कहते हैं सत्त्वगुण। क्रोध नहीं करेगा। विकारों से परिचित हो जाएगा। लेकिन सत्त्वगुण के कमरे में आने से वो शांत रहेगा; मौन रहेगा। लेकिन उसमें भी थोड़ा एक खतरा है कि लोग मुझे कहे कि वाह! आप तो बहुत मौन रहते हैं। कोई जाने, किसी को खबर पहुंचे ये चाह रहती है। उसके बाद एक चौथा कमरा रहता है उसमें युग निकल जाता है; सत्संग करते-करते हमारा साक्षात्कार सत् से होने लगता है। लेकिन उसमें सत् भी भिन्न है। हम भी भिन्न है। कमरा सत् का है; हम एन्टर हुए हैं। तो दोनों अभी भिन्न है। बाप! अनुभव ऐसा कहता है कि उसके बाद पांचवां कमरा है, वहां सत्संग नहीं रहता बल्कि सत्संग करनेवाला सत्रूप बन जाता है। उसीको ही मुझे लगता है कबीर साहब 'सत साहेब' कहते हैं। सत साहेब पांचवें कमरे का प्रवेश है। यहां सत् नहीं रहा। सत् और साधक बिलग होता है। आदमी सत्रूप हो जाता है। और उसको 'भागवत' सच्चिदानंदरूपाय कहते हैं। तो मेरे भाई-बहन, ऐसी ये पंचाग्नि में यदि कोई बुद्धपुरुष का आश्रय हो तो आग शीतल बन जाती है। इसलिए आमंत्रण है 'रामायण' का, सत्संग में प्रवेश करो।

तो हनुमानजी पंचाग्नि में तपे हैं। और अब एक बाकी है कागभुशुंडि जो पंचाग्नि में तपे हैं। हवे तमारा थोडाक प्रश्नो ने एमांय कविता तो होय ज!

प्रेमना प्रकरण विशे कंई बोलवानुं छोडीए।
चोपडीमां एक वच्चे कोरुं पानुं छोडीए।
कंठमां शोभे तो शोभे मात्र पोतानो अवाज,
पारकी रूपाळी कंठी बांधवानुं छोडीए।
-हेमेन शाह

'बापू, द्रौपदी ने कौन-सी पंचाग्नि तपी है? और दादा भीष्म ने कौन-सी पंचाग्नि तपी?' दोनों के बारे में व्यासपीठ कह सकती है लेकिन मैं कहूंगा तो द्रौपदी की पंचाग्नि नहीं कहूंगा, भीष्म की भी नहीं करूंगा। यदि मैंने कहा तो मैं कर्ण की पंचाग्नि कहूंगा। तपा तो है मेरा कर्ण पंचाग्नि में। सूरज का बेटा है इसीलिए सही तपा है। और द्रौपदी पंचाग्नि तपी है। वो स्वयं अग्नि से मिलती है। उसको अग्नि ज्यादा परेशान नहीं कर सकती। सबसे ज्यादा पंचाग्नि की धूणी यदि किसी ने तपी है तो वो है मेरा कर्ण। आज इतना ही।

रामकथा के क्रम में भगवान शिव सती का त्याग करते हैं और दूसरे जनम में शिव और पार्वती की शादी होती है। और भगवान शंकर कैलास पर पार्वती के पूछने पर रामकथा का आरंभ करते हैं। उसमें रामजनम के पांच कारण बताते हैं। अंतिम कारण प्रतापभानु का जो दूसरे जनम में रावण बना। कड़ी तपस्या की। अगम वरदान प्राप्त किये। और वरदान प्राप्ति के बाद रावण पूरे संसार को बहुत त्रास देने लगा। पृथ्वी पापीओं से अकुला गई है। गाय का रूप लेकर ऋषिमुनियों को, देवताओं को सबको लेकर ब्रह्माजी के सामने पुकार की है। सब मिलकर ब्रह्मा की अगवानी में परमात्मा को पुकार रहे हैं। आकाशवाणी हुई, धैर्य धारण करो। मैं धरती पर रघुकुल में अवतार धारण करूंगा।

अयोध्या में रघुवंश का शासन, सूर्यकुल। उसी परंपरा में वर्तमान गादीपति दशरथ ज्ञानी है, भक्त है। कौशल्यादि प्रिय रानियां है। सबका आचरण पवित्र है। सबके हृदय में भाव-भक्ति है लेकिन राजा के मन में एक पीड़ा है कि मुझे पुत्र नहीं है। महाराज दशरथजी गुरुद्वार गये हैं। गुरुद्वार मानी गुरु का आश्रय; गुरु का द्वार इसका अर्थ व्यासपीठ ये भी करती है कि गुरु दीवार नहीं है, गुरु स्वयं द्वार है। वशिष्ठजी के पास गये। अपने सुख-दुःख सुनाये, बाबा, आपकी कृपा से सब प्रसन्नता है लेकिन पुत्रसुख नहीं है। मुस्कुराते हुए बाबा वशिष्ठ ने कहा, अभी तक धैर्य रखा है, और थोड़ा धैर्य रखो। एक नहीं, चार पुत्रों के पिता हो जाओगे। एक विधा से गुज़रना होगा। महर्षि शृंगी को आचार्य पद दिया। पुत्र कामेष्टि यज्ञ का आरंभ हुआ। भगति सहित, प्रेम सहित आहुतियां प्रदान की गई। आखिरी आहुति में यज्ञनारायण अग्नि के रूप में अग्निकुंड से स्वयं बाहर आये; प्रसाद का चरु वशिष्ठजी को देते हुए कहा, राजा को दीजिए और कहो कि अपनी रानियों को जथाजोग बांट दे। राजा ने रानियों को बुलाकर आधी खीर कौशल्या को, पा भाग का प्रसाद कैकेयीजी को और पा के दो भाग करके कैकेयी और कौशल्या के हाथों से सुमित्रा को दिलवाया। तीनों रानी सगर्भा स्थिति का अनुभव करने लगी।

समय बीता। प्रभु प्रगटने का अवसर निकट आया। पंचाग अनुकूल हुआ। त्रेतायुग, चैत्रमास, शुक्लपक्ष, मध्याह्न का दिवस, भौमवासर। अयोध्या में मंगल सगुन होने लगे। सरिता में अमृत बहने लगा। मंद, सुगंध, शीतल वायु बहने लगे। समस्त ब्रह्मांड जिसमें निवास करता है ऐसा परमात्मा, भगवान, ईश्वर, परब्रह्म जो कहो वो कौशल्या के राजभवन में प्रकाश रूप में प्रगट हुए। प्रकाश आकारित हुआ। चतुर्भुज रूप लेकर प्रभु माँ कौशल्या के सन्मुख हुए। बालक के रुदन को सुनकर ओर रानियां भ्रम सहित दौड़ आई! महाराज दशरथ को बधाई देते हुए समाचार दिए गए। पहली अनुभूति महाराज को पुत्रजन्म की बात सुनकर ब्रह्मानंद का अनुभव हुआ। जिसका नाम सुनने से शुभ हो जाये वो मेरे घर प्रगट हुआ, कौन मानेगा? वशिष्ठजी आये और सब बातें खुल गई कि परमात्मतत्त्व पुत्र रूप में प्रगट हुआ है। महाराज को परमानंद की अनुभूति हुई। अयोध्या में राम प्रागट्य का उत्सव का आरंभ हुआ है। पंचगिनी की ये भूमि पर से आप सभी को रामजनम की बधाई हो।

प्रत्येक विद्या भी अग्नि है। दुनिया की कोई भी विद्या अग्नि है। जिसके पास ये अग्नि होती है वो आदमी रात-दिन जलता है। लेकिन गुरु के थू आये तो सूर्य का ताप शैत्य देता है। सूरज न हो तो भाप न हो; भाप न हो तो बादल न हो; बादल न हो तो नीर ना हो और जल न हो तो कोई पौधा पनपेगा नहीं। सीधा ब्रह्म नहीं पचेगा; अग्नि है। सीधा अध्यात्म नहीं पचेगा; अग्नि है। किसी बुद्धपुरुष के थू आये तो सूरज की गर्मी शीतल होकर हमारे पर बरसती है। तो मूल में अध्यात्म पीड़ा नहीं, वाया चांद आये तो। डायरेक्ट आये तो पीड़ा ही पीड़ा।

मानस–पंचाग्नि – ८

सत्संग से आदमी की स्पृहा कम होती है

कुछ प्रश्न एक जैसे हैं और खास करके युवा भाई-बहनों के है इसलिए वहीं से शुरू करूं। ''बापू, हम पहली बार रूबरू में कथा सुन रहे हैं। कोलेज-युनिवर्सिटी परीक्षाओं के कारण हम हर एक कथा नहीं सुन पा रहे हैं। यह पहला अवसर है कि हम रूबरू कथा सुन पा रहे हैं। हमें बहुत अच्छा लगा। जो अग्नि की बात हो रही है ऐसी अग्नि किसी न किसी रूप में हमें जुवानी में छूती है। ऐसी अग्नि हम पचा पाए इसलिए कुछ कहें।'' युवानों की बात है तो मैं कहूं। स्कूल-कोलेज में पढ़नेवाले मेरे युवान भाई-बहन, मैं आपके पास कुछ बातें रखूं यदि आप कर सके; कोई दबाव नहीं है। तो पांच वस्तु में सावधान रहे तो यह पंचाग्नि कुछ नहीं कर पाएगा। यह पंचाग्नि जो आदमी को घेर लेता है उसमें से बचना है अथवा तो उसको पचाना है तो पांच वस्तु सीधी-सादी है। कहीं-कहीं मैंने कोलेजों में, युवानों के प्रोग्राम में अथवा तो मुझे याद है, राजकोट सौराष्ट्र युनिवर्सिटी में जब विद्यार्थीओं के सामने कुछ दिन मुझे बोलना था तब मैंने यह बात खास रखी थी। कोई यह न समझे कि यह केवल युवानों के लिए, केवल विद्यार्थीओं के लिए है। इस महान पाठशाला में हम सब विद्यार्थी है। एक बहुत बड़ी पाठशाला है जीवन की। इसमें हम सब छात्र है लेकिन पर्टिक्युलर विद्यार्थीओं ने पूछा है एक जैसे सूर में।

बच्चों, पांच वस्तु के बारे में आप जागृत रहे। आपको हमारी तरह तिलक करने की जरूरत नहीं है; माला रखने की जरूरत नहीं है; ऐसे कोई गणवेश-पोशाक रखने की जरूरत नहीं है; पादुका पहनने की जरूरत नहीं है; अंगूठे पर चंदन करने की जरूरत नहीं है; हवन-पूजा-पाठ करने की जरूरत नहीं। हां, हररोज 'रामचरितमानस' या 'भगवद्गीता' अथवा तो जो कोई अनकूल पड़े उसका पांच मिनट पाठ करो तो बहुत है। आप जीवन को एन्जोय करो; अच्छे कपड़ें पहनो; सब कुछ करो लेकिन पांच वस्तु में पहला सूत्र, जहां तक हो अपना विचार शुद्ध रखो। अग्नि से बचने का पहला उपाय। आप कहेंगे कि बापू, हम विचार करना नहीं चाहते हैं फिर भी आते हैं! आई नो। हवा आती है तो हम रोक नहीं पाते लेकिन हम दरवाजा बंद कर सकते हैं कि इतनी तीव्र हवा न आए। बिना हवा, बिना विचार से आप बहुत अकुला उठे तो थोड़ी खिड़की खोलो, थोड़ी बंद करो। विचारों को शुद्ध रखे। विचार तो आएंगे। हम निर्विचार नहीं हो सकते। तो बेटर है कि शुभ विचार हो।

वेद क्या कहता है? 'आनो भद्रा क्रतवो:।' हमें दशों दिशाओं से शुभ विचार आए। युवान भाई-बहन, जीवन के मध्य में पांच प्रकार की अग्नि कहीं हमें जलाये तो शुद्ध विचार रखने की कोशिश करे, बस। बहुत कड़ी ठंडी हो तो वो जाएगी नहीं हमारे कहने से लेकिन एक कम्बल ओर ओढ़ना है। बहुत गरमी हो तो चूटकी बजाकर गोरखनाथ की तरह हम गरमी में से ठंडी नहीं कर सकते। गोरखनाथ कर सकते थे अपनी सिद्धियों के कारण। हम पंखा दो में से तीन पर कर सकते हैं। ए.सी. की व्यवस्था हो तो ए.सी. शुरू कर दे। थोड़ा जागृति के साथ प्रयास करे कि हमारा विचार शुद्ध रहे; शुभ रहे। गलत विचार आए किसी के बारे में तो उसके बाद तुरंत परमात्मा को प्रार्थना करो, मेरे यह विचार है प्रभु, मेरे विचार सच मत होने देना। अपनी ही बुरी सोच को सफल न हो ऐसी हरि से प्रार्थना करो। मेरा बोलना आसान है। मैं खुद समझता हूं, विचारों को शुद्ध रखना बहुत कठिन है। लेकिन हम जागृति से थोड़ा कर सकते हैं।

विचार शुद्ध रखो। थोड़ा प्रयोग करना बस। मच्छर आएंगे; गुडनाईट जलाओ, मच्छरदानी रखो या तो आपकी बोडी ऐसी बनाओ कि वो काटे ही ना। जैसे मच्छर आते हैं तो हम उपाय करते हैं कि मच्छर न आए। यह आते हैं। असत्य विचार आते हैं; दुर्बल विचार आते हैं; अंधेरे के विचार आते हैं इसलिए उपनिषदों ने कहा, 'असतो मा सद्गमय।' हमें असत्य से सत्य की ओर ले चलो। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय।' हम प्रयास कर सकते हैं। जीवन में आनेवाली पंचाग्नि से मुक्त होना है तो विचार को शुभ करो। अभ्यास करने से फायदा होता है, ऐसा महापुरुषों का अनुभव है।

दूसरा, कई लोगों के विचार शुद्ध होते हैं लेकिन विचार प्रस्तुत करने की पद्धति शुद्ध नहीं होती। अपने विचार प्रस्तुत करने की पद्धति कटु होती है। कई लोग अंदर से तो शुद्ध होते हैं लेकिन बोलते हैं तो पथ्थर गिरते है! कटु सत्य। इसलिए मैं युवान भाई-बहनों से कहना चाहूंगा कि विचार शुद्ध रखो और हमारा उच्चार, उस विचार को पेश करने की

पद्धति भी शुद्ध रखो। हम कटु सत्य बोलते हैं। शास्त्र मना करता है। 'प्रियं ब्रूयात्। सत्यं ब्रूयात्। सत्यं प्रियं हितं च।' तैतरिय उपनिषद का पाठ तो बहुत प्यारा है। मैं बीच में बोलते-बोलते रह गया। आप मेरे साथ बोलना-

ऋतं च स्वाध्यायप्रवचने च।।
सत्यं च स्वाध्यायप्रवचने च।।
तपश्च स्वाध्यायप्रवचने च।।
दमश्च स्वाध्यायप्रवचने च।।
शमश्च स्वाध्यायप्रवचने च।।
अग्न्यश्च स्वाध्यायप्रवचने च।।

स्वाध्याय मानी विचार-होमवर्क। तेरे स्वाध्याय में सत्य हो लेकिन वो सत्य तेरे प्रवचन में भी हो। इसलिए उपनिषदों में या तो एक संकल्प पत्र है, 'सत्यं वदिस्यामि ऋतं वदिष्यामि।' यह जो संकल्प है उपनिषदों का। आदमी के विचार बहुत अच्छे होते हैं लेकिन उसकी बोली जो कटु है। सत्य की पेशगी मधुर है। हमने सिद्धांत बना लिया कि हम सच्चे हैं इसलिए कड़वे हैं। एक अपना बचाव कर लिया! मैं कटु सत्य पक्ष में नहीं हूं। सत्य कड़वा होता है! मैं इसमें सहमत नहीं हूं। उच्चार बदलो बाप! कर्कश बोली से बाहर आओ। उच्चार की शुद्धि रखो। सच बोलो वरना मत बोलो। यह सब हम कर सकते हैं। शांति से बोले। थिंक ट्वाईस बिफोर स्पीक। दो बार सोचो बोलने से पहले। बात सीधी-सादी है। वाणी अग्नि है। मेरा और आपका मुख अग्नि है। हम ईश्वर के अंश है। ईश्वर का मुख 'मानस' में अग्नि बताया है।

आनन अनल अंबुपति जीहा।

भगवान का विराट रूप का वर्णन किया गया तब तुलसीजी कहते हैं, महात्मा, आपका चेहरा अग्नि है। आपकी जीभ अंब, पति वरुण देव है। इसका मतलब चेहरा भले अग्नि हो लेकिन आपकी जीभ शीतल रखना।

तीसरा सूत्र है आहार शुद्ध रखना। हमारा खाना-पीना शुद्ध रहे। तुम्हारी कंपनी, तुम्हारी सोबत; आज का जो कल्चर है वो तुम्हारी कंपनी तुम्हें कहेगी कि यह खाने में क्या तकलीफ़ है? पूरी दुनिया खाती है। थाणे में कथा थी वहां ३१ डिसेम्बर थी। किसी ने मुझे चिठ्ठी लिखी, बापू, कथा सुनकर हम पीते तो नहीं लेकिन आज ३१ डिसेम्बर, पूरी मुंबई नया साल मनाएगी तो क्या ३१ को हम पी सकते हैं? मैंने हां कह दी। मैंने कहा, ठीक है। मैंने सोचा, मेरे श्रोता ने पूरे साल पीना छोड़ दिया। बेचारा कहता है, ३१ को महेफ़िल लगेगी तो मैं इसे कैसे मना करूं? जिसने मुझे ३६४ दिन दे दिये। एक दिन मांगा तो मैंने व्यासपीठ से हां कह दी। कोई बावा ऐसा हा नहीं कह सकता! और दूसरे दिन उसने मुझे कहा, बापू, मैंने नहीं पी। ना मैं इतनी ताकत होगी तो हां मैं कितनी ताकत होगी? हां मजबूत होती है। नकारात्मक सोच इतनी बलवत्तर है तो हकारात्मक क्या कमजोर होगी? प्यार से मैंने कह दिया; उसने नहीं पीया। धीमे-धीमे छोड़ो। आहार शुद्ध रखो। शास्त्रों में लिखा है, जिसका आहार शुद्ध है उनकी सत्त्व शुद्धि होती है। उसका अंत:करण पवित्र होता है। शुद्ध आहार लेना वो निराहार का तप है। भूखे रहना वो निराहार का तप नहीं है। शुद्ध आहार का भोग ठाकोरजी को लगा सको तुलसीपत्र डालकर ऐसा भोजन आप लो तो ऐसा भोजन तप है। संस्कृत में व्यसन का अर्थ होता है महादु:ख। व्यसन स्वयं दु:ख है। युवान भाई-बहनों को खास एक बार आदत पड़ गई फिर बहुत मुश्किल है। तुम्हारा चित्त खराब होगा। आहार शुद्ध होना चाहिए।

युवान भाई-बहन, चौथा सूत्र है व्यक्ति-व्यक्ति के साथ परस्पर शुद्ध व्यवहार रखें। इसमें कोई तिलक करने की जरूरत नहीं; माला फिरने की जरूरत नहीं; ध्यान करने की बात नहीं है। कोई विशेष बात नहीं है। मित्र, भाई-बहन कोई भी रास्ते में मिले उसके साथ व्यवहार हमारा शुद्ध रहे। परस्पर जो एक रीतभात होती है वो प्यारी रहे। परस्पर व्यवहार सत्त्वपूर्ण रहे और शुद्ध रहे। मज़ाक भी ऐसी मत करो कि कहीं उसमें विकार का संकेत हो। हास्य-विनोद भी ऐसा मत करो जिसमें किसीको बुरा लगे।

पांचवां और अंतिम; हम चौबीस घंटे परस्पर व्यवहार में नहीं रहते। हम रात को या सोते समय या तो जैसा हम अकेले होते हैं। अकेला हमें होना चाहिए। उसके लिए मैं शब्द यूझ करता हूं 'विहार।' विहार अकेले में होना चाहिए; व्यवहार परस्पर होता है। हो सके तो आहार समूह में करो। उच्चार सबका शुभ हो ऐसा करो और सोचो 'सर्वे भवन्तु सुखिन:।' व्यवहार अपना एकांत। कसौटी तो एकांत में है। विहार शुद्ध हो; सम्यक् हो। नाचो, गाओ, झूमो। मैं सब छूट देता हूं। अच्छे कपड़ें पहनो यार! हिन्दुस्तान में जन्मे हो। ऋषियों के संतान हो। बहुत कमाया हो। दसवां हिस्सा भी समझदारी से निकाल रहे हो; खूब मौज करो। अच्छे

कपड़ें पहनो। अच्छे गहनें पहनो। लेकिन ऐसे कपड़ें पहनो जिससे तुम्हारी वृत्ति का परिचय हो। वस्त्र वृत्ति का परिचय है। वस्त्र वृत्ति का एड्रेस है। 'मानस' में लिखा है इसलिए कह रहा हूं। लेकिन व्यक्तिगत व्यवहार शुद्ध हो। कुछ युवक भाई-बहन, जो पहली बार कथा सुन रहे हैं उसके लिए यह जवाब है और सबके लिए जवाब है। बोलना ठीक रखे; आहार ठीक रखे; परस्पर व्यवहार ठीक रखे; व्यक्तिगत विहार ठीक रखे। अग्नि पच जाएगी। तो आपके प्रश्न का मेरी समझ में जो अनुभव है वो यह जवाब है; कोई दबाव नहीं है। आप जरा सोचिएगा।

बिरह अगिनि तनु तूल समीरा।
स्वास जरइ छन माहिं सरीरा।।

'मानस-पंचाग्नि।' सती माँ पार्वती के जीवन में, संत भरत के जीवन में, साधु-संत के रूपवाले हनुमानजी के जीवन में पंचाग्नि की कुछ चर्चा हमने की। फिर भुशुंडि की पंचाग्नि क्या है? यह पशु है; वो शास्त्र के अनुसार कर्म के अनुसार पशु-पक्षी बने हैं, ऐसा शास्त्रकार कहते हैं। वो घूमते हैं, फिरते हैं, खाते हैं, पीते हैं; वो कर्म का भोग भोगते हैं लेकिन पशु-पक्षी अपनी योनि से प्रमोशन हो ऐसा कुछ साधन नहीं कर पाते। इन्सान इसलिए महान है कि कर्मों से मनुष्य तो बने हैं और कर्म का फल भोगे लेकिन अगला जन्म दिव्य हो इसलिए साधन कर सकते हैं। उसीका बहुत बड़ा साधन है भगवद्कथा। यह इसके द्वारा हम अपने आपको आगे बढ़ा सकते हैं, हम कर सकते हैं। यह सफल माध्यम है भगवद्कथा। गार्गी गोत्र ने सिद्ध कर दिया। गंगा वो ही न वो ही थोड़ी होती है? जितनी बार हरिद्वार जाओ, गंगा नई लगती है। कबीर रोज नये लगे। नानक रोज नया लगे। ज्ञानेश्वर, तुकाराम, मीरां, तुलसी रोज नये लगे। भगवद्कथा रोज नई। एक वृक्ष होता है, रोज कुंपले फूटती है। सत्संग हररोज नई-नई कुंपले निकालता है। मुझे आप पूछो तो मैं आपको अनुभव में कहूं, सत्संग से सबसे पहला काम होता है, आदमी की स्पृहा कम होती है। स्पृहा कम हो जाए, समझ लेना सत्संग के एक कमरे में आपने प्रवेश कर लिया। मैं देखता हूं, मेरी सेवन्टी यर्स की यात्रा में कथा के माध्यम से कई लोगों की स्पृहा कम हो गई है। मैं कहता हूं, थोड़ा धंधे में ध्यान दो। कहे, बापू, छोड़ो ना! यहां जो मौज आती है वो धंधा में कहां आती है? यह प्रत्यक्ष प्रमाण है। मुझे कोई पूछे, कथा क्या करती है? युवान इतने कथा सुनने आते हैं; इतने मधुर-मधुर प्रश्न करते हैं; युनिवर्सिटी, अपनी कोलेज सब कुछ छोड़-छोड़ कर आते हैं। हुआ क्या आपको? और कैसे-कैसे प्रश्न पूछते हैं? बापू, Who are you? Who am I? उसका खुलासा करो। Who am I? -रमण महर्षि। Who are you? -वेदव्यासजी। जरा सोचो, तुम कौन हो, तुम कौन हो? अर्जुन ने भले नहीं पूछा, मैं कौन हूं? लेकिन कृष्ण ने कह दिया, 'ममैवांशो', तू मेरा अंश है बेटा! कोई ऐरगैर नहीं है। तुलसी कहते हैं, 'ईश्वर अंस जीव अविनासी।' रमण महर्षि कहते हैं, Who am I ? Who am I? वेद व्यासजी कहते हैं, Who are you? Who are you ? I और You निकाल दो। मेरे तुलसी ने कहा, 'मैं अरु मोर तोर ते माया।' इसलिए नरसिंह मेहता कहे, 'हुं करुं, हुं करुं ए ज अज्ञानता।' निकालो I, निकालो you. खाली am और are रखो। खाली छुं। और मेरी मदद में आते हैं 'शून्य' पालनपुरी।

छुं शून्य ए न भूल ओ अस्तित्वना खुदा,
तुं तो हशे के केम पण हुं तो जरूर छुं!

सत्संग करते-करते हमारी आकांक्षाएं, कामनाएं कोई अन्य स्पृहा न रहे केवल राम प्रेम के सिवा। कोई किसी भी पुकार से शुकदेवजी कहते हैं, हमारा मन कृष्ण में समर्पित रहो। 'श्रीमद् भागवत' का सूत्र है हमारा मन कैसे भी भाव से, अभाव से, वियोग से, योग में, पुकार में, पीड़ा में, मौन में, चिखने में, कैसे भी मन गोविंद में लगे। तो स्पृहा कम होती है। स्पृहा कम हो इसका फायदा यह होता है कि जितनी स्पृहा कम होती है इतनी दूसरों के साथ स्पर्धा भी कम होती है। स्पर्धा बढ़ती है स्पृहा के कारण। मुझे इतना मिला, इसको ज्यादा मिला; इसी स्पृहा से स्पर्धा शुरू होती है। जितनी स्पृहा कम इतनी स्पर्धा कम। स्पृहा बढ़ी, स्पर्धा बढ़ी। स्पर्धा बढ़ती है फिर द्वेष, फिर निंदा। स्पृहा कम होने से स्पर्धा कम होगी। और जैसे-जैसे स्पर्धा कम होगी तब श्रद्धा आएगी। यह पूरा क्रम है। श्रद्धा तो तैयार है आने के लिए लेकिन हमने जगह कहां रखी है? सत्संग स्पृहा कम कराता है। तुम खूब सत्संग करो तो धीरे-धीरे तुम्हारे व्यसन कम होते जा रहे हैं। स्पर्धा कम होने लगती है तो श्रद्धा को जगह मिलती है। और श्रद्धा जैसे-जैसे हमारे चित्त में आसन जमाती है तो श्रद्धा के बिना भटकता हुआ विश्वास कभी न कभी श्रद्धा के पास आएगा। सती के बिना शंकर भटकते थे। कभी उपदेश देते थे, कभी कथा सुनते थे। अकेली श्रद्धा नहीं रहेगी। श्रद्धा के बाद विश्वास आएगा। विश्वास आएगा तो भक्ति आएगी। भक्ति मानी प्रेम। प्रेम आया तो प्रेम ही परमात्मा है।- जिसस। सत्संग पशु नहीं कर पाता। आगे के नूतन जीवन के लिए उसके पास साधन-सामग्री नहीं है। हमारा फायदा यही है कि हम आगे अपनी गति कर सकते हैं। उसमें सबसे बड़ा सफल माध्यम हो तो वो सत्संग है। कथा के रूप में हो, सत्संग के रूप में, किसी भी प्रोग्राम के रूप में, सुगम संगीत के प्रोग्राम के रूप में, लोक संगीत के रूप में हो कोई भी हो। हमारे जीवन की पंचाग्नि को शांत करने के कुछ उपाय हमें मिलते हैं।

आज मुझे आपके सामने कागभुशुंडि की पंचाग्नि कहनी थी। जीव तो सबका पवित्र है। अंश के रूप में सब चेतन है, अनल है, लेकिन कभी-कभी ऐसे कुल में जनम होता है तो फिर यह दिखे बिना न रहे! भुशुंडि पहले शूद्र रूप में जन्मा था। और उसमें थोड़ी विद्या प्राप्त कर ली। गंगासती ने ठीक कहा-

कुपात्रनी पासे पानबाई वस्तु न कहेवी।

मैं क्यों कहता हूं, मेरे नाम के आगे सभी विशेषण प्लीज़, प्लीज़, निकाल दो। बापू के पीछे 'जी' तो नहीं! पात्रता न हो फिर भी कहे, प्रातःस्मरणीय परमपूज्य! कागभुशुंडि 'उत्तरकांड' में अपनी आत्मकथा गरुड को सुनाते हुए कहते हैं, मेरी पात्रता नहीं थी और अधमता ने विद्या प्राप्त कर ली और जैसे सर्प को दूध पिलाया गया! कागभुशुंडि कहते हैं, मेरी उग्र बुद्धि दंभ बन गई। मुझे मेरी विद्या मिल गई और थोड़ा धन मिल गया। धन में मैं मदमत्त हो गया; मेरी बुद्धि उग्र हो गई। मुझे थोड़ा धन मिल गया गरुड! मेरी बुद्धि उग्र हो गई। उर में दंभ हो गया। उस समय उसको यह अच्छा लगता था। समझ न आये तब गलत रास्ता भी हमें सही लगता है। मेरी दृष्टि से तलगाजरडी दृष्टि से यह तपाग्नि क्रोधाग्नि है। फिर वो आते हैं उज्जैन में। वहां वैदिक ब्राह्मण, उसको गुरु बनाके उससे शिवमंत्र लेते हैं लेकिन वैष्णवों का विरोध करते हैं। हरिजनों को देखते ही कहता है कि मैं जलता था वह थी द्वेषाग्नि; यह दूसरी अग्नि। विष्णु का द्रोह करता है उस समय उसको पता नहीं था, मेरा गुरु सम्यक् बोधवाला था। हरि-हर में कोई भेद नहीं। मेरी पादुका देखकर ही शिवमंत्र दे दिया। मैं शिव उपासक लेकिन वैष्णव को देखकर मुझे बहुत जलन होती थी। विष्णु का द्रोह किया। बाकी रहा तो एक बार महाकाल के मंदिर में मैं शिवनाम जपता था। और यहां उसके गुरु आते हैं लेकिन वो खड़ा होकर आदर नहीं देता। कागभुशुंडि अब तीसरी अहंकार की अग्नि में बैठे हैं इसलिए गुरु आया, उठकर प्रणाम नहीं किया। सम्यक् बोधवाला मेरी दृष्टि से यह बुद्धपुरुष सह गया, पी गया लेकिन 'सही नहीं सके महेस।' तब भगवान शंकर कोपित हो गये। शाप दिया। गुंज उठा महाकाल का मंदिर। महादेव बोले, तेरे गुरु तो सम्यक् बोध का आदमी है इसलिए तुझ पर क्रोध नहीं कर रहा है लेकिन तुम्हारा मार्ग भ्रष्ट हो जाएगा; श्रुति मार्ग भ्रष्ट हो जाएगा। भयंकर अग्नि कसौटी है जिसमें भगवान शंकर कब तीसरा नेत्र खोल दे खबर नहीं! ऐसी एक अग्नि भयंकर प्रज्वलित हुई है लेकिन यह चौथा अग्नि जिसमें से गुरु ने बचा लिया। फिर साधु ने 'रुद्राष्टक' गाया-

निराकारमोंकार मूलंतुरीयं।
गिराग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।।
करालं महाकाल कालं कृपालं।
गुणागार संसारपारं नतोऽहं।।

यह चौथी अग्निपरीक्षा। उसमें से बचा लिया उसके गुरु ने। हमारे यहां कहा जाता है, हरि रुठे तो गुरु की शरण में जाए लेकिन गुरु रुठे तो कहां जाए? लेकिन मुझे लगता है, गुरु रुठे ही नहीं। हां, त्रिभुवन गुरु रुठ गया लेकिन उसका जो बुद्धपुरुष था वो नहीं रुठा। उसने तो 'रुद्राष्टक' गाया। शिव प्रसन्न हुए। परमसाधु ने कहा, महाराज, माफ़ करिएगा। यह मेरा बच्चा है। इन पर कोप ना करो। उसको माफ़ करो। भगवान शंकर ने कितने शाप दे दिये थे? जो बोल गये थे वो तो होना ही था लेकिन मेरे मत के अनुसार यह चौथा अग्नि।

दूसरे जन्म में ब्राह्मण का जीवन मिला। एक पुकार का अग्नि था वो गया; वो जो उग्र बुद्धि थी वो भी चली गई। स्वभाव शांत हो गया। दंभ सब निकल गया। लोमस के सामने उसने कहा कि यह सभी अग्नि शांत हो जाएगी लेकिन यह पांचवां अग्नि था वो आज तक भुशुंडि को जला रहा है और वो है-

एक सुल मोहि बिसर न काहु।
गुरु कर कोमल सील सुभाऊ।।

एक आग लगी है। बोले, कौन-सी? मेरे गुरु का स्वभाव अति कोमल है; उसका जो शील है, वो आग कायम भुशुंडि को जलाती है। जीवन में कोई भी परीक्षा हो, अग्नि

परीक्षा हो वो देनी चाहिए, उससे बाहर निकलना चाहिए।

तो बाप! 'मानस-पंचाग्नि' के बारे में कुछ बातें आपके सामने रखी। अब तो कल का दिन बाकी है उसमें आपके सामने उपसंहारक बातें करूंगा। आज जो प्रसंग है वो कह दूं लेकिन इससे पहले जो बाते हैं। दो-तीन कविता भी आई है।

देरी-मंदिर शोधीशोधी लोक निरंतर फर्या करे छे।
रोजरोज सरनामुं बदली जाणे ईश्वर फर्या करे छे।
दर्शन छोडी प्रदक्षिणामां रस केवो 'मिस्कीन' पड्यो छे?
भीतर प्रवेशवाने बदले चक्कर चक्कर फर्या करे छे!

-राजेश व्यास 'मिस्कीन'

आओ, जो थोड़ा समय है उसमें कथा का थोड़ा विहंगावलोकन करें। कल हमने अति संक्षेप में भगवान राम की प्रागट्य की कथा का गायन किया। जैसे माँ कौशल्या ने पुत्र को जन्म दिया; सुमित्रा ने दो पुत्र को जन्म दिया। एक महीने तक समय कैसे निकला किसी को पता ही नहीं चला। चारों भैयाओं का नामकरण वशिष्ठ महाराजजी ने किया। राजन्, जिसके नाम से आराम, विश्राम का अनुभव होगा उस बालक का मैं राम नाम रखूं। जो विश्व का भरण-पोषण करेगा ऐसी प्रकृतिवाले बालक का नाम हम भरत रखेंगे। जिसके नाम से शत्रुबुद्धि का नाश होगा, मैत्री प्रगट होगी ऐसे बालक का नाम मैं शत्रुघ्न रखूंगा। और समस्त जगत का आधार ऐसे सुमित्रानंदन का नाम मैं लक्ष्मण रखता हूं। वशिष्ठजी ने चारों पुत्रों का नामकरण किया। फिर चूडाकरण, यज्ञोपवित संस्कार। गुरु के आश्रम में विद्या प्राप्त करने गये। अल्प काल में विद्या प्राप्त की। जो विद्या प्राप्त की थी वो अपने जीवन में उतारने लगे।

एक दिन महर्षि विश्वामित्र आते हैं। राम-लक्ष्मण की मांग करते हैं। महाराज दशरथजी पहले तो मना करते हैं; बाद में पुत्रों को दे देते हैं। रास्ते में ताडका को निर्वाण दिया। विश्वामित्र महाराज राम को पहचान गये। आश्रम में लाकर बला-अतिबला नाम की विद्या राम को दी उसमें अग्नि विद्या दी ऐसा भी व्यास का मत है। जो विद्या दी उसमें अग्नि विद्या थी जो औपनिषदीय विद्या है। दूसरे दिन सुबाहु को निर्वाण। मारीच को बिना फणे का बाण मारकर समुद्र तट पर लंका में फेंक दिया। फिर विश्वामित्र के कहने पर धनुषजग्य जनकपुर में हो रहा है इसके लिए निकले। रास्ते में अहल्या का उद्धार किया। उसके बाद भगवान गंगा के तट पर गये। स्नान किया।

ठाकुर पदयात्रा करके जनकपुर पहुंचे। जनकजी आये। स्वागत किया। 'सुंदरसदन' में ठहराया। दोपहर का भोजन करके विश्राम किया। सायंकाल भगवान विश्वामित्र से आज्ञा लेकर लक्ष्मणजी को नगरदर्शन कराने ले जाते हैं। प्रथम रात्रि पूरी हुई।

दूसरे दिन सुबह पुष्पवाटिका में भगवान राम गुरु की पूजा के लिए पुष्प लेने गये। वहां जानकीजी और राम की पहली मुलाकात हुई। एक-दूसरे एक-दूसरे को समर्पित हुए। यह तो ब्रह्म है, लीला है। जानकी भवानी के मंदिर में दुबारा आई और माँ पार्वती की स्तुति करने लगी। पार्वती प्रसन्न हुई; मुस्कुराई; बोली, जानकी, तुम्हारे मन में जो सांवरा बस गया वो तुम्हें मिलेगा। सगुन होने लगे। सखियों के संग सियाजु भवन में लौटी। यहां जानकी की सुंदरता की सराहना करते हुए भगवान राम गुरु के पास आये। पुष्प से गुरु की पूजा की। भगवान राम को आशीर्वाद दिया। दूसरा दिन पूरा हुआ। उसके बाद धनुषभंग का दिन था। एक के बाद एक राजा धनुष तोड़ने का असफल प्रयास करते हैं। कोई तोड़ नहीं पाया। जनकजी जरा आक्रोश कर बैठे। लक्ष्मणजी का भी आक्रोश। विश्वामित्रजी ने राम को कहा, उठो, जनक के संताप को शांत करो। भगवान गुरु के आशीर्वाद लेकर धनुष्य कैसे उठाते हैं, कैसे तोड़ते हैं, कोई नहीं समझ पाया! क्षणार्ध में धनुषभंग होता है। जानकीजी ने प्रभु के गले में जयमाला पहनाई। भगवान परशुराम का आगमन हुआ। थोड़ा विवाद-संवाद चला। आखिर में भगवान का प्रभाव जानकर परशुरामजी की बुद्धि के द्वार खुल गए। राम की स्तुति की और तपस्या करने के लिए अवकाश प्राप्त कर लिया।

दशरथ बारात लेकर पहुंचे। मागशर शुक्ल पंचमी के दिन गोरज बेला। राम-जानकी, लक्ष्मण-ऊर्मिला, शत्रुघ्न-श्रुतकीर्ति और भरत-मांडवी चारों का विवाह संपन्न हुआ। कुछ दिन बारात रुकी फिर विदाय हुई। रास्ते में निवास करते-करते दशरथजी का समाज अवध पहुंचता है। मेहमान बिदा होते चले। आखिर में विश्वामित्रजी विदाय होते हैं और तुलसी 'बालकांड' पूरा करते हैं।

'अयोध्याकांड' के आरंभ में राम राज्यारोहण होने का था लेकिन वचन के कारण राम का वनवास हुआ। रथारूढ होकर राम, लक्ष्मण, जानकी सुमंत के रथ में वनयात्रा करते हैं। तमसा तीर निवास किया। उसके बाद भगवान गंगा के तट पर पहुंचे। सुमंत को बिदा दी। केवट से पैर धुलवाकर नौका में बैठकर गंगा पार हुए। वहीं से पदयात्रा करके भरद्वाजजी के आश्रम गये। फिर दूसरे दिन रास्ता पूछा। शिष्यों के माध्यम से भगवान आगे बढ़े। बीच में से गुहराज को बिदा और भगवान वाल्मीकि के आश्रम में पहुंचे। वाल्मीकिजी से भगवान पूछते हैं, अब हमें ऐसी जगह बताओ जहां हम चौदह साल रहे। वाल्मीकिजी मुस्कुराये, महाराज, आप तो सर्वव्यापी है। ऐसी कौन जगह है जहां आप न हो? फिर भी अध्यात्म स्थान में चौदह स्थान बताये। भगवान चित्रकूट जाते हैं। वहां सुमंत लौटते हैं। दशरथजी का प्राणत्याग। भरत का आगमन। पितृक्रिया। राजकीय चर्चा और आखिर में पूरी अयोध्या को लेकर भरत चित्रकूट आये। बहुत बड़ी-बड़ी सभाएं हुई और अंत में तो प्रेमी ही बलिदान देता है। भरत ने कह दिया, आपका मन जिसमें राजी रहे ठाकुर, ऐसी आज्ञा करो। भगवान ने कृपा करके पादुका दी। जनक का समाज भी आ गया था। सब लौटे। फिर गुरु का आशीर्वाद लेकर पादुका राज सिंहासन पर स्थापित की। माँ की आज्ञा लेकर भरतजी ने नंदिग्राम में निवास किया।

'अरण्यकांड' में भगवान चित्रकूट छोड़कर अत्रि के आश्रम में आते हैं। अनसूया और जानकी का संवाद। अत्रि ने स्तुति की। फिर सरभंग को दिव्य गति। उससे आगे

सत्संग से सबसे पहला काम होता है, आदमी की स्पृहा कम होती है। स्पृहा कम हो जाए, समझ लेना सत्संग के एक कमरे में आपने प्रवेश कर लिया। मैं देखता हूं, मेरी सेवन्टी यर्स की यात्रा में कथा के माध्यम से कई लोगों की स्पृहा कम हो गई है। मैं कहता हूं, थोड़ा धंधे में ध्यान दो। कहे, बापू छोड़ो ना! यहां जो मौज आती है वो धंधा में कहां आती है? यह प्रत्यक्ष प्रमाण है। भगवद् कथा से स्पृहा कम होगी। स्पृहा कम होने से स्पर्धा कम होगी। और जैसे-जैसे स्पर्धा कम होगी तब श्रद्धा आएगी। यह पूरा क्रम है। श्रद्धा तो तैयार है आने के लिए लेकिन हमने जगह कहां रखी है? सत्संग स्पृहा कम कराता है।

सुतीक्ष्ण महाराज मिले। वहां से आगे कुंभज ऋषि के आश्रम में आए। कुंभज से मंत्रणा की। विचार-विमर्श किया। कुंभज ऋषि ने कहा, आप पंचवटी में गोदावरी के तट पर निवास करो। भगवान गोदावरी तट पर जाने के लिए निकल पड़े। गीधराज से मैत्री हुई। भगवान पंचवटी में निवास करते हैं। एक दिन लक्ष्मण की जिज्ञासा पर पांच प्रश्नों का उत्तर दिया। फिर शूर्पणखा आई। दंड़ित हुई। खर-दूषण को उकसाया। प्रभु ने खर-दूषण को वीरगति दी। यहां शूर्पणखा रावण को उकसाती है। रावण मारीच को लेकर माया सीता का हरण करता है। जटायु ने कुरबानी दी। रावण ने सीता का हरण किया। अशोक वाटिका में रखा। मारीच निर्वाण करके प्रभु लौटे। सीताविहीन पंचवटी कुटिया देखकर प्राकृत जीव की तरह रोने लगे। मानवलीला की। उसके बाद जटायु को निर्वाण देकर भगवान कबंध का उद्धार करते हैं। शबरी के आश्रम में आते हैं। शबरी के सामने भगवान ने भक्ति की नव प्रकार की चर्चा की। शबरी के मार्गदर्शन अनुसार भगवान पंपसरोवर की यात्रा करने के लिए तैयार हुए। उससे पहले शबरी ने योगअग्नि में अपने को जलाया। भगवान पंपा सरोवर आये। नारद ने संतों के लक्षण की जानकारी मांगी। प्रभु ने बहुत बड़ा साधुओं के गुणों का लिस्ट दिया।

'किष्किन्धाकांड' में कथा आगे बढ़ी। हनुमानजी के माध्यम से सुग्रीव और राम की मैत्री हुई। बालि का निर्वाण हुआ। सुग्रीव का राज्याभिषेक हुआ। अंगद को युवराजपद मिला। भगवान चातुर्मास प्रवर्षण पर्वत पर करते हैं। वर्षाऋतु बीती। शरदऋतु आ गई। फिर भी सुग्रीव ने कोई काम नहीं किया। प्रभु ने थोड़ा भय दिखाया। सुग्रीव शरण में आया। जानकी की शोध की योजना हुई। मुख्य-मुख्य बंदरों को दक्षिण में भेजने का निर्णय हुआ। इसका आगेवान अंगद है; हनुमानजी उसके सदस्य है; मार्गदर्शक है जामवंत। सबने बिदा ली। हनुमानजी सबसे पीछे चरण छूते हैं। प्रभु ने उसको मुद्रिका दी। निकल पड़े। स्वयंप्रभा से मिले। संपाति से मिले। आखिर में जानकी की खबर संपाति ने दी, जानकी अशोक वृक्ष के नीचे लंका में है। सत जोजन सागर को नांघ ले वो जानकी तक पहुंच सके। अब जाए कौन? सबने अपनी बल की सीमा का वर्णन किया। आखिर में हनुमानजी जो चुप बैठे थे उसको जामवंत ने कहा, आपका अवतार ही तो राम के लिए है। आप चुप क्यों है? मेरा अवतार राम के लिए सुनते ही हनुमानजी पर्वताकार बन जाते हैं। मार्गदर्शन लेकर सीता खोज के लिए यात्रा पर निकलते हैं। यहां 'किष्किन्धाकांड' पूरा होता है। 'सुन्दरकांड' शुरू होता है-

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।

श्रीहनुमानजी महाराज माँ जानकी तक पहुंच जाते हैं। माँ ने आशीर्वाद दिया। हनुमानजी ने माँ की आज्ञा से मधुर-मधुर फल खाये। राक्षस रोकने आये तो कई को मारे। इन्द्रजित आता है। हनुमानजी को बांधकर लंका की सभा में पेश करता है। रावण के साथ बातचीत की। आखिर में मृत्युदंड की बात आई। सेवकों, सचिवों ने मना किया, दूत को मृत्युदंड देना राजनीति और युद्धनीति से विरुद्ध है। उसको जला दो। हनुमानजी की अग्नि कसौटी हुई। पूरी लंका को हनुमानजी ने उलट-पलट जला दी। समंदर में कूद पड़े। माँ ने चूडामणि दिया। चूडामणि लेकर बाबा लौटे। मित्रों को मिले। माँ का संदेशा लाया। सुग्रीव से बात कही। प्रभु हनुमानजी को गले लगाते हैं। हनुमानजी चरण में गिर पड़े।

सब समुद्र के किनारे पर आ गये। डेरा डाला। यहां रावण की सभा में खबर मिली। विभीषण ने सलाह दी। रावण ने चरणप्रहार किया। विभीषण मंत्रियों के साथ निकल पड़ा। राम ने उसको शरणागत रखा। मार्गदर्शन दिया। सत जोजन सागर है, अब क्या करे? बोले, प्रभु, आपके कुल का ज्येष्ठ माना जाता है यह समुद्र। आप बल का उपयोग न करके तीन दिन अनशन पर बैठे। समुद्र ने जवाब नहीं दिया तो भगवान ने धनुषबाण उठाये। ब्राह्मण के रूप में समुद्र आया। समुद्र ने कहा, आप जलाओगे तो जल जाऊंगा। सेतु बांधोगे तो आपका नाम भी और मेरा नाम भी अमर हो जाएगा। सेतु बनाने का प्रस्ताव निश्चित हुआ। 'सुन्दरकांड' पूरा हुआ।

'लंकाकांड' के आरंभ में सेतु बन गया। भगवान रामेश्वर की स्थापना हुई। शिव के आशीर्वाद लेकर सेना ने लंका के सुबेल पर डेरा डाला। रावण मनोरंजन के लिए आया है। रसभंग किया। दूसरे दिन राजदूत की भूमिका में अंगद संधि के लिए गया। लेकिन संधि हुई नहीं, युद्ध अनिवार्य हुआ। युद्ध का आरंभ होता है।

व्यासपीठ स्वयं पंचाग्नि है

बाप! पंचाग्नि की यह पावन भूमि पंचगिनी जिसमें स्वान्तः सुखाय कथा के आयोजित आज विराम के दिन पुनः एक बार व्यासपीठ से आप सभी को मेरा प्रणाम। 'फाधर्स डे' की बधाई। आज 'फाधर्स डे' है। विश्व आज के दिन को मई महिने में 'मधर्स डे' मनाता है। जून में 'फाधर्स डे' मनाया जाता है। मैं आपको बाप कहता हूं; आप मुझे बापू कहते हैं। अरस-परस 'फाधर्स डे' की बधाई। लेकिन फाधर-मधर तो पूरी दुनिया में होते हैं। 'जनम हेतु कहँ पितु माता।' लेकिन हम भारतीयों को 'फाधर्स डे' मनाना है तो शिवरात्रि को मनाना चाहिए। क्योंकि-

जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।

कविकुल चूडामणि कालिदास ने कहा, जगत का पिता मेरा महादेव है। शिव का परम दिन है शिवरात्रि। यह डे मनाना जरूर। मैंने पहले आपको बधाई दी। हमारा 'फाधर्स डे' होना चाहिए शिवरात्रि। और हमारा 'मधर्स डे' होना चाहिए नवरात्रि। हम डे में नहीं मानते। हम रात्रि में मानते हैं। क्योंकि उपासना-प्रेम भी रात्रि में होता है। दिन में तो पूरा जगत व्यवहार करता है। रात्रि में भजन का प्रेम, विश्वास की सेवा, श्रद्धा की आरती। श्रद्धा मानी नवरात्रि और विश्वास मानी शिवरात्रि। यह डे तो मनाना लेकिन आध्यात्मिक रूप में भारतीयों के लिए 'फाधर्स डे' शिवरात्रि और 'मधर्स डे' नवरात्रि। एडवान्स में नवरात्रि 'मधर्स डे' और अगले साल आनेवाला 'फाधर्स डे' शिवरात्रि की आप सबको बधाई हो, बधाई हो, बधाई हो।

तुषारभाई शुक्ल की कविता 'फाधर्स डे' पर पढ़ लूं। बापू, आज फाधर्स डे। भगवान राम अने दशरथनो संबंध तो पुत्र-पिताना संबंधना उदाहरणनुं उच्चतम शिखर। राम-दशरथ, आपणे कदाच एने आंबी तो न शकीए पण पोताना पिताने तो स्मरणांजलि आपी शकीए ने?

जातनी साथे जीववा अमने तमे न रह्या याद।
आज नथी तमे पासमां त्यारे याद बनी वरसाद।
वृद्ध नहीं समृद्ध हता तमे वात हवे समजाणी।
याद आवतो हाथ ए माथे आंख आजे भींजाणी।

तुषारभाई, खुश रहो बाप! 'फाधर्स डे' की आप सबको बधाई। जो कुछ समय है उसमें थोड़ी संवादी बातें करें। कल हम सायंकाल को बैठे थे तब पंचाग्नि की बात चली तब बात हुई कि व्यासपीठ स्वयं पंचाग्नि है। उसका आकार ही चिता जैसा है। चिता पर सोया जाता है। इस पर बैठा जाता है। सोनेवाला तो मरा हुआ है; उसको आग से क्या लेना-देना? आग तो जीवित व्यक्ति के लिए है। वो तो सो गया। पूरा स्मशान गृह जला दो, क्या लेना-देना है? आत्मा को आग नहीं जलाती। अब तो शरीर को भी कोई लेना-देना नहीं है। जला दो। वो चिता तो मृतक को जलानेवाली है। यह चिताग्नि है। जिसको व्यासपीठ की चिताग्नि पर बैठने का उमंग हो और भवनाथ पर भरोसा हो उसको आग जला नहीं पाती। तो व्यासपीठ स्वयं पंचाग्नि है।

मेरे पास इतने प्रश्न आते हैं, 'बापू, 'महाभारत' में पंचाग्नि कितनी तपी?' 'महाभारत' छोड़ो; पांच हजार साल हो गये। रामकथा छोड़ो; हजारों साल हो गये। हम सब पंचाग्नि में तप रहे हैं। कहीं न कहीं हम आग में बैठे हैं। यह पंचाग्नि पचाग्नि कैसे हो जाए? यह अग्नि शीतल कैसे हो जाये? केवल हमें उजास दे, हमें विवेक दे। इसलिए यह कथा गुरुकृपा से इसी सब्जेक्ट पर चली। अचानक गुरुकृपा से यह प्रवाह चला। व्यासपीठ स्वयं पंचाग्नि है। आप जहां

भी बैठते हो; कोई राजपीठ पर बैठते हैं। जहां भी लोग बैठते हैं; जहां हमारा स्थान हो यह पंचाग्नि है साहब!

एक-दो भाईयों ने पूछा है, 'बापू, व्यासपीठ की पंचाग्नि के बारे में कुछ कहे।' व्यासपीठ की पांच अग्नि बाप! एक, जैसे मैंने कहा कि व्यासपीठ का आकार चिता जैसा है। कई लोग विशेष त्यौहार होते हैं तो अग्नि पर चढ़ाते हैं। देवी पूजक होते हैं वो उबलते हुए तेल में हाथ डलवाते हैं। लेकिन पांच मिनट, दस मिनट, नौ दिन व्यासपीठ पर बैठना वो बहुत बड़ी अग्नि कसौटी है। यह आसान काम नहीं है। हां, भगवान की कथा को हल्की-फुल्की ले ली कि चलो, हरि भजन भी हो और गुजारा भी हो; यह भी एक अच्छा है। मैं इस विचारों को भी कबूल करता हूं; वो बुरी बात नहीं है। लेकिन जिसका जन्म-जन्मांतर का जीवन व्यासपीठ है। उसका सेप चिता का है इतना ही नहीं, यह आग है। कोयले काले होते हैं, भस्म सफेद होती है। अतीत के धूणे में जब भी चिपिया डालोगे, आग निकलेगी। बहुत अनुभव के साथ बोल रहा हूं। अतिशय वर्षा में आग नहीं है क्या? अतिशय वर्षा में धुंआ निकलता है। ए.सी. शुरू कर दो तो धुएं निकलते हैं। कैलास भी आग है, जो शीतल लगता है ठंडा। कहते हैं, अत्यंत गुनहगार जो अपना गुन्हा कबूल न करे उसको बर्फ़ की पाट पर दिगंबर सुलाया जाता है। और कहते हैं कि पांच-दस मिनट में मान जाता है। यह आग है देखने में शीतल लेकिन भीतरी आग है। मेरी खादी की सफेद चादर को भस्म समझना और यह जो काली जितनी चीज़ें है उसको कोयला समझना। सफेद कुर्ते को भस्म समझना। यह आग है। ध्यान इतना ही रखना पड़ता है, 'कहीं दाग न लग जाये।' और दाग न लगे उसका ध्यान इसलिए रखना पड़ता है कि गुरुनुं बानुं न लाजे। मोरारिबापू क्या? कई लोग आते हैं, जाते हैं शताब्दियों से। लेकिन यह चिताग्नि चिंताग्नि का रूप क्यों लेती है? एक ही कारण-

कहीं दाग न लग जाये।
गोरे तन पर चमके बिजुरियां।

गुरु का वर्ण गोरा होता है। आपने सुना है, 'कर्पुर गौरं करुणावतारं' और कृष्ण का रंग काला है तो वो गुरु नहीं ऐसा नहीं। वो भी जगद्गुरु है। कृष्ण के समान भीतर से श्वेत कोई नहीं है। वो काली कमली रखता था, कलेजा धवल रखता था। मैं आपसे विनंती करता हूं, 'श्रीमद् भागवत' का प्रथम या दूसरा स्कंध आप खोज लेना, जब कृष्ण ने अर्जुन को कहा कि द्वारका की स्त्रियों को, द्वारका की समृद्धि को सबको संभालकर हस्तिनापुर ले जाओ। 'रामायण' समझने के लिए कभी-कभी 'भागवत' का भी पाठ किया करो।

मुझे आज किसीने बहुत प्यारा प्रश्न पूछा है, 'बापू, आप 'भगवद्गीता' की बीचबीच में बातें करते हैं और कहते हैं कि यह तलगाजरडा का अनुभव है तब बापू, आप बतायेंगे कि 'गीता' की सर्वश्रेष्ठ व्याख्या कौन है?' हजारों टीकाएं हुई है 'श्रीमद् भगवद्गीता' पर। तलगाजरडा को यदि जवाब देना है तो कृष्ण 'श्रीमद् भगवद्गीता' की व्याख्या है। जो कृष्ण के कलेजे को देखेगा वो 'भगवद्गीता' की व्याख्या समझ पाएगा। 'भगवद्गीता' की व्याख्या है कृष्ण जीवनचरित्र। यह कथनी नहीं है, यह कृष्ण-जीवनी है। कथन तो कितना किया होगा सात सौ श्लोक में? मेरा कृष्ण का जीवन है वो 'भगवद्गीता' की व्याख्या है, उसका परम भाष्य है। तो पढ़ना कभी 'भागवत' के इस प्रसंग को। आप समृद्धि तो देखो! और जब स्त्रियां और समृद्धि लेकर कृष्ण के आदेश अनुसार अर्जुन हस्तिनापुर निकलता है और जब जंगल में निकलनेवाले वो ही गांडीव, वो ही शस्त्र, वो ही कृष्ण सखा; सखा क्या, इष्ट कृष्ण का प्रियपात्र वो असहाय हारा हुआ अर्जुन! हारकर अर्जुन जाता है तब धर्मराज पूछते हैं, तेरा क्या हाल है? तब अर्जुन कृष्णकथा सुनाते हैं 'भागवत' में वो कभी सुनिएगा। एक-एक मुद्दा उठा रहा है। ज्येष्ठ बंधु, अर्जुन रोता-रोता कहता है, वो मेरे रथ पर बैठा था उसके सहारे मैं जीत गया था। भीष्म, द्रोण, फलां-फलां, सबका नाम लेता है। मैं उसकी गंभीरता समझता था बड़े भैया कि एक-

एक मेरे लिए काफी थे। लेकिन गोविंद बैठा था। मेरे रोंए को भी कुछ नहीं हुआ! कितने दृष्टांत रोते-रोते देता है! आखिर एक पंक्ति है जो मेरी स्मृति में अर्जुन कहता है कि जिंदगीभर मुझे जितानेवाला आखिर में मुझे हराकर चला गया। मैं आज हारा। कृष्ण विदाय; देहोत्सर्ग। जीवन पर्यंत पल-पल जितानेवाला मुझे हरा गया आज। भगवान कृष्ण का वर्ण तो श्याम है लेकिन कलेजा धवल है। राम श्याम है, 'नील सरोरुह नीलमनि' है लेकिन कलेजा धवल है। अंत:करण के भीतरी वर्ण में सद्गुरु सदैव गौर रहता है। सद्गुरु का वर्ण गौर होता है।

तो मैं आपसे निवेदन कर रहा हूं मेरे भाई-बहन कि धवल बर्फ़ भी आग है; धुआं निकलता है। तर्कशास्त्र के अनुसार जहां धुआं निकलता है वहां आग माना गया है। किसी न किसी रूप में आग है, जलन है, पीड़ा है। तो यह व्यासपीठ अग्नि है। हमारा जहां-जहां जीवन कर्म है; 'गीता' ने तीन प्रकार के इष्ट, अनिष्ट और मिश्र कर्म की व्याख्या की है। कोई इष्ट फल देनेवाले कर्म; कोई अनिष्ट फल देनेवाले कर्म और कोई मिश्र फल देनेवाले कर्म। लेकिन जो स्वाभाविक कर्म है वो तीनों से पर है। कई इष्ट फल होते हैं; हमारी धारणा के अनुसार हो जाये तो इष्ट फल; हमारी धारणा के अनुसार कमाया गया तो इष्ट फल। कभी अनिष्ट फल। तुमने चाहा वो नहीं हुआ तो अनिष्ट फल। लेकिन कोई मिश्र फल होता है। थोड़ा घाटा भी होता है; थोड़ा फायदा भी होता है। लेकिन तलगाजरडी नज़र में जो 'सहज कर्म कौन्तेय।' वो तीनों से ऊपर है जो स्वाभाविक कर्म है।

अपने-अपने क्षेत्र में आपका और मेरा जो स्वाभाविक कर्म है वो प्रत्येक कर्म पंचाग्नि है। अग्नि के बिना अन्न पकता भी नहीं और अग्नि के बिना अन्न पचता भी नहीं। आतिथ्य सत्कार की तीव्र भावना के बिना न अन्न परोसा जाता है। वो भी एक तीव्रता मुझे महेमानों को खिलाना है। तीव्रता आग है। पृथ्वी की पूजा की भावना न हो तो अन्न न बोया जाता है। पृथ्वी में अन्न बोना मतलब अग्नि में आहुति देना है। पृथ्वीतत्त्व भीतर क्या है आग के सिवा? किसानों की अग्निपूजा है। इसलिए किसान भी 'फार्धर्स डे' में आता है। किसान जगत का तात है। बीज बोना भी आग है।

तो बाप! व्यासपीठ का पहला अग्नि है उसका आकार। यह काला और श्वेत उसका कोयला और राख है। दूसरा अग्नि स्वयं ग्रंथ है। प्रमाण चाहते हो तो जिसमें भगवान की कथा होती है वो ग्रंथ अग्नि है।

दहन राम गुन ग्राम जिमी अंधन अलू।

तुलसी कहते हैं, दंभ, पाखंड यह सब समिध है। राम की गुन ग्राम से अंकित यह ग्रंथ अग्नि है, यह अग्नि है। दूसरी बात, मैं भूलूं तो क्षमा पहले से मांग लूं लेकिन जहां तक मुझे ख्याल है, 'गुरुग्रंथ साहब' जो जीर्ण-शीर्ण हो जाता है; शीख भाईयों के 'गुरुग्रंथ साहब' को जब बदलना होता है तब उसको अग्नि में समाया जाता है। जहां तक मुझे स्मरण है; मेरी कोई भूल हो तो पूरा समुदाय मुझे माफ़ करना, मैं अपनी भूल सुधार लूंगा। लेकिन जहां तक मेरा स्मरण है, उसको अग्नि प्रवेश करवाया जाता है।

तीसरा, उसके पर बैठा हुआ व्यक्ति जब बोलना शुरू करता है तब वो वाणी स्वयं आग है। वाणी आग है, शब्द आग है। कविता का पाठ करो; सब अग्नि है। अग्नि जिह्वा। जीभ में बोला गया सब अग्नि है। जिह्वाग्नि। वाणी में जो बोलता है, विचार प्रस्तुत करता है वो वक्ता के विचार को भी अग्नि कहा है। 'कहऊं बिबेक बिचारी।' 'देव पुनि बिबेक पाव कहं अगनी।' वक्ता को बहुत ध्यान रखना पड़ता है। गुरु संभालता है सब। इधर-उधर का मनगठित अर्थ लगा देंगे।

पांचवां अग्नि है व्यासपीठ को मिलती लोकमान्यता।

लोकमान्यता अनल सम।

लोगों का जय जयकार। हजारों लोग मान्यता देते हैं। मान्यता-अमान्यता सापेक्ष है। मान-अपमान सापेक्ष है। इसलिए 'मानस' में लोकमान्यता को अग्नि कहा है। लेकिन अमान्यता भी अग्नि है। लोग व्यासपीठ की सराहना ही नहीं करते, निंदा भी करते हैं। दोनों अग्नि है। जैसे अभी मैंने कहा, वाणी का पूर्वापर संबंध जाने बिना

कोई भी कोमेन्ट कर दे! आगे का प्रवचन तो सुन! तेरी जिम्मेवारी है। बोलनेवाले की जिम्मेवारी नहीं; तुम्हारी खानदानी का प्रदर्शन है! मैं कभी-कभी बोलूं तो राजकारणी अपने ढंग से अर्थ निकालते हैं; गांधी विचारवाले अपने ढंग से अर्थ निकालते हैं। मान्यता मिले तो हम राजी होते हैं। अमान्यता अनदेखे प्रहार है। मान्यता अग्नि है। अमान्यतावालें को भी कथा सुननी तो पड़ती है! वो मुझे आनंद है। सुनेंगे उसके बाद कोमेंट करेंगे ना? कम से कम सुनना तो पड़ता ही है! कथा तेरे पास आएगी वो कथा कभी ना कभी तुझे उठायेगी। अंग्रेजी अखबारों से भी कोमेंट आती है तब मैं राजी होता हूं कि कथा तो सुनते हैं! बच्चों, सुनो। बड़े-बड़े सब प्रकार के क्षेत्र के आदरणीय लोगों भी अपने पाले पड़े वो अपने नाम से चढ़ा लेते हैं वो उनका साहस है!

'रामचरितमानस' की पीठ पंचाग्नि होते हुए भी उसको कोई जला नहीं सकता क्योंकि अग्नि सात-सात जिह्वा है। कल मुझे पूछा गया था कि अग्नि की सात जिह्वा है वो आपने कही है तो मेरे स्मरण में तीन-चार आई। मैं सुबह खोज रहा था। यह 'मुण्डकोपनिषद' में लिखा है वो मैंने निकाला। जो एक बार कभी चर्चा की थी। आप भी बोलिए-

काली कराली च मनोजवा च सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा।।
स्फुलिंगिनी विश्वरुची च देवी लेलायमाना इति सप्त जिह्वाः।।
- मुण्डकोपनिषद

'रामकथा कालिका कराला।' यह 'बालकांड' अग्निग्रंथ की पहली जीभ। 'मनोजवा च' का अर्थ है बिलग-बिलग कामनाओं को जन्म देनेवाली स्पृहांए; मन से उत्पन्न होनेवाली कामनाएं। मनोजवा का एक सामान्य अर्थ है कामनाओं का प्रगटीकरण जिस मनसे होता है। 'अयोध्याकांड' है रामकथा ग्रंथ रूपी अग्नि की दूसरी जीभ उसमें कैकेई की कामना है; मंथरा की कामना है। कभी-कभी हमारी कामनाएं दूसरे के वनवास का कारण बन जाती है। सुलोहिता का अर्थ है जिसमें सुंदर रूप से रक्त बहा हो। कई अर्थ है इसके। 'नाक कान बिनु भए बिकराला। जिनु सा गहही घेरु की धारा।' सुंदर सुलोहिता 'अरण्यकांड' है 'मानस' ग्रंथाग्नि का। सुधूम्रवर्णा वो 'किष्किन्धाकांड' है। ममता; फिर सुग्रीव भूल गया; छिप गया। राम को दिया हुआ वादा चुक गया। फिर भोग में डूब गया। बादल छा गये। यह धूम्रवर्णा है। कभी-कभी धूम्र आ जाता है। हमारी समझ, हमारा विवेक, हमने दिये हुए वायदे धूम्रवर्णा यह सब

'किष्किन्धाकांड' है। यह सब तलगाजरडी जिम्मेवारी है। स्फुलिंगिनी; जानकीजी ताराग्नि मांग रही है। कभी 'नूतन किसलय अनल समाना।' कभी विरहाग्नि। त्रिजटा ने कह दिया, 'निसि न अनल मिल सुनु कुमारी।' यहां एक तिनखा भी नहीं मिलेगा। यह तणखे सुंदर लगते हैं इसलिए कांड का नाम सुंदर है। विश्वरुचि; विश्व की रुचि किसमें है? विश्वरुचि जीभ है। मेरी रुचि कुछ और होती है। आपकी रुचि कुछ ओर होती है। साधु की रुचि कुछ ओर होती है। समाजसेवक की रुचि कुछ ओर होती है। राजनेता की रुचि कुछ होती है। धर्मनेता की रुचि कुछ होती है।

भगवान राम की रुचि कैसे पकड़ोगे 'मानस' में से? स्पष्ट लिखा है, 'राम सदा सेवक रुचि राखी।' राम की एक ही रुचि है कि मेरे आश्रित की इच्छा पूरी हो। मेरा जो भी हो वो सब शुभ है। शंकर की साक्षी से यह सब कल्याण है। मैं वन में तपूं। आप राम का दर्शन करो। राम ने व्यक्तिगत रूप से उदासीन व्रत लिया है। 'तापस बेष बिसेषि उदासी।' कैकेयी ने उसको उदासीन बनाया। राजकुमार के रूप में वन में भेज देते, चले जाते लेकिन कैकेई के मन में डाउट है, शायद राम उदासीन न बने! शक्तिशाली है, वनवासी बनके इकठ्ठे होकर एक अपना ग्रूप बना ले और वो राम फिर अयोध्या पर हमला करे तो अयोध्या भरत के हाथ में चौदह साल के बाद नहीं रहेगी। इसलिए होशियार कैकेई ने मांगा, 'तापस बेष बिसेषि उदासी।' तापस का वेश ले और उदासीन बने। अब तापस का बेश और उदासीन होकर हाथ में धनुषबाण लिये जाए? राम का उदासीन व्रत कैसा? उदासीन व्रत और बीबी को साथ में रखे? लेकिन राम ने दुनिया को बताया, मैं धनुष लेकर जा रहा हूं। उदासीन व्रत मेरा व्यक्तिगत है। समाज कार्य के लिए मैं सक्रिय हूं। यह रुचि है राम की। खुद को कोई गालियां दे तो पी जाना ज़हर। गम खाना बड़ी चीज है। लेकिन समाज के लिए राम सक्रिय है। उदासीन व्रत लेकर वन में गये तो इतना घमासान युद्ध क्यों? विश्वरुचि की जीभ का एक स्वाद संतुष्ट करना था। विश्व की रुचि किसमें थी? धर्म का स्थापन हो। प्राणीओं में सद्भावना हो। आतंक मिटे, हिंसा मिटे, अधर्म का नाश हो। और भगवान राम ने 'लंकाकांड' में रावण की अधार्मिकता और आतंक जो था वो मिटाने के लिए यह कदम उठाया। इसलिए 'लंकाकांड' को तलगाजरडा कहेगी विश्वरुचि जीभ, जिसमें विश्व कल्याण हो। और लेलायमाना का बिलकुल गुजराती अर्थ है, जो फैलाये; रेलाई जवुं, फेलाई जवुं।

तो बाप! इति सप्तजिह्वा, 'मुण्डकोपनिषद' की यह सात जीभ मेरे 'रामचरितमानस'रूपी अग्निग्रंथ की सात जिह्वा है। तो आकार अग्नि; ग्रंथ अग्नि; श्वेत और काला रंग कोयला और राख का संकेत करता है। वाणी अग्नि; विवेक-विचार अग्नि और लोकमान्यता अथवा लोकनिंदा दोनों अग्नि है। यह है पंचाग्नि। व्यासपीठ स्वयं पंचाग्नि है। कुंता पंचाग्नि है। सबसे अग्नि तो 'महाभारत' का एक पात्र तपा है विदुर। महात्मा विदुर पंचाग्नि है। किन-किन पात्रों की परिकम्मा करूं? सब अग्नि कसौटी दे चुके हैं और अग्नि परीक्षा में पास हुए हैं। इसलिए आज हमारे वर्णन का विषय बन रहा है।

नूतन किसलय अनल समाना।
देहि अगिनि जनि करहिं निदाना।।
बिरह अगिनि तनु तूल समीरा।
स्वास जरइ छन माहिं सरीरा।।

जो दो पंक्तियां 'मानस-पंचाग्नि' की भूमिका में ली थी। अशोक वृक्ष की नई-नई कोंपले हैं। जानकी चाहती है कि अग्नि मुझे मिले और जला दे अथवा तो 'बिरह अगिनि तनु तूल समीरा।' शरीर तो कपास है; तनु तुल। एक तो अग्नि और कपास जलने में कितनी देर लगेगी? फिर भी थोड़ी देर लगे भी। क्योंकि अग्नि भी है और कपास है लेकिन वायु विपरीत दिशा में है। वायु न हो तो न भी जले। इसलिए तुलसी कहते हैं, 'बिरह अगिनि तनु तूल समीरा।' समीर कौन है? श्वास। श्वास जो चल रहा है वो समीर है। शरीर जल ही जाना चाहिए विरह अग्नि में लेकिन अग्नि बूझ जाती है। जानकी की आंखों में से पानी

निकलता है। वो बुझा देते हैं अग्नि। यह विरहाग्नि में शरीर नहीं जल रहा।

तमे रांकनां छो रतन समां, न मळो हे अश्रुओ धूळमां,
जो अरज कबूल हो आटली, तो हृदयथी जाओ नयन सुधी।
दिवसो जुदाईना जाय छे, ए जशे जरूर मिलन सुधी।
मने हाथ झालीने लई जशे, हवे शत्रुओ ज स्वजन सुधी।

- गनी दहींवाला

तो बाप! यह दो पंक्ति के आधार पर हमें जीवन में कुछ प्रकाश मिले; विवेक का अग्नि प्रज्वलित हो जाए उसका हमारा और आपका गुरुकृपा से सहज प्रयास चल रहा है।

कथा के क्रम में घमासान युद्ध होता है। एक के बाद एक की वीरगति होती है। आखिर में रावण को प्रभु ने इकत्तीसवें बाण से निर्वाण दिया। 'राम' कहकर पुकार करके रावण गिर गया। चेतना प्रभु के मुखारविन्द में समा गई। मंदोदरी आदि आकर शोक करते हैं। संस्कार हुआ। विभीषण का राजतिलक हुआ। हनुमानजी को खबर दी गई। सीताजी को ले आए। जानकीजी की फिर अग्नि परीक्षा। स्त्री स्वयं अग्नि है, जो छांदोग्य उपनिषद ने कहा। अग्नि अग्नि को जला नहीं सकती। चंदन जैसी अग्नि में से माँ बाहर आई। फिर राम और जानकी का मिलन। स्तुति हुई। फिर तो जयजयकार हुआ। विमान तैयार हुआ। सखाओं को लेकर जानकी-अनुज को लेकर प्रभु उड़ान भरते हैं अयोध्या की ओर। रणमेदान का दर्शन; सेतुबंध का दर्शन; रामेश्वर भगवान का दर्शन। हनुमानजी को सूचना दी गई, भरतजी को खबर दी जाए। रास्ते में मुनियों के आश्रम आए जहां जा करके भगवान वचन दिया था वो पूरा कर रहे हैं। हनुमानजी अयोध्या गये और भगवान का विमान शृंगबेरपुर ऊतरा। चौदह साल से राम के सुमिरन में डूबे यह पछात, वंचित, गरीब लोग कुछ नहीं था फिर भी जिसके हृदय का वैभव यह बोल गया था कि 'नाथ आज मैं काह न पावा।' ऐसे लोगों की खबर पूछने के लिए मेरा ठाकुर विमान ऊतारता है। सब दौड़ आए। भगवान भीलों को मिलते हैं और केवट को पूछते हैं, तूने मुझे गंगापार करवाया था, ऊतराई नहीं ली थी। अब बोल, क्या दूं? कहे, महाराज, यह तो थोड़ी चतुराई थी कि दूसरी बार आपके थोड़े दर्शन हो जाये। आपकी अनुकूलता हो तो मुझे विमान में बिठाकर अयोध्या ले जाओ।

'उत्तरकांड' के प्रारंभ में विरहाग्नि में जलते हुए भरत को हनुमानजी ढ़ाढ़स देकर बचा लेते हैं, भगवान आ रहे हैं। पूरी अयोध्या में आनंद फैल गया। हनुमानजी ने भगवान को खबर दी कि अब विलंब न करे। भगवान का विमान अयोध्या ऊतरता है। भगवान को अयोध्या और अयोध्यावासी बहुत प्रिय है। उदासीन हो उसको कोई प्रिय-अप्रिय नहीं होना चाहिए। भगवान कहते हैं, यह मेरी व्यक्तिगत उदासीनता है। किसको ममता करनी है, किसको नहीं करनी है, मेरा व्यक्तिगत अधिकार है। अयोध्यावासी पर ममता रखते हैं। अयोध्या का दर्शन करवाते हुए कहते हैं, यह पूरी अयोध्या मुझे बहुत प्रिय है। कृष्ण के साथ देखो तो कृष्ण ज्यादा असंग लगते हैं। कौन मथुरा? कौन द्वारका? कौन वृंदावन? असंग है। जब आदमी निकला तब पूरा उदासीन होकर निकला। कौन कृष्ण? कौन अर्जुन? राम ऐसे नहीं है। राम दोनों रूप में किरदार निभा रहे हैं। राम की व्यक्तिगत रूप में उदासीनता है। 'प्रिय मोही वहां के बासी।' अयोध्या का जिक्र किया है प्रभु ने।

तो अयोध्या में प्रभु का विमान ऊतरा। पूरी अयोध्या दौड़ी। राम और भरत भेंटे। भगवान ने अमित रूप लेकर सबको साक्षात्कार किया। गुरु को प्रणाम किया। मित्रों का परिचय गुरु को और गुरु का परिचय मित्रों को दिया और प्रभु भवन चले। सबसे पहले माँ कैकेई के भवन में माँ को प्रणाम किया। सबकी आंखें भाव में भीग गई। वशिष्ठजी को पूछा, बाबा, आज ही तिलक कर दें? हां, आज ही तिलक करे। चौदह साल के बाद वो ही दिव्य सिंहासन पर वशिष्ठजी के अनुशासन में देवताओं को प्रणाम करके अपने कुल के मूल पुरुष सूर्य को प्रणाम करके, माताओं को प्रणाम करके, गुरुजी, पृथ्वी को प्रणाम करके विश्व को रामराज्य देते हुए अयोध्या में राज्याभिषेक की औपचारिक विधि पूरी की। बाकी रामराज्य का उत्सव तो लंका में मनाया गया था।

अब सौगंध विधि बाकी थी। वो हो रही है। वशिष्ठ अग्निपूजक है, स्वयं अग्नि से जो सीखे हैं; अग्निदेव के आचार्य भगवान राघवेन्द्र के भाल में तिलक करते हैं। और तुलसी की चौपाई गा उठी-

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

रामराज्य का स्थापन हुआ। त्रिभुवन में जयघोष हुआ। चार वेद आये। स्तुति की और ब्रह्मभवन चले गये। उसके बाद मेरा धूर्जटि कैलास से नंगे पैर, डमरु बजाता हुआ आया, महादेव आया और राघव की स्तुति की। रामगुन गाकर, हर्षित होकर महादेव कैलास गये। मित्रों को निवास दिया। दिव्य रामराज्य की स्थापना। आनंद में समय बीतने लगा। छः मास बीत गया। फिर भगवान ने मित्रों को कहा कि अपनी-अपनी फ़र्ज बजाने के लिए अपने-अपने स्थानों में जाओ। हनुमानजी को-पुन्यपुंज को रखा। समय मर्यादा पूरी हुई। भगवान की नरलीला में जानकी ने दो पुत्रों को जन्म दिया, लव और कुश। तीनों भाईयों के घर दो पुत्रों की प्राप्ति हुई। सीता निर्वासन की कथा तुलसी ने नहीं लिखी। यह संवादवाला पक्ष अच्छा है। विवाद में क्यों जाये? रामकथा वहां विराम हो जाती है।

कागभुशुंडि अपनी जीवनकथा गरुड की विनंती पर प्रस्तुत करते हैं। गरुड पंख फुलाकर प्रसन्न होकर वैकुंठ गये। महादेव ने महादेवी के सामने कथाविराम किया। याज्ञवल्क्यजी ने कथा पूरी की कि नहीं, खबर नहीं। वो प्रसंग वैसा का वैसा ही है। कलिपावनातार गोस्वामीजी अपने मनको कथा सुनाते हुए, साधु-संतों को कथा सुनाते हुए, कथा को विराम देते हुए बोले, इस कलियुग में कोई साधन नहीं है; नहीं जप, नहीं जोग। यानि कलियुग में जोग, जग्य, जप, तप यह सब है लेकिन कठिन भी तो है। सबके लिए सरल नहीं है। लेकिन इससे भी सरल साधन है-

रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ रामगुन ग्रामहि।।

यही है सत्य, प्रेम और करुणा। राम का नाम लेने से किसको गति नहीं मिली? गणिका को गति मिली। और तुलसी कहे, छोड़ो साहब! मेरी ओर देखो, मेरे जैसा मंदमति तुलसी आज 'पायो परम बिश्राम राम समान प्रभु नाहीं कहूं।' जो रामकथा गाएगा, सुनेगा वो संसार की अग्नि में जलेगा नहीं। सूर्य की प्रचंड गरमी जो जलाती है उस सूर्यवाली गरमी उसको जलाएगी नहीं। यह पंचाग्नि पचाग्नि हो जाएगी, जो रामकथा गाएगा, सुनेगा।

सात सोपान की यह कथा सप्तजिह्वा कथा, अग्निग्रंथ की यह कथा, पंचाग्नि, व्यासपीठ का जो यह रूप है उसकी कथा, भगवद्कृपा से यह कार्य प्रसन्नता से संपन्न हो रहा है। भगवान की कथा को मेरी व्यासपीठ भी विराम देने की ओर है। कुछ कहने का बचा नहीं। केवल किशोरभाई वालिया और उसके पूरे परिवार का यह 'स्वान्तःसुखाय' आयोजन मेरी दृष्टि में सुचारु रूप से संपन्न हो रहा है। भगवद्कृपा है। सुंदर आयोजन, सुंदर व्यवस्था, सुंदर श्रोता। बोलो ना यार! सुंदर वक्ता! हम सब आनंद में डूबे थे। भगवद्कृपा, उनके बाप-दादा का पुण्य, उसकी व्यासपीठ पर की श्रद्धा, उनके मन का,

व्यासपीठ स्वयं पंचाग्नि है। उसका आकार ही चिता जैसा है। चिता पर सोया जाता है। इस पर बैठा जाता है। सोनेवाला तो मरा हुआ है; उसको आग से क्या लेना-देना? आग तो जीवित व्यक्ति के लिए है। वो तो सो गया। पूरा स्मशान गृह जला दो, क्या लेना-देना है? आत्मा को आग नहीं जलाती। अब तो शरीर को भी कोई लेना-देना नहीं है। जला दो। वो चिता तो मृतक को जलानेवाली है। यह चिताग्नि है। जिसको व्यासपीठ की चिताग्नि पर बैठने का उमंग हो और भवनाथ पर भरोसा हो उसको आग जला नहीं पाती। तो व्यासपीठ स्वयं पंचाग्नि है।

परिवार का, संतानों का सुंदर भाव। यह सब मिलकर भगवद्कृपा से यह सत्कर्म पूरा हुआ है। आप सबने एन्जोय किया। आनंद ही आनंद लिया है साहब! तो ऐसे सुंदर भावमय वातावरण में पूरा हो रहा है तब आशीर्वाद तो हम क्या दें? और जितने लोगों ने काम किया; जमीन दी; कई लोगों ने निवास के लिए जगह दी; आप सबने बहुत सुंदरता से पूरा किया है। आशीर्वाद तो परमात्मा ने दे दिया था इसलिए तो यह हुआ वरना होता कहां? मेरे हनुमान के चरणों में प्रार्थना करूं कि परमात्मा सबको खुश रखे, प्रसन्न रहो, खुश रहो, खुश रहो। 'वंदे सदा भवताम् हरिभक्तिमस्तु।' जो दो पंक्तियों का नौ दिन आश्रय लिया उसका साथ में गायन करें-

नूतन किसलय अनल समाना।
देही अगिनि जनि करहिं निदाना।
बिरह अगिनि तनु तूल समीरा।
स्वास जरइ छन माहिं सरीरा।।

दोनों पंक्तियों से जो अरणिमंथन चल रहा था विवेक-अग्नि को प्रगट करने के लिए, यह नौ दिवसीय पंचाग्नि तप रहे हैं। अब नववें दिन उसको विराम दिया जा रहा है तब नौ दिन का जो परिणाम है, सुकृत है, पुण्य फल है वो किसको दें? तो आज 'फाधर्स डे' है, जगतभर के पप्पाओं को दे दें; सबके पिता, सबके पितृ को दे दें। सबसे पहले पिता तो वो जिन्होंने सबसे पहले यहां पंचाग्नि तपी होगी। उसमें भी सबसे बड़ा पिता तो मेरा महादेव है। याद रखना, हमारे लिए शिवरात्रि 'फाधर्स डे।' हमारे लिए नवरात्रि 'मधर्स डे।' आइए, जो परम शिव है और जितने भी पितृ है; यह किशोरभाई के पितृ; हम सबने कल सभी पितृ को याद किया; आओ, 'फाधर्स डे' के दिन यह सब ऋषिओं को, पितृओं को, मूल में मेरा महादेव, महाबलेश्वर इन सभी पूर्वजों के चरणों में यह कथा समर्पित करते हैं।

मानस-मुशायरा

मैं क्षिप्रा-सा सरल-तरल बहता हूं।
मैं कालिदास की शेष कथा कहता हूं।
मुझको तो मौत भी डरा नहीं सकती,
मैं महाकाल की नगरी में रहता हूं।।
-शिवमंगल सिंह 'सुमन'

घर से मैं सोचकर निकला हूं कि मर जाना है।
अब कोई राह दिखाये कि किधर जाना है?
नशा ऐसा था कि मयखाने को दुनिया समझा,
होश आया तो खयाल आया कि घर जाना है।
- राहत इन्दौरी

सोये कहां थे आंख ने तकिये भिगोये थे।
हम भी कभी किसी के लिए खूब रोये थे।
-बशीर बद्र

मज़ा देखा मियां सच बोलने का?
जिधर तू है उधर कोई नहीं!
-नवाज़ देवबंदी

या मेरे कदमों को कोई सफ़र तो मिले।
या ठहर जाऊं ऐसा कोई घर तो मिले।
दिल से दिल को यकीनन मिला लेंगे हम,
पहले उनकी नज़र से नज़र तो मिले।
-हर्ष ब्रह्मभट्ट

सेवा स्पर्धाभाव से नहीं होनी चाहिए, श्रद्धाभाव से होनी चाहिए

शिशुविहार, भावनगर द्वारा आयोजित नागरिक सम्मान समारोह में मोरारिबापू का अवसरोचित वक्तव्य

सबसे पहले मैं आप सभी की क्षमा चाहता हूं। मैं करीब-करीब कार्यक्रम में समय पर ही पहुंचता हूं। लेकिन आज दूर से आया इसलिए शायद बीस मिनट देर से पहूंचा हूं। इसलिए आप सब की क्षमा चाहता हूं। पुण्यश्लोक मानदादा, उनकी सेवामय चेतना को सौ प्रथम मेरा प्रणाम। यह संस्था के निमित्त बनकर निराभिमानी भाव से वहन करते संस्था के प्रमुख वडीलश्री वकील साहब, ट्रस्टीगण, सभी को साधुवाद। जो पंचदेवों की हमने वंदना की उनमें से सभी के नाम से और थोड़े-बहुत कार्य से मैं परिचित हूं। लेकिन जिनकी वंदना हुई उनमें आदरणीय पद्मश्री डोक्टर आचार्य साहब, उनके पीछे-पीछे चलकर उसकी सेवा का लाभ भी लिया है इसलिए आचार्य साहब को वंदन। मुझे बहुत प्रसन्नता हुई कि एक समर्थ सर्जक प्रदीपजी की सुपुत्री मित्तुल बहन; उनकी वंदना भी हम कर सके। इतनी बड़ी उम्र में आदरणीय देविन्द्रा बहन भी निरंतर कार्यरत है। उनकी सेवा को प्रणाम। नानुभाई के कार्य से भी हम परिचित है। नानुभाई को अस्सी साल हो गई है उसका मुझे पता ही नहीं था। क्योंकि मैंने उनको कभी यूं उम्र के संदर्भ में देखा ही नहीं; अनुभव के संदर्भ में ही देखा है। आदरणीय नानुभाई, आपके कार्य की वंदना करता हूं। आदरणीया अमीबहन श्रोफ; ये सब कितना सुंदर कार्य करते हैं!

मैं कोई कार्यक्रम में जाउं; समय दूं। आप सब का बहुत आदर होता है। और दिया हुआ समय पर मैं पहुंचूं तो आप सब खुश भी हो। लेकिन मैं आपको खुश करने के लिए नहीं कहता और यह केवल वाणी के पुष्प ही नहीं बल्कि सचमुच कहता हूं कि आप खुश होते हैं उससे भी बढ़िया मेरी आत्मा प्रसन्न होती है। अभी थोड़े समय पहले डोक्टर साहब का हमने सम्मान किया। उनके विषय में 'फूलछाब' के तंत्री कौशिकभाई मेहता ने एक पुस्तक लिखी। स्वाभाविक है, मुझे समय की मुश्किल रहती है। ये सब लोग जानते हैं। तो सभी लोगों ने कहा कि बापू ने हमारे लिए समय दिया और उसके लिए हम उनके ऋणी है। उस समय मैंने जो शब्द कहे वो मुझे यहीं भी कहना है कि ऐसे कार्यक्रम में मैं समय नहीं देता। मैं तो मेरे गुरु ने दी हुई समझ देने के लिए आता हूं। समय बहुत कीमती माना जाता है। लेकिन समय से भी कीमती समझ होती है। और ये समझ के कारण हम यह पांचों की वंदना करते हैं। सेवा तो कई लोग छोटे-बड़े क्षेत्रों में करते ही होंगे। लेकिन उनके पीछे एक समझ है; उनके पीछे एक विवेक है। कर्मशील भी जो विवेकशील न हो तो? विवेक बहुत ही जरूरी है।

मेरी दृष्टि से यह सभी कर्मशील विवेकशील है। और हम जानते हैं कि सेवा ये यज्ञ है। लेकिन जो सेवा करते हैं उनकी वंदना ये यज्ञकर्म नहीं है। सेवा यज्ञकर्म है। एक वस्त्र हम समर्पित करें; छोटी-बड़ी धनराशि अर्पण करें; अवोर्ड के लिए जो बनवाया हो वो अर्पण करें; ये सब वंदना व्यक्त करने के उपकरण है। वंदना तो वाणी से भी हो सके। वंदना को अगर प्रणाम का पर्याय समझे तो वंदना वाणी से भी हो सके; हाथ जोड़कर भी हो सके। और ऐसी विशेष व्यक्तिओं की वंदना उनको जानकर भी कर सके कि हमारे हिस्से में तो केवल वंदना है। एक-दो घंटे का यह वंदना कार्यक्रम पूर्ण होगा। लेकिन उनके लिए तो यह निरंतर यज्ञ है। वह पूर्ण नहीं होगा। 'रामचरितमानस' में विश्वामित्र का यज्ञ पूरा हुआ। 'रामचरितमानस' में जनक राजा का धनुषयज्ञ पूरा हुआ। 'रामचरितमानस' में महाराज दशरथजी का यज्ञ पूरा हुआ। 'रामचरितमानस' में यज्ञ के लिए जनक का भूमिशोधन का कार्य पूरा हुआ। 'रामचरितमानस' में लंका में विजय प्राप्त करने हेतु रावण का एक विचित्र प्रकार का यज्ञ पूरा हुआ। इन्द्रजित का यज्ञ भी पूरा हुआ। लेकिन हम आनंद ले सकते हैं कि हमारे देश में, हमारे आध्यात्मिक मुल्क में जिस भूमि में नस-नस में सेवा बहती है ऐसे विवेकशील कर्मशीलों का यज्ञकार्य कभी पूरा नहीं होता और निरंतर चलता है। वे सभी यज्ञों में कहीं न कहीं बाधाएं आई है। विश्वामित्र के यज्ञ में दो आसुरी तत्त्वों ने बाधा डाली। दशरथजी का यज्ञ यद्यपि सफल हुआ। उसमें कोई बाधा नहीं है। लेकिन वह यज्ञ बहुत विलंब से वृद्धावस्था में शुरू हुआ। वैसे तो कभी भी हम सेवायज्ञ शुरू करे यह वधाई देने योग्य है। लेकिन आखिर बूढ़ापे में गोविंद गाना मुश्किल है। रावण के यज्ञ का भी विध्वंस हुआ। इन्द्रजित के यज्ञ में भी बाधा आई है। खैर! लेकिन यह सेवायज्ञ है।

हमारे देश में मानदादा से लेकर यूं तो महात्मा गांधी बापू। हमारा मुकुट तो महात्मा है। और साहब! वह मुकुट के नीचे यह देश के सेवाविग्रह को कई आभूषण प्राप्त हुए हैं। कोई कुंडल के रूप में आये हैं। कोई गले के हार के रूप में आये हैं। खबर नहीं, कितने-कितने आभूषण पहनकर सेवा के क्षेत्र में सब आये हैं! यह तो अच्छा है कि जहां सेवायज्ञ चलता है वहां का समाज उनको पहचानते हैं। और ऐसे वंदना के प्रसंगों में हम उनका विशेष लाभ लेते हैं। वर्ना बहुधा, बहुधा, सौ प्रतिशत न कह सकूं लेकिन मेरे जितने अनुभव है उस में ऐसे महत्त्व के यज्ञ-सेवायज्ञ बहुधा प्रसिद्धि से दूर रहकर हो रहा है। उसका मुझे बहुत आनंद है। क्योंकि मेरी दृष्टि से सेवायज्ञ में तीन वस्तु बहुत ही जरूरी है। उस तीन वस्तु का अगर सेवक ध्यान न रखे तो वह सेवायज्ञ प्रेरणादायी नहीं रहता, पीडादायी बनता है। सेवायज्ञ हम सब को प्रेरणादायी बन सके इसलिए तीन वस्तु जरूरी है। ये मैं कोई सलाह देने नहीं आया। वह मेरी कोई औकात भी नहीं; मेरा अधिकार भी नहीं; मेरी लायकात भी नहीं। लेकिन ईश्वर कृपा से समाज में सतत घूम रहा हूं तब मुझे जो कुछ दिखा, मैंने जो कुछ अनुभव किया उसमें तीन वस्तु बहुत जरूरी लगती है। और यह मुश्किल है। मैं जानता हूं। लेकिन जो सेवा में से 'मैं' पना निकल जाय वहां सेवक का शरीर होता है और सेवा का बल हरि देता है। जब हम उनको जगह देते हैं, 'मैं' को बिलग करते हैं तब वहां हरि का अवतरण होता है। हमारी भाषा के आदि कवि नरसिंह मेहता; उनके मंत्रात्मक शब्द; उनकी पंक्तियों से हम परिचित हैं कि-

हुं करुं हुं करुं ए ज अज्ञानता,
शकटनो भार ज्यम श्वान ताणे।

लेकिन कवि कहते हैं, फिर भी कहना पड़े कि-

सृष्टि मंडाण छे सर्व एणी पेरे।
जोगी-जोगेश्वरा कोईक जाणे।।

सेवाकर्म के गहन रहस्यों को तो जोगी-जोगेश्वर कोई ही जान सकता है; कोई पहुंचे हुए महापुरुष ही जान सकता है। इसलिए सेवा में से 'मैं'पना निकल जाय तब समाज उनकी वंदना करता है; करनी ही चाहिए।

दूसरी वस्तु, सेवा स्पर्धाभाव से नहीं होनी चाहिए, श्रद्धाभाव से होनी चाहिए। एक व्यक्ति अपने क्षेत्र में सेवा करे और उनको देखकर दूसरा स्पर्धाभाव से करे! अच्छा है कि इस बहाने भी सेवा होती है। लेकिन स्पर्धा कभी-कभी संघर्ष पैदा करती है। पत्थर पर हम चंदन घिसे और उसमें बीच-बीच में पानी डाले तो वह पत्थर भी शीतल बनता है। चंदन से भी शीतलता प्रकट होती है और हमें सुवासित करती है। लेकिन वही चंदन का टुकड़ा बिना पानी पत्थर पर घिसते रहे तो गर्मी पैदा करे। पत्थर भी गर्म हो जाय। चंदन का टुकड़ा भी गर्म हो जाय। स्पर्धा कभी न कभी संघर्ष पैदा कराती ही है। मुझे ऐसा लगता है कि गांधी बापू ने हमें जो सेवा सिखाई; विनोबाजी ने जो मार्ग लिया; रविशंकर महाराज ने जो मार्ग लिया; अभी जो भूमि से मैं आया हूं वह लोकनेता-लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने जो सेवा का मार्ग लिया; हमारे मानदादा ने जो सेवा का मार्ग लिया वह श्रद्धायुक्त है। श्रद्धा मानी मैं यहीं कोई पागलपन की चर्चा नहीं करता। यद्यपि 'भगवद्गीता' ने श्रद्धा के तीन आयाम बतायें हैं। 'त्रिविधा भवति श्रद्धा।' तीन प्रकार की श्रद्धा। लेकिन इस में भी मानदादा को जब मैं देखता हूं तो उनकी श्रद्धा तो मुझे गुणातीत लगती है। इसलिए उनको मैं पुण्यश्लोक कहता हूं। उनके कठोर शब्द सुनने में हमें खरा मुश्किल हो। उनका प्रासादिक प्रहार लगे। कुछ समय यह मार्ग पर चलना नहीं ऐसे विचार आये। लेकिन उनकी सेवा वरणागी न थी, रजोगुणी न थी। और उनकी सेवा सत्य की डोरी से बंधनयुक्त भी नहीं थी। यह आदमी गुणातीत श्रद्धा का उपासक रहा। इसलिए सेवा में स्पर्धा न हो। हरएक क्षेत्र में स्पर्धा चलती है। स्पर्धा हो वहां हार-जीत होती ही है। सीधी-सी बात है। सीधा गणित है। श्रद्धा में हार-जीत नहीं होती। श्रद्धा हार-जीत के द्वन्द्वों से मुक्त है। और इसलिए सेवा के यज्ञ निरंतर चलता रहता है। उसका भंग करनेवाला कोई मारीच अभी प्रगट नहीं हुआ। उसका भंग करनेवाला कोई सुबाहु अभी प्रगट नहीं हुआ। और उसका भंग करनेवाली कोई ताडका ने अभी जन्म नहीं लिया। 'मैं' से मुक्त सेवा; स्पर्धा से मुक्त और श्रद्धा से युक्त सेवा। और तीसरी वस्तु, मैं यह सेवा करूं और फिर मुझे कोई सम्मानित करे ऐसी सपने में भी बिना अपेक्षा सेवा। यह सभी सेवा करनेवालों को देखकर हमें लगे कि उन सभी के मन में ऐसा नहीं होगा कि हमारा सम्मान हो। खोज-खोज कर उनको लाना पड़ा होगा; विनय करके लाना पड़ा होगा। प्रदर्शनीय सेवा के लिए पूरी फ़ाइलें भेजनी पड़ती है और फिर कुछ मिलता है।

बहुत उंचा था कद उसका खिताब से पहले।

खिताब मिला उनसे पहले वह आदमी का कद बहुत उंचा था। मैं बहुत खुश होता हूं कि महात्मा गांधी बापू को नोबेल न मिला। नोबेल चिंथड़ा है! गांधी के हाथ में वह नोबेल शोभा न दे। पूरा विश्व जिनको 'बापू' कह पुकारता हो उनको हम कौन-सा खिताब दे सकें? दिल्ही की गादी पर तो आझादी मिलने के बाद हमारे आदरणीय नेताओं ने राज किया। लेकिन भारत के दिल पर तो गांधी ने राज किया। और अभी भी उन्हों ने निवृत्ति नहीं ली। वह कभी निवृत्ति न ले सके। नई-नई कूंपलों फूटती रहेगी। एक सेवा के अश्रयवट में यह सभी नई कूंपलें है। और अक्षयवट में फूटते यह सभी नयें पर्ण है। इसलिए उनको कोई सम्मान का या तो हमारी वंदना हो ऐसा कोई भाव नहीं होता।

यह तो हुई सेवा क्षेत्र की बात। लेकिन वंदन करनेवालों में भी तीन लक्षण होने चाहिए। हम सब वंदन करते हैं। माला पहनायें। हम कहते हैं कि फूल नहीं तो फूल की पंखुड़ी। लेकिन फूल न हो तो पंखुड़ी ही नहीं हो सकती यह तो सोचो! भले पंखुड़ी दो लेकिन पूरे फूल का भाव रखो क्योंकि फूल नहीं तो फूल की पंखुड़ी। हम वंदन करते हैं तब वंदन तीन प्रकार से होता है ऐसा मैं समझा हूं। एक शरीर से वंदन होता है। हाथ जोड़े, सिर झुकाये। कोई अपने श्रद्धेय को दंडवत् करे। कोई झुककर वंदन करे। जिनके वंदन के क्षेत्र में शरीर केन्द्र में हो यह भी वंदन है। पूरा शरीर झुके, अच्छी बात है। एक्सरसाईज़ भी हो जाय।

मैंने शायद यहीं कहा होगा; पहले कहा था कहीं जगह उसकी मैं पुनरुक्ति कर रहा हूं। मैं लंडन जाता था। शायद संस्कृत सत्र चलता था या ऐसे कोई सत्र में से मुझे अचानक लंडन जाना हुआ। सभी की क्षमा मांगकर मैं गया। लंडन से आया एक लड़का भी जानेवाला था तो उसने कहा कि बापू, आप अकेले जा रहे हैं तो मैं आपके साथ आऊं? मैंने सोचा कि कोई साथ में हो तो अच्छा। वह लंडन का लड़का मेरे साथ आया एयर इन्डिया की फ्लाइट में। मुझे कितना बैठना? दो घंटे। इतने समय की उडान। सुबह हिथ्रो एयर पोर्ट पर उतरने का संकेत हुआ उसमें मैंने देखा कि एक अंग्रेज चलता आया और मैं बेठा था वहां आकर उसने दंडवत् किया; पूरा लंबा हो कर दंडवत् किया। एक बार, दो बार, तीन बार। मुझे आश्चर्य हुआ कि यह आदमी तो मुझे पहचानता भी नहीं और पग लागता है! क्योंकि हमें तो सब पग लागते ही दिखे! मुझे लगा कि यह आदमी मुझे पहचानता नहीं; मेरी कथा सुनता नहीं; और सुने तो भी मेरी भाषा जाने नहीं। और ये मुझे क्यों दंडवत् करता है! चार-पांच बार उसने ऐसे किया। मतलब दंडवत् नहीं बल्कि दंडवत् जैसा ही किया; पूरा लंबा हो और फिर खडा हो। इसलिए मैंने मेरे साथ जो उदय नामक लड़का था उनको पूछा कि उदय, ये मुझे पहचानता है? वह लड़का कुछ बोला नहीं। मैंने पूछा कि वह कथा सुनता है? उसने किसीने कहा है कि यह मोरारिबापू है? वह लड़का कुछ बोले ही ना! मुझे लगा कि इस में मेरी ओर से कुछ गड़बड़ी होती है! वह लड़के को मर्यादा लगे कि बापू को ऐसा क्यों कहा जाय? और मेरी जिज्ञासा बढ़े! फिर मैंने विनय किया कि मुझे बुरा नहीं लगेगा, तू सत्य बता कि इस में है क्या? तो उदय कहे, बापू, वह आपको दंडवत् नहीं करता था, इक्सरसाईज़ करता था! जैसे जहां जगह मिले वहां हम आरती उतारते हैं। जहां जगह मिले, हम नमाज अदा करते हैं। वैसे वह लोग जहां जगह मिले वहां समयसर एक्सरसाईज़ करते हैं। फिर मेरी भ्रांति दूर हुई।

मैं सज़दे मैं नहीं था, मुझे धोखा हुआ होगा।

दुष्यंतकुमार की वह प्रसिद्ध गज़ल। वो रेलवे स्टेशन में मज़दूरी करनेवाला था, बौज से उसकी कम्र झुक गई थी वो कहता है, दुष्यंत की बोली में ऐसा भी लगे। तो वंदन शरीर से हो यह बहुत अच्छी वस्तु है। हमारा नरसैया कहता हैं-

सकल लोकमां सहुने वंदे....

लेकिन उससे उंचे दर्जे की वंदना है जो मन से होती है। शायद हमारा शरीर न भी झुके। कोई हमें शरीर से वंदन न करे तो गलतफहमी न करना; उनके मन तक पहुंचने की कोशिश करना। और हम सभी जगह पहुंचे हैं लेकिन मन तक नहीं पहुंच सकते! इसलिए तो गनी साहब कहते हैं-

न धरा सुधी न गगन सुधी, नहीं उन्नति न पतन सुधी।
अहीं आपणे तो जवुं हतुं फकत एकमेकना मन सुधी।
दिवसो जुदाईना जाय छे ए जशे जरूर मिलन सुधी।

गनी साहब की वह प्रसिद्ध रचना। तो मन से वंदन हो। और उससे भी सर्वश्रेष्ठ वंदन है जब किसी की सेवा देखकर हमारी आत्मा झुके। मन चतुर भी होता है। मन स्वार्थी होता है। मन से होते वंदन में होशियारी भी हो सकती है। वह संभव है। लेकिन जिस दिन आत्मा झुकती होगी। गुरु नानकदेव को मर्दाना ने एक दिन पूछा कि गुरुदेव, किसी को प्रणाम करना हो तो किस तरह किया जाय? हे भगवन्! परंपरा में जो प्रणाम की पद्धति है वह आप मुझे बताओ। तब गुरु नानकदेव कहते हैं कि सच्ची वंदना तो वह है जिसमें पगड़ी उतारने की कोई आवश्यकता नहीं; हाथ में कोई चीजवस्तु की आवश्यकता नहीं। और केवल, केवल आत्मा झुक जाय। और साहब! जिस दिन आत्मा झुके उसके साथे आसमां भी झुकता है। इसलिए बहुत वरिष्ठ वंदन है आत्मा का झुकना।

यज्ञ के तीनों लक्षणों तो यह पांचों विशेष व्यक्तियों के जीवन में होगा ही। इसलिए तो जिस स्थान में, जो भावनगर में, जो हमारे मुल्क में और गुजरात में, देश में सभी जगह मानदादा की चेतना घूमती है यह चेतना स्थलि में यह व्यक्तिओं की वंदना हो रही है। यह उसका प्रमाण है कि उनका सेवायज्ञ यह तीनों वस्तुओं से पर है।

हमारी फ़र्ज़ है। हम वंदना कैसे करते हैं? मैं हृदय से कहता हूं, जब किसी की वंदना करते वक्त धनराशि अर्पण होती है तब मुझे बहुत संकोच होता है कि यह सेवा के आगे यह राशि का क्या मूल्य? लेकिन 'पत्रं पुष्पं फलं तोयं।' कुछ लेकर हम वंदना करते हैं। इस न्याय से हमने वंदना की है। मैं हर साल आ सकता हूं। और आ सकता हूं इसका कारण यह है कि यह सभी बुज़ुर्ग लोग मुझे अनुकूलता कर देते हैं कि बापू, आप को जब समय हो तब कार्यक्रम करेंगे। इसलिए मुझे ये लाभ मिलता है। वरना मैं इस लाभ से वंचित रहता। यह मेरा एक स्वार्थ भी है।

नानुभाई, एक मास पहले एक गृहस्थ मुझे मिले। गांधीविचार के गृहस्थ है। लेकिन उन पर इस समय परमात्मा की कृपा है। वो मुझे कहे कि मेरी एक इच्छा है लेकिन आप मेरा नाम ज़ाहिर न करो तो मुझे कहना है। और आप के थ्रू वो इच्छा मुझे पहुंचानी है। मैंने उनको कहा कि भाई, आपकी कोई शुभ इच्छा होगी, आपका कोई शुभ मनोरथ होगा तो मैं कहूंगा। तो वो बोले कि मुझे यह ज़ाहिर नहीं करना। लेकिन उनको यह कार्यक्रम का पता है। अमरिका में रहते थे। गांधीविचार से ओतप्रोत है। अब देश में एक गांव में रहते हैं। प्रभुकृपा से वहां जो कमाये होंगे इसलिए उनको अब कोई मुश्किल नहीं। लेकिन अब उनकी ऐसी इच्छा है कि गांव में रहकर मैं सेवा करूं। और यह शिशुविहार की खुश्बू उनकी घ्राणेन्द्रिय तक पहुंची है। और इसलिए यह नासापुट मुझे कहे कि बापू, मेरी इच्छा है कि शिशुविहार में जो वंदना होती है उसमें मुझे कुछ देना है। अभी जो वंदना होती है उसमें कितनी धनराशि दी जाती है? मैंने कहा कि मुझे पता नहीं। मुझे किसीको पूछना पड़ेगा। हम जो दे वो फिर भूल जाना पड़े। अगर वो याद रहे तो हमने दिया ही नहीं; व्यापार किया है! अब यहीं पूछुं तो भी नाम देना पड़े। वडीलों को पूछुं तो भी नाम देना पड़े। एक साधु पर उन्हें भरोसा रखा है कि नाम न देना। और मैं आज भी नाम नहीं दूंगा। लेकिन मैंने खोज की कि शिशुविहार में हम जो नागरिक सम्मान करते हैं उसमें कितनी धनराशि दी जाती है? तब मुझे पता लगा कि तैंतीस हजार की राशि दी जाती है। मैं वचनबद्ध हूं इसलिए मैं नाम नहीं दूंगा। लेकिन उनका मनोरथ है कि मैं जब तक कर सकूंगा तब तक करूंगा और नहीं कर सकूंगा तब ना बोल दूंगा लेकिन मेरी इच्छा है कि यह राशि इक्यावन हजार की हो जाय ऐसा कर दो। फिर एक बार कहूं कि इस में धनराशि तो केवल एक माध्यम है। बाकी इक्यावन हजार दो कि कितनी भी राशि दो, इन लोगों की सेवा की तुलना में ये आ ही न सके। लेकिन उनकी इच्छा है कि अगली साल से इक्यावन हजार दिया जाय। तैंतीस में कितने मिलाये तो इक्यावन होगा? मेरा गणित कच्चा है। वैसे सब कच्चा है! पक्का करने मथ रहा हूं। अक्सर सब कच्चा है! अठारह हजार रूपया। तो मैं उनको कहूंगा कि बीस हजार के हिसाब से प्रतिवर्ष देना। तो एक लाख होगा न? अन्य रकम आयोजन में खर्च हो। यह व्यवस्था में और अन्य जो हो। इसलिए अगली साल से पुण्यश्लोक मानदादा की चेतना में, छाया में सेवायज्ञ के हमारे यह सभी वडीलो की सेवा की वंदना करने के लिए ऐसा कुछ आप सब करना। इस में आप सब की हां है न? हां, बस। अब मैं उनको बात करूंगा। उनको भी मुझे खोजना पडेगा! जैसे यहां मुझे खोजना पड़ा कि हम कितना देते हैं! ऐसे मुझे उनको खोजना पडेगा।

तो मेरी बहुत खुशी व्यक्त करता हूं। और मैं ट्रस्टीओं को भी बिनती करता हूं कि इस कार्यक्रम में मैं होना ही चाहिए इसकी चिंता मत करना। कभी अन्य किसी को भी बुला सकते हैं। हां, आप ऐसे संकोच में भी मत रहना कि बापू इतना रस लेते हैं तो उनको बुलाना ही पड़े! मैं किसी को बांधता नहीं। इसलिए कभी ऐसा हो तो मुझे न भी बुलाना। स्पष्ट ना कह देना कि बापू, इस साल आप टीम में नहीं है! लेकिन आपकी उदारता है। मैं आ सकता हूं। और मैं आ सकता हूं उसका मुझे बहुत आनंद है। पांचों विशेष व्यक्तिओं को वंदन करते हुए, मानदादा की चेतना को प्रणाम करते हुए, इस सेवायज्ञ के सभी वडीलों को मेरा नमन। आप सभी को प्रणाम। जय सीयाराम।

(शिशुविहार, भावनगर (गुजरात) में 'नागरिक सम्मान समारोह-२०१८' अवसर पर प्रस्तुत वक्तव्यः दिनांक ९-१२-२०१८)

'मानस' का एक भी कांड ऐसा नहीं है जो अग्नि से मुक्त हो। प्रत्येक कांड में मेरे गोस्वामीजी ने अग्निस्थापन किया है। एक अर्थ में तलगाजरडी दृष्टि से देखूं तो 'मानस' का प्रारंभ अग्निबीज से होता है; समापन अग्निबीज में होता है।

●

मेरी समझ में किसी भी प्रकार की परीक्षा, कहीं भी की गई परीक्षा अग्निपरीक्षा ही होती है; रूप भिन्न होते हैं। एक छात्र दसवीं श्रेणी में परीक्षा दे उसको भी लगता है, ये मेरी अग्निकसौटी है। कोई बारहवीं श्रेणी या तो कोई भी श्रेणी की परीक्षा दे या तो जीवन के संघर्ष में आती कसौटियां ये सब अग्निपरीक्षा ही है। और ध्यान दें कि जब तक हम अग्निपरीक्षा नहीं देते तब तक रामराज्य संभव नहीं है। जानकी की अग्निपरीक्षा के बाद रामराज्य हुआ है। जिसको अंतःकरण में रामराज्य प्राप्त करना है उसी को अग्निपरीक्षा देनी ही होगी।

– मोरारिबापू

॥ जय सीयाराम ॥